ISBN: 978-93-83168-61-3

फसल सुरक्षा के नए आयाम

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

ISBN: 978-93-83168-61-3

फसल सुरक्षा के नए आयाम

Hkk—-v-i-&Hkkjrh; —f"k vuqla/kku laLFkku
ubZ fnYyh&110012

मार्च 2021 में प्रकाशित

fun'kd
अशोक कुमार सिंह

lidYiuk
हिन्दी प्रकाशन समिति

laiknu eMy
नज्म अख़्तर शकील
पंकज
दिनेश सिंह
बिश्वजीत पॉल
वी.एस. राणा

iHkkjh] idk'ku ;fuV
जी.पी. राव

lg;kx
बी.एस. रावत

m)j.k% नज्म अख़्तर शकील, पंकज, दिनेश सिंह, बिश्वजीत पॉल, वी.एस. राणा (2021), फसल सुरक्षा के नए आयाम, भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, पृष्ठ 192

मुद्रित प्रतियांः 500

मूल्यः ₹150

ISBN: 978-93-83168-61-3

© 2021 – भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, सर्वाधिकार सुरक्षित

वेबसाइट: www.iari.res.in

प्रकाशकः निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली की ओर से प्रकाशन यूनिट द्वारा प्रकाशित एवं मैसर्स एम.एस. प्रिंटर्स, सी–108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रियल एरिया, फेस–1, नई दिल्ली–110028

आमुख

भारत एक कृषि प्रधान देश है और भारतीय अर्थव्यवस्था बहुत हद तक कृषि और उसके संबंधित क्षेत्रों पर निर्भर करती है। भारत की जनसंख्या का 50% से अधिक हिस्सा कृषि पर आधारित है और कृषि लगभग 17–20% सकल मूल्य वर्धित (ग्रॉस वैल्यू एडेड, GVA) में योगदान करती है। यह देखा गया है कि पिछले पांच दशकों में कृषि उत्पादन के क्षेत्र में व्यापक बढ़ोतरी हुई है। गत वर्ष 2019–20 में कृषि उत्पादन 29.50 करोड़ टन रहा जो कि पिछले पांच वर्षों (2014–15 से 2018–19) की तुलना में 2.58 करोड़ टन अधिक था। कृषि उत्पादन में लगातार वृद्धि, नवीन तकनीकों जैसे अधिक पैदावार वाली फसल किस्में, अच्छी रासायनिक खाद एवं बेहतर कीटनाशकों की उपलब्ध ता के कारण संभव हुई है। भारत की बढ़ती जनसंख्या के साथ खाद्यान्न आवश्यकता भी उसी रूप में बढ़ने की संभावना है और उसके लिए हमें कृषि उत्पादन में भी लगातार वृद्धि करने की दिशा में कार्य करना होगा। चूंकि कृषि के लिए जमीन की कमी होती जा रही है जिसका मुख्य कारण शहरीकरण और व्यावसायीकरण का बढ़ना है। हमारे पास फसलों की उत्पादकता बढ़ाने और मूल्य संवर्धन के अलावा और कोई चारा नहीं है जिससे कि हम कृषि को लाभकारी बना सकें। कृषि उत्पादन को बढ़ाने में बहुत सारी बाधाएं हैं जैसे कि खरपतवार, कीट, बीमारियां, सूत्रकृमि, इत्यादि। यह भी देखा गया है कि रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग के बाद फसल उत्पादन बढ़ा तो है लेकिन सवाल यह है कि क्या यही एकमात्र तरीका है फसल उत्पादन बढ़ाने का? आये दिन अखबारों में कीटनाशकों के प्रयोग के विरुद्ध कुछ न कुछ छपता रहता है कि कैसे ये आपके भोजन को प्रदूषित कर रहा है और जिसके कारण जनसाधारण को भी यह लगने लगा है कि ये कीटनाशक पर्यावरण, स्वास्थ्य एवं जैव–विविधता पर भी बुरा असर डालते हैं। यह तर्क हालांकि पूरी तरह से सच नहीं है। यद्यपि भारत कृषि उत्पादन में विश्व में 12% का योगदान करता है परन्तु जहाँ तक कीटनाशकों के प्रयोग की बात आती है तो इस में भारत का योगदान केवल 50 हजार टन (1%) है जो कि विश्व के दूसरे देशों की तुलना में बहुत कम है, जैसे कि चीन का योगदान 43% है और अमरीका का 10% है। भारत में केवल 20% खेती का क्षेत्र फसल सुरक्षा के अंतर्गत आता है। क्योंकि भारत जैसे देश में बढ़ती जनसंख्या के साथ रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग पूरी तरह से बंद तो नहीं किया जा सकता है, परन्तु उनके प्रयोग को कम कर के वातावरण को प्रदूषित होने से बचाया जा सकता है। साथ ही साथ रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग सही तरीके से लेबल क्लेम के अनुसार करने को बढ़ावा देने के साथ कृषि क्षेत्र में रासायनिक कीटनाशकों के विकल्प की भी आवश्यकता है। हमारे वैज्ञानिक इस दिशा में काम करने में लगे हुए हैं और शोध के द्वारा जैव कीटनाशकों तथा जैवअभिकर्ता (बायोएजेन्ट्स) एवं टिकाऊ कृषि क्रियाओं जैसी तकनीकों से इन दुष्प्रभावों को कम करने का प्रयास जारी है। भारत में जीवों एवं वनस्पतियों का विशाल भंडार है और उनमें निहित गुणों का उपयोग कर के वांछित और व्यावसायिक तकनीक का विकास किया जा सकता है। यह भी स्पष्ट है कि देश के विकास के कारण कृषि के लिए जमीन की

उपलब्द्धता बढ़ाई नहीं जा सकती और उम्मीद है कि आने वाले समय में यह और भी कम हो जाएगी। आज जबकि रासायनिक कीटनाशकों के बारे में अफवाहें फैल रहीं हैं और अभी हाल ही में सरकार द्वारा 27 रासायनिक कीटनाशकों के प्रस्तावित प्रतिबंध के मद्देनजर यह जरूरी हो गया है कि शोधकर्ता फसल सुरक्षा के नए आयामों को आगे ले कर आएं। अतः आज आवश्यकता इस बात की है हमें उन प्रौद्योगिकियों को अपनाना होगा जिनसे विभिन्न फसलों का उत्पादन बढ़े। इसके साथ ही साथ नई–नई तकनीकों का पता लगाना होगा जिससे कि फसल उत्पादकता को नुकसान पहुंचाने वाले कारकों से ज्यादा तत्परता से निपटा जा सके। संस्थान द्वारा विकसित तकनीकों को अगर उनके उपयोगकर्ताओं तक पहुंचाना है तो यह आवश्यक है कि उन तकनीकों और अनुसंधानों को उसी भाषा में प्रचालित करना होगा जिस भाषा में ये अधिक से अधिक लोगों तक पहुँच सके। मुझे विश्वास है कि संस्थान द्वारा प्रकाशित होने जा रही हिन्दी पुस्तिका 'फसल सुरक्षा के नए आयाम' बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगी क्योंकि हमारे देश की बड़ी जनसंख्या आज भी हिंदी भाषा में ही बोलती और समझती है। मुझे विश्वास है कि यह पुस्तिका अपने उद्देश्य में सफल होगी और इसमें बताये गए उपायों और प्रौद्योगिकियों को अपनाकर अधिक से अधिक हितधारक तथा किसान लाभान्वित होंगें।

मैं इस पुस्तिका के प्रकाशन के लिए इससे संबंधित नोडल अधिकारियों, सभी वैज्ञानिक सहयोगियों तथा प्रकाशन यूनिट के प्रयासों की सराहना करना चाहता हूँ जिनकी मेहनत से ये प्रकाशन किसानों की सेवा में उपलब्ध कराया जा रहा है।

दिनांकः 30 मार्च 2021
नई दिल्ली

¼v'kksd dqekj flag½
funs'kd

प्रस्तावना

भारत की दिन–प्रतिदिन बढ़ती जनसंख्या एवं घटती जोत संकेत कर रही है कि भविष्य में खाद्यानों, फलों, सब्जियों तथा दलहनों की उपलब्द्धता आवश्यकता के अनुसार कम होती जाएगी। अब हमें इन बातों का ध्यान रखना होगा तथा नयी तकनीक–आधारित खेती को बढ़ावा देना होगा। अधिकतर किसान प्राकृतिक आपदाओं एवं जैविक कारकों जैसे कीट, पतंगों, रोगों व सूत्रकृमियों से परेशान रहता है। जरुरत है की उक्त परिस्तिथियों में फसलों के उत्पादन हेतु आधुनिक खेती का चयन किया जाये व इनको बढ़ावा दिया जाये। अक्सर यह समझा जाता है कि फसल सुरक्षा सिर्फ रासायनिक कीटनाशक के द्वारा ही किया जा सकता है। यह कुछ हद तक ठीक भी है क्योंकि कीटों का तुरंत नियंत्रण हो जाता है। जहाँ तक बात कीटनाशकों के खपत की है, तो भारत में अन्य देशों जैसे जापान, अमरीका, चीन, यूरोप, की तुलना में बहुत कम है। इन कीटनाशकों का कपास में सबसे अधिक उपयोग होता है, उसके बाद धान और सब्जियों में इनका प्रयोग होता है। इनका उपयोग या तो आवश्यकता से अधिक अथवा अविवेकपूर्ण ढंग से हुआ है जिसके कारण इनका उपयोग न तो समान रूप से और न ही निर्धारित मात्रा में हुआ है। इसके कारण अनेक समस्याएं उभर कर सामने आई हैं जिनमें पर्यावरण प्रदूषण, खाद्यानों, सब्जियों, फलों आदि पर अनचाहे अवशिष्टों की उपस्थिति आदि शामिल हैं। ऐसी परिस्थिति में यह उचित होगा कि फसल सुरक्षा के नए तरीकों का प्रयोग करके कृषि उत्पादन को बढ़ाने की ओर अग्रसर होना होगा। रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग को कम करके बहुत सारे तरीकों को अपनाया जा सकता है जिससे कि वातावरण पर इन रसायनों का दुष्प्रभाव न पड़े, उदाहरण के लिए नैनो फॉर्मूलेशंस, कीटनाशक सूत्रीकरण, कुशल और सुरक्षित वितरण के लिए अच्छी वितरण प्रणाली, उन्नत पादप सुरक्षा के उपकरण, उच्च मूल्य यौगिक, कम खुराक एवं उच्च शक्ति यौगिक इत्यादि। भारत जैसे देश में जहाँ कि जीवों और वनस्पतियों का समृद्ध स्रोत है, इनका प्रयोग करके फसल सुरक्षा का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, निम्बोली का प्रयोग, जैविक खेती, प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग, इत्यादि। यह भी सत्य है कि अभी तक जीवों और वनस्पतियों का फसल सुरक्षा में उपयोगिता पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। इनकी क्षमता का उपयोग फसल सुरक्षा में आज के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण हो जाता है। इस पुस्तक में 20 लेखों द्वारा फसल सुरक्षा के विभिन्न उपायों को दर्शाया गया है। यह पुस्तक इस दिशा में एक प्रयास है जोकि किसान और हितधारक के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। इसके प्रकाशन में सहयोग देने के लिए मैं टीम से जुड़े सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी अधिकारियों, टंकण लिपिकों तथा उन सभी को हार्दिक धन्यवाद देता हूं जिनके सम्मिलित प्रयास से यह प्रकाशन सफलतापूर्वक प्रकाशित होने जा रहा है।

दिनांकः 30 मार्च 2021
नई दिल्ली

¼uTe v[krj 'kdhy½
ç/kku oKkfud] –f"k jlk;u lHkkx

विषय-सूची

Ø-l-	fooj.k	i"B l-
	आमुख	i
	प्रस्तावना	iii
1.	क्या कृषि रसायनों के बिना खेती संभव है?	1
2.	स्वाद, सुगंध–द्रव्य, दवाइयों और फसल सुरक्षा में औषधीय और सुगंधित पौधों एवं सुगंधित तेलों का उपयोग	6
3.	कीटों का जैविक नियंत्रण का महत्व, प्रगति और इसमें आने वाली बाधाए	14
4.	जैविक नियंत्रणः दृष्टिकोण और अनुप्रयोग	21
5.	पीड़क प्रबंधन के लिए पीड़कनाशक सूत्रीकरण	31
6.	कुशल और सुरक्षित कीटनाशक वितरण के लिए वितरण प्रणाली	40
7.	नैनो फार्मूलेशन विकास के लिए उभयरागी बहुलक : भावी अनुसंधान के लिए अवसर	54
8.	उन्नत पादप सुरक्षा के उपकरण	60
9.	पीड़कनाशियों के अवशेष–दशा एवं दिशाएं	73
10.	धान–गेहूं फसल चक्र में जड़–गाँठ सूत्रकृमि रोगः एक गंभीर समस्या	81
11.	फलों में जड़–गांठ रोग एवं उनका प्रबंधन	84
12.	गेहूँ की फसल में मोल्या रोग के लक्षण व उसका प्रबंधन	87
13.	सब्जियों में पादप परजीवी सूत्रकृमि तथा उनका प्रबंधन	90
14.	धान्य फसलों के रोगों की पहचान एवं समेकित प्रबंधन	94
15.	दलहनी फसलों के रोग एवं उनका प्रबंधन	110
16.	तिलहनी फसलों के रोग व उनका प्रबंधन	123
17.	फलों के महत्वपूर्ण रोग एवं उनका समेकित प्रबंधन	130
18.	सब्जियों के रोगों की पहचान एवं उनका प्रबंधन	157
19.	प्रमुख शोभाकारी पौधों के रोग एवं प्रबंधन	173
20.	कीटनाशी सूत्रकृमियों का फसली कीटों के जैविक प्रबंधन में उपयोग	185

क्या कृषि रसायनों के बिना खेती संभव है?

राजेश कुमार, प्रशांत कौशिक, नज्म अख़तर शकील एवम् मधुबन गोपाल
कृषि रसायन संभाग, भा.कृ.अ.प. – भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

प्राचीन काल में जब कृषि रसायन नहीं थे तब खेती बिना रसायनों के ही होती थी। पर आज ऐसा क्यों नहीं हो सकता? यह प्रश्न विचारणीय है। विभिन्न कारणों में एक, और प्रथम तथ्य है हमारी आज की आबादी। एक अनुमान के अनुसार 2050 में विश्व की जनसंख्या लगभग 10 अरब तथा भारत की आबादी करीब 1.66 अरब हो जाएगी [1] । 2019 के आंकड़ो के अनुसार वैश्विक स्तर पर 81.5 करोड़ लोग भुखमरी के शिकार हैं [2] । भारत जनसंख्या की दृष्टि से विश्व में चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। विश्व की 17 प्रतिशत जनसंख्या भारत में है जबकि भारत के पास विश्व की तुलना में क्षेत्रफल के आधार पर केवल लगभग 3 प्रतिशत भूमि ही है। बढ़ती हुई जनसंख्या तथा वैश्विक स्तर पर भुखमरी के शिकार लोगों का पेट भरने के लिए कृषि उत्पादन को सतत रूप से बढ़ाने की और उत्पादित कृषि उत्पादों को सबको उपलब्ध कराने की अत्यंत आवश्यकता है। हमारी आबादी के अलावा उपयोगी जीव–जन्तुओं के लिए भी भोजन उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। खेती द्वारा ही खाद्य सामग्री की उपलब्धता सम्भव है। बढ़ते शहरीकरण तथा व्यावसायीकरण के कारण कम होती कृषि योग्य भूमि के साथ खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करना दुसाध्य है इसलिए खेती में कृषि रसायनों का उपयोग आवश्यक है।

–f"k jlk;uksa dk mi;ksx dk ykHk

जो रसायन कृषि के लिए उपयोगी पाए गए, उन्हें कृषि रसायन कहा जाता है। कृषि रसायन विभिन्न प्रकार के हैं। ये पौध सरंक्षण (बीज, नर्सरी पौध, फसलों के विकास के लिए जरूरी हैं) के अलावा उपज बढ़ाने (उर्वरक तथा आवश्यक तत्व), मछली, मुर्गी, गाय तथा सूअर पालन, मृदा को सुधारने, पानी की उपयोग क्षमता बढ़ाने तथा पौधों को प्रतिरक्षा शक्ति प्रदान करने में भी काम आते हैं। कृषि रसायनों के द्वारा फसलों की रोगों, कीटों और खरपतवार से रक्षा होती है, इस प्रकार एक अच्छी फसल प्राप्त होती है जो सबके लिए अच्छा एवम् भरपूर भोजन सुनिश्चित करती हैं। उपभोक्ताओं को ताजा, पौष्टिक, उच्च गुणवत्ता वाले खाने की उम्मीद होती है जो रोग और कीटों से मुक्त हो। यह कोई आसान कार्य नहीं है, क्योंकि पूरे विश्व में फसलों को लगभग 80,000 प्रकार के रोगों को फैलाने वाले सूक्ष्म जीव, 30,000 प्रकार के खरपतवार, 3,000 प्रकार के सूत्रकृमि और 10,000 प्रकार के कीटों का सामना करना पड़ता है। नये सूक्ष्मजीव एवं कीड़े–मकोड़े भी आते जा रहे हैं। इन जीवों में स्वयं को समय के अनुसार परिवर्तित करने की अपार क्षमता होती है। फसलों में नुकसान पहुँचाने वाले रोग, कीट और खरपतवार, फसलों के स्वास्थ्य, पारिस्थितिक तंत्र और समाज को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। फसलों की पीड़कों से रक्षा करने के लिए नए कृषि रसायनों और उनसे संबंधित प्रौद्योगिकियों में व्यापक अनुसंधान करने की अत्यंत आवश्यकता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। विगत 60 वर्षों में कृषि उत्पादन में भारी वृद्धि हुई है जिसमें मुख्य अवयव उन्नत बीज, सिंचाई, उर्वरक, कृषि रसायन तथा मशीन हैं। इन सबमें कृषि रसायनों का विशेष योगदान है। कृषि रसायन नुकसानदायक कारकों से फसल की रक्षा करते हैं, जिससे अच्छी फसल सुनिश्चित हो सकती है। यहां तक कि यदि फसल संरक्षण उत्पादों का उपयोग नहीं करते हैं, तो बीमारियों और कीटों के कारण फसल का औसतन 20 से 40% तक का नुकसान होता है। ये नुकसान प्रक्षेत्र में, परिवहन या कटाई उपरांत भंडारण के दौरान हो सकता है।

कृषि रसायनों के उपयोग से होने वाले लाभों जैसे अधिक उपज, पादप सुरक्षा, पशुधन स्वास्थ्य सुरक्षा आदि के बारे में हम सभी जानते है। कृषि रसायनों के उपयोग के प्राथमिक एवं प्रत्यक्ष लाभ फसलों की उच्च पैदावार तथा बेहतर गुणवत्ता है जोकि पौधों को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़ों, बीमारियों, खरपतवार आदि को कृषि रसायनों द्वारा नष्ट करने के परिणामस्वरूप प्राप्त होता है। तात्कालिक लाभों के परिणामस्वरूप होने वाली अतिरिक्त आय अन्नदाता किसानों का जीवन बेहतर बनाने में सहायक होती है जैसे उनके बच्चों की शिक्षा, चिकित्सा देखभाल आदि। इस प्रकार कृषि रसायनों का उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में भी योगदान करता है।

Qly mRiknu] mRikndrk ,oe x|.koÙkk

भारत में खाद्यान्न उत्पादन लगभग 5 करोड़ टन (1950) से बढ़कर लगभग 27.5 करोड़ टन (2017) हो गया है (चित्र 1)। खाद्यान्न उत्पादकता भी 1950 में 522 कि.ग्रा. प्रति है. थी जो कि 2015–16 में बढकर 2056 कि.ग्रा. प्रति है. हो गई (चित्र 2)। इसी प्रकार बागवानी एवं वाणिज्यिक फसलों का उत्पादन तथा उनकी उत्पादकता में भी वृद्धि हुई है। कृषि रसायनों की फसल उत्पादन एवं फसल उत्पादकता की बढोत्तरी में प्रमुख भूमिका रही है। इसके साथ–साथ कृषि रसायनों के उपयोग से खरपतवार, पौधों को होने वाली बीमारियों तथा कीटों के नियंत्रण से खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता भी बेहतर हुई है।

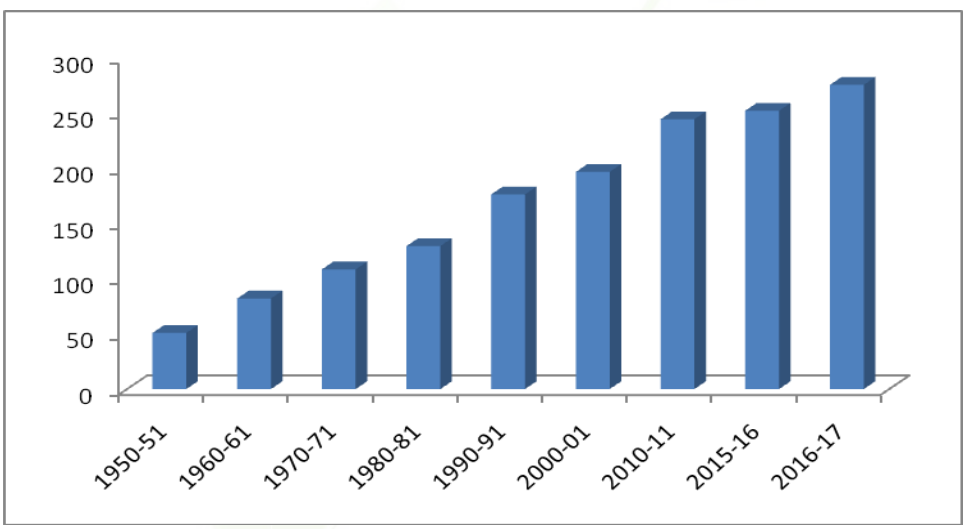

चित्र 1: भारत का कुल खाद्यान उत्पादन (मिलियन टन में)

स्रोतः एग्रीकल्चरल स्टेटिस्टिक्स एट ए ग्लांस 2016, भारत सरकार

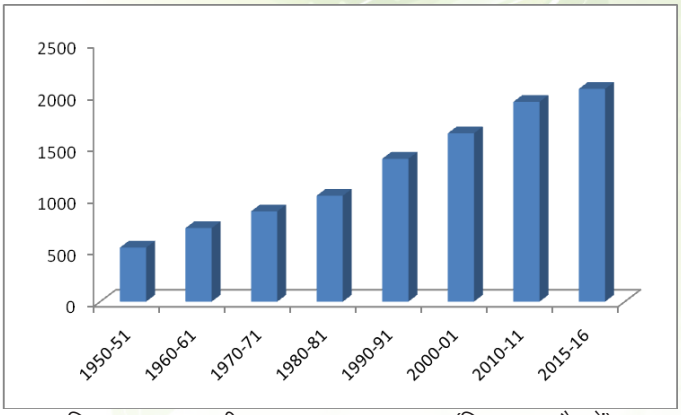

चित्र 2: भारत की खाद्यान उत्पादकता (कि. ग्रा./है. में)

स्रोतः एग्रीकल्चरल स्टेटिस्टिक्स एट ए ग्लांस 2016, भारत सरकार

dVkbl mijkr Hk.Mkj.k ,oe çc/ku

कृषि रसायनों का फसल के कटाई उपरांत भण्डारण में बीमारियों एवं कीटों द्वारा होने वाले नुकसान को रोकने में भी महत्वपूर्ण योगदान रहता है। यदि रोगजनक सूक्ष्मजीव, कीट तथा उनके अंडे, बच्चे न रहे तो भण्डारण के दौरान खाद्य सामग्री शीघ्र खराब नहीं होगी।

cht lj{k.k

कृषि रसायनों के द्वारा बीज को उपचारित करने से बीज सरंक्षण में मदद होती है जो आगामी फसल उत्पादन के लिए उपयोगी होता है। फफूंदनाशी रसायन रोगजनक फफूंदों को और रोगजनक जीवाणुओं को नियन्त्रित करता है।

ty mi;kx {kerk

हाईड्रोजेल मृदा की गुणवत्ता, बीज अंकुरण तथा जड़ों के विकास में मदद करता है। इसके उपयोग से बारानी खेती अथवा सीमित जल की उपलब्धता में भी अच्छी पैदावार ली जा सकती है।

i'kq/ku LokLF; ,o çc/ku

कृषि रसायनों का पशुधन स्वास्थ्य सुरक्षा एवं प्रबंधन में महत्वपूर्ण योगदान है। कृषि रसायन पशुओं को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों आदि को भी नियन्त्रित करते हैं। कृषि रसायनों के उपयोग से पशुओं के लिए उच्च गुणवत्ता वाले चारे का उत्पादन होता है। गाय या दुधारू पशुओं के स्वास्थ्य के लिए परजीवी नियंत्रण करने वाले रसायनों का उपयोग जरूरी है।

ykd LokLF;

कृषि रसायन मलेरिया आदि बीमारियों को फैलाने वाले मच्छर आदि जीवों को भी नियन्त्रित करके लोगों के स्वास्थ्य सुरक्षा के लिए भी लाभकारी है। प्लेग में चूहों का नियंत्रण अनिवार्य है। क्या यह बिना रसायनों के उपयोग से समय पर हो पायेगा?

—f"k jlk;uk d vfoodi.k ç;kx dk dkj.k vkj mul gku okyh leL;k,

किसानों के द्वारा बिना समुचित जानकारी के कृषि रसायनों के अविवेकपूर्ण या निर्धारित मात्रा से अधिक प्रयोग करने से पर्यावरण और जन–स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव होता है। कृषि उत्पादों में भी

कृषि रसायनों के अवशेषों के पाए जाने की सम्भावना उत्पन्न हो जाती है जिससे अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर भी बुरा असर पड़ता है। कृषि रसायनों के अविवेकपूर्ण या निर्धारित मात्रा से अधिक प्रयोग करने से पौधों में बीमारी पैदा करने वाले सूक्ष्मजीवों, कीटों, खरपतवारों आदि में कृषि रसायनों के लिए प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न हो जाती है और परिणामतः कृषि रसायनों की प्रभावकारिता भी कम हो जाती है। कृषि रसायनों के अनुचित उपयोग से मित्र–कीटों तथा मृदा–स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल असर पड़ता है।

–f"k jlk;uksa ds fcuk [ksrh

जैविक खेती के द्वारा विश्व तथा भारत की बढती हुई जनसंख्या के लिए उच्च गुणवत्ता वाली फसलों का उत्पादन अत्यंत चुनौतीपूर्ण है। जैसे कि 362 प्रकाशित जैविक खेती तथा पारंपरिक खेती की पैदावार के तुलनात्मक विश्लेषण में यह पाया गया कि पारंपरिक खेती की पैदावार के तुलना में जैविक खेती के द्वारा होने वाली पैदावार लगभग औसतन 20 प्रतिशत कम [3–4] होती है। भारत में भा. कृ. अनु. प.–राष्ट्रीय समेकित नाशीजीव प्रबंधन अनुसंधान केंद्र के शोध कार्य ने सिद्ध किया है कि बासमती चावलों की खेती में कृषि रसायनों के उपयोग के बिना पैदावार में किसान को बहुत नुकसान होता है। अरोरा आदि के शोधपत्र [5] से यह भी परिलक्षित हुआ कि बासमती चावल की खेती में लगातार तीन साल तक उपयोग किये गए कृषि रसायनों के अवशेष चावल में नहीं पाए गए। शोध से यह भी पता चला कि समेकित नाशीजीव प्रबंधन से उत्पादित फसल खाने के योग्य थी क्योंकि पीड़कनाशकों के अवशेष या तो बिल्कुल ही नहीं थे या अधिकतम अवशेष सीमा (एमआरएल) के नीचे थे।

जैसे–जैसे आबादी बढ़ रही है और अधिक खाद्य सामग्री की जरूरत है। पौधों में बीमारी पैदा करने वाले सूक्ष्मजीवों, कीटों, खरपतवारों आदि से फसलों का नुकसान होने पर बहुत विषम परिस्थितियां उत्पन्न हो जाएंगी। यदि 20–25 प्रतिशत पैदावार कम हो तो पृथ्वी पर जीवन के लिए आवश्यक भोज्य पदार्थ कम हो जायेगा।

पौधों के उचित विकास के लिए सही मात्रा में उर्वरक (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश) तथा सूक्ष्म पोषक तत्व (बोरोन, कॉपर, आयरन, जिंक, मैंगनीज, क्लोरीन, मॉलिब्डेनम) चाहिए। इतने वर्षों में खेती के दौरान मृदा में विद्यमान कुछ जरुरी तत्वों का दोहन भी हो गया है। नाइट्रोजन के लिए नीम लेपित यूरिया देने पर यह मुख्यतः धीमी गति से नाइट्रेट में बदलकर ही पौधों को प्राप्त हो जायेगा। जैविक खाद में नाइट्रोजन की मात्रा यूरिया की तुलना में बहुत कम होती है तथा उसको भी अमोनियम या नाइट्रेट के रूप में परिवर्तित होने में काफी समय लगता है। तुलना करने के लिए यूरिया में लगभग 46 प्रतिशत नाइट्रोजन होता है लेकिन जैविक खाद में लगभग 1 प्रतिशत होता है। अगर किसी फसल के लिए 100 कि.ग्रा. प्रति है. यूरिया की जरुरत है तो उतनी नाइट्रोजन पौधों को देने के लिए 4600 कि.ग्रा. प्रति है. जैविक खाद की जरुरत पड़ेगी। इसी प्रकार फॉस्फोरस, पोटाश आदि तत्वों की उपलब्धता भी कम होती है। जैविक खाद की प्रति है. 'टनों' में आवश्यकता होती है जबकि रासायनिक खाद की जरुरत प्रति है. 'कि.ग्रा.' में है।

बहुत अधिक मात्रा में आवश्यकता होने के कारण जैविक खेती के लिए जरूरी प्राकृतिक पदार्थ को उपलब्ध कराना तथा उनका भण्डारण अत्यधिक कठिन है। जैसे ट्राईकोग्रामा कार्ड आदि की सही समय पर उपलब्धता और उनकी उचित गुणवत्ता के बिना किसान की बहुत ज्यादा हानि हो सकती

है। भारतीय किसान मुख्यतः गरीब है और फसल खराब होने का जोखिम नहीं उठा सकता है। कृषि रसायनों की मात्रा कम लगती है और वह आसानी से उपलब्ध होते हैं और किसान को उसके परिणाम दिखते भी है और जल्दी प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए संश्लेषित कीटनाशी (सिंथेटिक पाईरेथ्रोइड) में कीट को तुरंत पक्षाघात करके मारने की क्षमता होती है। नये कीटनाशी प्रयोग के दर पर, मनुष्य को नुकसान भी नहीं पहुंचाते है। नीम की खली या बीज से बने जैविक उत्पाद कीट नियंत्रण में धीरे धीरे असर करते है जबकि संश्लेषित कृषि रसायन के उपयोग से कीट, बीमारी आदि की रोकथाम जल्दी हो जाती है। व्यापक संक्रमण की स्थिति में तो बीमारी पैदा करने वाले सूक्ष्मजीवों, कीटों, खरपतवारों आदि को तुरंत नियंत्रित करके फसलों की हानि को निम्न स्तर पर लाना जरूरी होता है।

जैविक खेती के लिए जरूरी प्राकृतिक पदार्थ जैसे जैविक खाद, जैविक रसायन की बहुत कम या अनुपलब्धता, उनकी गुणवत्ता नियंत्रण, सक्रिय घटकों की स्थिरता एवम् परिवर्तनशीलता आदि वे मुख्य कारण हैं जो इसको किसानों, खास तौर पर गरीब किसानों, द्वारा अपनाने में बाधक हैं।

fu"d"kl

जैविक और पारंपरिक कृषि के लाभों के संतुलन में विचार करने के लिए कई कारक हैं और हमें इनका व्यवस्थित रूप से मूल्यांकन करना चाहिए। कम कीमत पर अधिक भोजन का उत्पादन करने, किसानों के लिए आजीविका सुनिश्चित करने और पर्यावरणीय सुरक्षा के लिए विभिन्न प्रबंधन विकल्पों के लागत और लाभ को ध्यान में रखते हुए स्थायी खाद्य सुरक्षा प्राप्त करने के लिए हमें जरुरत के अनुसार जैविक, पारंपरिक और संभवतः एकीकृत तकनीक की अलग–अलग आवश्यकता होगी। एकीकृत फसल प्रबन्धन में कृषि वानिकी, मधुमक्खी, मछली, मुर्गी–बतख पालन के अलावा गाय–बैल, सूअर आदि की स्वास्थ्य रक्षा भी अनिवार्य है। एकीकृत फसल प्रबन्धन के एक अंग समेकित नाशीजीव प्रबन्धन में कृषि रसायनों (पीड़कनाशी) का प्रयोग कम मात्रा में होता है परन्तु पूर्णतया मना नहीं है। यह विचार तर्क और वैज्ञानिक दृष्टि से उचित है।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर एकीकृत फसल प्रबंधन – समेकित नाशीजीव प्रबन्धन के तहत कृषि रसायनों के समुचित एवं विवेकपूर्ण उपयोग करते हुए अच्छी, उच्च गुणवत्ता वाली फसलों का जन स्वास्थ्य तथा पर्यावरण को सुरक्षित रखते हुए बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए अधिक उत्पादन किया जा सकता है। संक्षेप में, कृषि रसायनों का उपयोग किए बिना एक पर्याप्त, सुरक्षित भोजन की आपूर्ति की गारंटी नहीं दी जा सकती है।

lanHkZ

[1] https://economictimes-indiatimes-com/news/politics&and&nation/indias&population&to&surpass&that&of&chinas&around&2024&un/articleshow/59257232-cms

[2] http://www-fao-org/news/story/en/item/1037253/icode/

[3] https://www-nature-com/articles/nature11069

[4] https://doi-org/10-1016/j-agsy-2011-12-004

[5] https://link-springer-com/article/10-1007%2Fs10661&014&4042&9

स्वाद, सुगंध-द्रव्य, दवाइयों और फसल सुरक्षा में औषधीय और सुगंधित पौधों एवं सुगंधित तेलों का उपयोग

वीरेंद्र सिंह राणा[1], नज्म अख़तर शकील[1] और पंकज[2]
[1]कृषि रसायन संभाग, [2]सूत्रकृमिविज्ञान संभाग
भा.कृ.अ.प. – भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110012

प्राचीनकाल से कृषि क्षेत्र हमेशा फसलों का उत्पादन करता रहा है जो खाद्य और औषधीय उत्पादों के लिए कच्चे माल के रूप में उपयोग किया जाता है। कृषि फसलों के बीच, औषधीय और सुगंधित पौधों का चिकित्सीय, कॉस्मेटिक, स्वाद, सुगंध रसायन और अन्य उत्पादों में विशेष उपयोग किया जाता है। औषधीय और सुगंधित पौधों से प्राप्त कई उत्पाद जैसे कार्बोहाइड्रेट, वसा और तेल, रंगीन रसायन, प्राकृतिक रंग, ओलेरोसिन, वनस्पति आधारित कीटनाशक रसायन/दवा रसायन और न्यूट्रास्यूटिकल, हम सभी लगातार विभिन्न रूप में उपयोग करते हैं। इन उत्पादों में, सुगंधित तेल, एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में औषधीय और सुगंधित पौधों में पाया जाता है। इन तेलों का उपयोग अरोमाथेरेपी सहित व्यापक रूप से स्वास्थ्य–देखभाल के अलावा कॉस्मेटिक, सुगंध और प्रसाधन उत्पादों में उपयोग किया जाता है। भारत में 18,000 देशी पौधों की प्रजातियों में से, 1500 प्रजातियों में सुगंधित पौधे हैं, लेकिन केवल लगभग 65 सुगंधित पौधों की ही खेती की जाती है क्योंकि इनकी वैश्विक बाजार में लगातार मांग बढ़ रही है। यह अनुमान लगाया गया है कि सुगंधित पौधों की खेती के लिए 20,000 हैक्टर से अधिक क्षेत्र कवर है और यह लगभग 1500 टन सुगंधित तेल का प्रति वर्ष उत्पादन कर रहा है। सुगंधित पौधों की औसत उत्पादकता 75 किग्रा प्रति हैक्टर पायी गयी है। सुगंधित पौधों के विभिन्न भागों जैसे पत्तियों, फूलों, कलियों, फलों, छाल, टहनियों, लकड़ी, पूरे पौधे, जड़ आदि से प्राप्त सुगंधित तैलीय तरल पदार्थ होते हैं, सुगंधित तेलों का उपयोग मुख्य रूप से खाद्य तथा दवाई के उद्योगों में किया जाता है। खाद्य–पदार्थों में इनका उपयोग स्वाद के लिए, कॉस्मेटिक उद्योगों में सुगंध के लिए और दवा उद्योगों में स्वाद या सुगंध के लिए, दवा के अप्रिय–स्वाद को स्वादिस्ट बनाने, धूप, अगरवत्ती और घरेलू सफाई के उत्पादों को सुगंधित करने के लिए उपयोग किया जाता है। सुगंधित तेल एक प्रकार से कम मात्रा के उच्च मूल्य उत्पादों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो टिकाऊ और वैकल्पिक कृषि आधारित आजीविका उत्पन्न करने के लिए अत्यधिक उपयोगी हो सकते हैं। सुगंधित तेलों को व्यापक रूप से अरोमाथेरेपी में इस्तेमाल किया जाता है। इसके अतिरिक्त दर्द से राहत, इन तेलों का उपयोग त्वचा रोग और रोगाणुरोधी और कीटनाशक एजेंटों के रूप में भी होता है। सुगंधित तेलों को आम तौर पर आसवन विधि द्वारा निकाला जाता है लेकिन अभिव्यक्ति, विलायक निष्कर्षण और अपशिष्ट जैसे अन्य तरीकों का भी उपयोग किया जाता है। सुगंधित तेलों का उत्पादन करने के लिए मुख्य आवश्यकताएं जैसे, सही पौध सामग्री, उपयुक्त मिट्टी, सिंचाई, फसल का अच्छा रख–रखाव और उच्च कोटि के आसवन उपकरण हैं। सुगंधित पौधों की खेती और प्रसंस्करण में लगभग 7–10 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर का अनुमान है। इन तेलों का दुनिया की खुशबू और स्वाद उद्योग में लगभग 17 प्रतिशत योगदान है,

जिनमें से 55–60 प्रतिशत का उपयोग खाद्य उद्योग में, स्वादों के रूप में किया जाता है, कॉस्मेटिक उद्योग में सुगंध के लिए 15–21 प्रतिशत, कच्चा सामग्री के रूप में 10–20 प्रतिशत तथा शुद्ध यौगिकों और दवा की तैयारी में सक्रिय पदार्थों के रूप में 5–10 प्रतिशत उपयोग होता है। कुछ महत्वपूर्ण सुगंधित तेल उपज देने वाली पौधों की प्रजातियाँ, उनके प्रमुख रासायनिक यौगिक और उपयोग के व्यापक क्षेत्र नीचे दिए गए हैं:

l|xf/kr r|yk d| çe|[k okuLifrd l|kr

okuLifrd l|kr	çe|[k Hkkx	;kfxd	mi;kx
ट्रेकिस्पर्मम अम्मी	बीज	थाइमोल	स्वाद भोजन, शीतल पेय, कन्फेक्शनरी और दवा
पिंपिनेला अनीसुम	फल	एनेथोल, मिथाइल चाविकल	फ्लेवरिंग सॉफ्ट ड्रिंक, कन्फेक्शनरी और फार्मास्यूटिकल्स
पिंपिनेला एनिसम	फल	एनेथोल, मिथाइल चाविकल	फ्लेवरिंग सॉफ्ट ड्रिंक, कन्फेक्शनरी और फार्मास्यूटिकल्स
ऑसीमम बेसिलिकम	पत्तियां	मिथाइल चाविकल, मिथाइल सिन्नामेट, युजेनॉल	दवा और सुगंध रसायन
ओसीमम कनुम	पत्तियां	लिनलोल, कैम्फर	दवा और सुगंध रसायन
ओसीमम अमेरिकानुम	पत्तियां	मिथाइल चाविकल, सिट्रल, लिनलोल	दवा और सुगंध रसायन
ओसीमम किलिमानश्चारिकम	पत्तियां	कैम्फर	दवा और सुगंध रसायन
ओसीमम तेनुफॉर्म	पत्तियां	युजेनॉल, मिथाइल चाविकल, मिथाइल सिन्नामेट, लिनलोल	दवा और सुगंध रसायन
साइट्रस साइनेंसिस	फल का पील्स	लिमोनीन	सुगंध और स्वाद
साइट्रस बर्गामिया	फल का पील्स	लिनालयल एसीटेट, लिनलोल, लिमोनीन	स्वाद
करम कर्वी	बीज	कार्वोन, लिमोनीन	स्वाद
इलेट्टारिअ कर्दममुम	बीज	1,8–सिनेओल, टेरपिनेऑल, लिमोनीन, साइमीन	स्वाद
सिनेमन वेरम	पत्तियां	युजेनॉल, आयसो–युजेनॉल मिथाइल युजेनॉल	स्वाद और फार्मास्यूटिकल्स
सीडरस देओदारा	लकड़ी	सेडरॉल, सेड्रिल एसीटेट	सुगंध
सिंबोपोगोन विंटरियनस	पत्तियां	सिट्रोनेल्लाल, सिट्रोनेल्लोल, जेरानिओल, जेरयल एसीटेट	सुगंध, सौंदर्य प्रसाधन और स्वाद
सिंबोपोगोन नारडस	पत्तियां	जेरानिओल, जेरयल एसीटेट	सुगंध, सौंदर्य प्रसाधन और स्वाद

माइचीलिया चम्पाका	फूल	1,8–सिनेओल, आयसो– युजेनॉल	सुगंध और सौंदर्य प्रसाधन
सैल्विया स्क्लारी	एरियल पार्ट्स	लिनलोल, निरोल, जेरानिओल	स्वाद
कोरिएंड्रम सटिवम	एरियल पार्ट्स	लिनलोल, पीनेने, फेललैंडरेन	स्वाद
आर्टेमिसिया पेलेंस	फ्लॉवरिंग टॉप्स	दवानोन, फेंचयल अल्कोहल, दवानोफुरन	सुगंध और स्वाद
युकलिप्टुस सिट्रियोडोरा	पत्तियां	सिट्रोनेल्लाल, सिट्रोनेल्लोल, 1,8–सिनेओल	निस्संक्रामक और सौंदर्य प्रसाधन
युकलिप्टुस ग्लोब्युलस	पत्तियां	1,8–सिनेओल, कार्योपिलन	दवा
पैलार्गोनियम ग्रावेओलेन्स	पत्तियां	जेरानिओल, सिट्रोनेल्लोल, लिनलोल	सुगंध
जिंगिबर ऑफिसिनले	जड़ें	जिनगीबेरेने, जिंगरोन, फरनेसेन	स्वाद और फार्मास्यूटिकल्स
मेंथा आरवेंसिस	पत्तियां	मेंथोल, मेन्थोन	स्वाद और फार्मास्यूटिकल्स
जैस्मैनम ऑफिसिनले	फूल	बेंजाइल एसीटेट, लिनायल एसीटेट, जस्मोन, लिनलोल	सुगंध और स्वाद
लावंडुला ऑफिशनलिस	फूल	लिनलोल, लिनायल एसीटेट,	सुगंध और स्वाद
सिंबोपोगोन फ्लेक्सस	पत्तियां	सिट्रल, जेरानिओल, लिनलोल	सुगंध और स्वाद
सिंबोपोगोन मार्टिनी	फ्लॉवरिंग टॉप्स और पत्तियां	जेरानिओल, जेरयल एसीटेट	सुगंध और स्वाद
पोगोस्टेमोन कैबलिन	पत्तियां	पचौलोल	सुगंध, स्वाद और सौंदर्य प्रसाधन
मेंथा पिपरेटा	पत्तियां	मेंथोल	स्वाद और फार्मास्यूटिकल्स
रोजा दमासेना	फूल	सिट्रोनेल्लोल, जेरानिओल, नेरोल, लिनलोल	सुगंध, स्वाद और सौंदर्य प्रसाधन
रोसमारिनस ऑफिसिनैलिस	पत्तियां	पीनेन, सिनेओल, लिनलोल	सुगंध और स्वाद
सैंटेलम एल्बम	हार्ट लकड़ी	सैंतालोल, सैंतालेन, फरनेसेन	सुगंध
पॉलिनेथेस ट्यूबरोसा	फूल	जेरानिओल, नेरोल, फर्नेसोल	सुगंध, और सौंदर्य प्रसाधन
वेटिवरिया जिजानोइडस	जड़ें	वेटिवेरोल, वेटिनोने, उदेशमोल	स्वाद और फार्मास्यूटिकल्स

l|xf/kr ik/kk vkj mudk l|xf/kr r|yk dh miyC/krk

सुगंधित तेलों को पौधों के विभिन्न भागों से प्राप्त किया जाता है, जैसे कि जंगलों में प्राकृतिक रूप से उगने वाले सुगंधित पौधों के पूरे पौधे से, पत्ते से, फूल, जड़, छाल आदि से। हालांकि आज आर्थिक–दृष्टि से उपयोगी कई सुगंधित पौधों की, सुगंधित तेलों के उत्पादन के लिए व्यावसायिक रूप से खेती की जाती है। वैश्विक स्तर पर लगभग 300 आवश्यक तेल उपलब्ध हैं, जिनमें से 50% पौधों की खेती की जाती है बाकि जंगल से लायी जाती है। इनमें से, 110 तेलों की खपत (95%) खुशबू और स्वाद उद्योग में की जाती है। मात्रा और कम कीमत के संदर्भ में, 10 प्रमुख तेल, 80% व्यापार का करते हैं जबकि 150 छोटे तेल (कम मात्रा और उच्च मूल्य) कुल वैश्विक व्यापार का लगभग 20% हैं।

पौधों के विभिन्न भागों में मौजूद तेलों की मात्रा और उनकी रासायनिक संरचना कई कारकों पर निर्भर करती है। कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं जैसे कि खेती की जाने वाली फसल के प्रकार, साइट चयन (भूमि क्षेत्र, स्थान, जलवायु, स्थलाकृति, मिट्टी के प्रकार और जल निकासी, खरपतवार, जल की उपलब्धता), फसल स्थापना और प्रबंधन, सुधार, रोपण, खरपतवार, कीट एवं रोग नियंत्रण, सिंचाई, फसल (फसल का समय, फसल विधि, फसल की पैदावार), कटाई के बाद का प्रबंधन (परिवहन, कटाई, सुखाने और भंडारण का थोक माल), प्रसंस्करण (आसवन और शुद्धिकरण के तरीके), पैकेजिंग और भंडारण, वित्तीय विश्लेषण और बाजार को आवश्यक तेलों के उत्पादन और प्रसंस्करण करते समय बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि इस प्रकार के तेल अति संवेदनशील और अस्थिर होते हैं। अब तक 68 से अधिक सुगंधित तेल, भारतीय बाजार में व्यावसायिक रूप से उपलब्ध हैं और 47 सुगंधित यौगिकों के अलावा स्वाद, सुगंध, इत्र और चिकित्सीय उद्देश्यों के लिए उपयोग किए जाते हैं। कुछ सुगंधित तेलों के महत्वपूर्ण स्रोत उदहारण के लिए नीचे दिए गए हैं

0;kolkf;d :i ls dN egRoi.k lxf/kr ry mit nu okyh çtkfr;k

eFkk vkofU l l ,y- (कुलः *लामियासी*) एक जड़ी बूटी है जिसे आमतौर पर पुदीना के रूप में जाना जाता है। यह तेजी से बढ़ रही जड़ी बूटी है, एशिया और अन्य देशों में इसकी खेती की जाती है। पुदीने की पत्तियों का उपयोग अक्सर पारंपरिक चिकित्सा में किया जाता है और स्वाद के लिए स्थानीय उत्पादों में किया जाता है। पत्ती का उपयोग मतली, ब्रोंकाइटिस के उपचार के लिए और कार्मिनेटिव और उत्तेजक के रूप में किया जाता है। पुदीना तेल मेन्थॉल से भरपूर तथा अन्य रासायनिक यौगिकों का एक जटिल मिश्रण है। भारत पुदीना तेल और मेन्थॉल का सबसे बड़ा उत्पादक है। इसका व्यावसायिक उपयोग औषधीय उद्देश्य और पुदीने के तेल के लिए किया जाता है, जिसका उपयोग खाद्य, दवा, कॉस्मेटिक और इत्र उत्पादों में किया जाता है।

flckikxku foVfjvu l ,y- jMy (कुलः *पोएसी*), जिसे आमतौर पर सिट्रोनेला के रूप में जाना जाता है, एक बारहमासी सुगंधित घास है, जिसका उपयोग सिट्रोनेला तेल के उत्पादन के लिए किया जाता है। सिट्रोनेला की खेती असम, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और अन्य राज्यों में की जाती है। तेल के मुख्य रासायनिक घटक साइट्रोनल, जीरनियल और साइट्रोनल हैं। तेल भी बड़े पैमाने पर सुगंध रसायन जैसे सिट्रोनेलोल और सिट्रोनेलल निकालने के लिए उपयोग किया जाता है। सिट्रोनेला तेल का उपयोग साबुन, अगरबत्ती, मच्छर भगाने वाली क्रीम और डियोड्रेंट में व्यापक रूप से किया जाता है ताकि उनकी गंध और इत्र उत्पादों में सुधार हो सके।

flEckikxu ¶yDlvkll (कुलः *पोएसी*), एक सुगंधित घास है जिसे आमतौर पर लेमनग्रास के रूप में जाना जाता है। इसकी पत्तियां लेमनग्रास तेल का उत्पादन करती हैं और साइट्रल का एक मुख्य स्रोत हैं, जो तेल के नींबू–प्रकार की सुगंध के लिए जिम्मेदार हैं। सी. फ्लेक्सोसस और एक संकर (CPK-25) विकसित विभिन्न वाणिज्यिक कृषक (OD-19, प्रगति, RRL-16 और NLG–84) लेमनग्रास तेल और साइट्रल के समृद्ध स्रोत हैं। लेमनग्रास ऑयल में सिट्रल मुख्य रासायनिक यौगिक है। यह बताया गया है कि तेल में साइट्रल सामग्री मौसम, मिट्टी के प्रकार और फसल के समय, सिंचाई, सूखा तनाव और यहां तक कि एक ही प्रजाति की प्राकृतिक आबादी के बीच भिन्न होती है।

ftftcj t#ecV ,y- fLeFk (कुलः *जिंजीबरेसी*), एक प्रकंद सुगंधित जड़ी बूटी है, जो जंगली और दक्षिण पूर्व एशिया में पाई जाती है। इसका प्रकंद खांसी, सर्दी, पेट दर्द, कान की सूजन, टॉन्सिलिटिस, पेट का दर्द, दस्त, पेट से कीड़े हटाने, कुष्ठ रोग और त्वचा रोगों के उपचार के लिए उपयोग किया जाता है। राइजोम का उपयोग पारंपरिक दवाओं में सूजन, भूख न लगना, गले में खराश और कृमि संक्रमण के उपचार के लिए किया जाता है। इसका प्रकंद तेल, जीरुम्बोन में समृद्ध है। जेरुम्बोन, तेल के प्रमुख यौगिकों में से एक है और इसमें एंटीकैंसर और एंटिफंगल गतिविधियाँ हैं।

flEckikxu ekfVuh (रोक्स्ब.) (वाट. वर. मोतिया बुर्क), जिसे आमतौर पर पामारोसा या रोजा घास के रूप में जाना जाता है, एक बारहमासी सुगंधित घास है, जो भारत में आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश और गुजरात में व्यावसायिक रूप से खेती की जाती है। *सिम्बोपोगुन मार्टिनी* (वर. मोतिया) की पत्तियों और पुष्पक्रम से प्राप्त आवश्यक तेल को आमतौर पर व्यापार में पामारोसा तेल के रूप में भी जाना जाता है। जेरानिओल और जेरयल एसीटेट तेल में प्रमुख यौगिक हैं। पामारोसा तेल व्यापक रूप से इत्र, साबुन, सौंदर्य प्रसाधन, शौचालय और तंबाकू उत्पादों में उपयोग किया जाता है। इस तेल में शक्तिशाली एंटीसेप्टिक, मच्छर से बचाने वाली क्रीम और दर्द निवारक गुण पाये जाते है। जरमनोल और जेरयल एसीटेट पामारोसा तेल में प्रमुख यौगिक हैं।

eyydk cDVVk एफ मुएल (कुलः *मायटेरेसी*), जिसे आमतौर पर गोल्डन बॉटलब्रश के रूप में जाना जाता है, ऑस्ट्रेलिया के मूल निवासी, 2–10 मीटर की ऊंचाई तक एक कठोर सुगंधित झाड़ी है, लेकिन भारत सहित दुनिया के विभिन्न हिस्सों में पाया जाता है। सुगंधित तेल मुख्य रूप से *एम. ब्रेक्टेटा* की पत्तियों में पाया जाता है।

इसके तेल में फफूंदनाशी और कीट विकर्षक गुण पाये जाते हैं। मिथाइल यूजेनॉल इस तेल में प्रमुख यौगिक हैं।

lhthft;e ,jkefVde (कुलः *मायारटेसी*), आमतौर पर लौंग के रूप में जाना जाता है। मुख्य रूप से एशियाई देशों में इसकी खेती की जाती है जिसमें भारत एक वाणिज्यिक फसल के रूप में शामिल है। लौंग की कलियों का उपयोग एशियाई, अफ्रीकी और मध्य पूर्व देशों के व्यंजनों में मीट और करी के स्वाद के लिए किया जाता है। इसका उपयोग भारतीय आयुर्वेदिक और चीनी दवाओं में भी किया जाता है। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में लौंग की कलियों को कच्चे और साथ ही लौंग के तेल के रूप में बेचा जाता है। यूजेनॉल इसके सुगंधित तेल में प्रमुख यौगिकों में से एक है।

ftftcj vkf¶Qfluy एल. (कुलः *जिंजीबरेसी*), एक प्रकंद पौधा हैं, जिसे आमतौर पर अदरक के रूप में जाना जाता है। यह भारतीय उपमहाद्वीप से दक्षिणी एशिया में पाया तथा उगाया जाता है, जो अदरक का दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक भी है। इसका प्रकंद मुख्य रूप से भारतीय व्यंजनों और मतली, खांसी, ब्रोंकाइटिस और अन्य औषधीय प्रयोजनों में उपयोग किया जाता है। जिंजिबर ओफ्फिसिनले पारंपरिक और लोककथाओं भारतीय और चीनी दवाओं की प्रमुख सामग्री में से एक है। पौधे का प्रकंद जिंगर, ऑयल का मुख्य स्रोत है, जिसमें जिंगबेरिन, जिंजरोन, आर्कुरस्किन और फार्नेसिन मुख्य यौगिक हैं।

djdek ykxk एल. (कुलः *जिंजीबरेसी*), एक राइजोमेटस हर्बेस पौधा है। जिसे आमतौर पर हल्दी के रूप में जाना जाता है। यह दक्षिण पूर्व एशिया का मूल निवासी है और भारत में हल्दी पाउडर और तेल के लिए व्यापक रूप से खेती की जाती है। हल्दी का उपयोग हजारों वर्षों से एशिया में किया जाता है और यह आयुर्वेदिक, सिद्ध और यूनानी दवाओं और भारतीय व्यंजनों का एक प्रमुख घटक है। हल्दी प्रकंद, करक्यूमिन का मुख्य स्रोत है, चिकित्सीय उद्देश्य के लिए और प्राकृतिक खाद्य रंग के रूप में उपयोग किया जाता है। हल्दी से तेल भी प्राप्त किया जाता है, तुरमेरोनेस इसके मुख्य घटक हैं।

vko';d rsyksa dh ckt+kj {kerk

औषधीय और सुगंधित पौधों का वैश्विक बाजार यूएस $ 60 बिलियन/वर्ष से अधिक होने का अनुमान है और 2050 तक यूएस $ 5 ट्रिलियन होने की उम्मीद है, जो 7% की दर से बढ़ रहा है। चीन और भारत वैश्विक जैव विविधता के 40% से अधिक होने वाले औषधीय और सुगंधित पौधों के दो

प्रमुख उत्पादक देश हैं। चीन अपनी घरेलू आवश्यकता को पूरा करने के अलावा, हर्बल व्यापार से प्रति वर्ष 5 बिलियन अमेरिकी डॉलर कमा रहा है। आवश्यक तेलों का वैश्विक आयात यूएस $2 बिलियन से अधिक था। 2005 में शीर्ष दस आयात बाजार संयुक्त राज्य अमेरिका (यूएस + 391 मिलियन), फ्रांस ($199 मिलियन), यूनाइटेड किंगडम ($175 मिलियन), जापान ($152 मिलियन), जर्मनी ($117 मिलियन), स्विट्जरलैंड ($103 मिलियन) थे। आयरलैंड ($75 मिलियन), चीन ($65 मिलियन), सिंगापुर ($61 मिलियन) और स्पेन ($61 मिलियन)। 2000 और 2005 के बीच सबसे तेजी से बढ़ते बाजार, प्रति वर्ष आयात खर्च के आधार पर सिंगापुर (35%), पोलैंड (35%), तुर्की (25%), भारत (19%), नाइजीरिया (16%), वियतनाम (14%), दक्षिण अफ्रीका (14%), इंडोनेशिया (14%) सऊदी अरब (14%), स्विट्जरलैंड (14%) स्पेन (13%), और जापान (13%) शामिल हैं।

यह अनुमान लगाया गया है कि दुनिया के 100 सुगंधित तेलों का बाजार लगभग 6 बिलियन प्रति वर्ष का है। भारत आयात में 28वें और सुगंधित तेलों के वैश्विक व्यापार के निर्यात में 14वें स्थान पर है। भारत में लगभग 5000 टन/वर्ष की लागत का सुगंधित/इत्र कच्चे माल का उत्पादन होता है जिसकी कीमत लगभग 400 करोड़ रुपए है और लगभग 130 करोड़ रुपए का निर्यात करता है। भारत, सुगंधित तेलों की लगभग 90% आवश्यकताओं को स्वदेशी उत्पादन पूरा करता और बाकी आयात से पूरा किया जाता है। निर्यात में भारत का योगदान केवल 1.1% और आयात में 0.7% है। सुगंधित तेलों की घरेलू मांग 15000 टन और निर्यात 3400 टन का लक्ष्य है। यह अनुमान है कि पौधों से प्राप्त दवाओं के लिए विश्व बाजार में लगभग 2,000,000 करोड़ रुपये हो सकते हैं। वर्तमान में, भारतीय योगदान 2000 करोड़ रुपये से भी कम है। औषधीय और सुगंधित पौधों के कच्चे माल का वार्षिक उत्पादन लगभग 200 करोड़ रुपये है। भारत इन तेलों का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है और भारत का हिस्सा वैश्विक मूल्य का लगभग 21–22% और उत्पादन में 16–17% है। भारत मसालों, ओलेरोसिन, पुदीना तेल और फूलों का प्रमुख निर्यातक देश भी है। भारत लगभग 68 आवश्यक तेलों का उत्पादन करता है।

दुनिया के शीर्ष 20 सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले सुगंधित तेल है, ऑरेंज, मिंट, नीलगिरी सिनोल–प्रकार, सिट्रोनेला, पेपरमिंट, नींबू, नीलगिरी सिट्रोनेला–प्रकार, लौंग, देवदार (यूएस), लिटेसिआ क्यूबेआ, स्पीयरमिंट, देवदार (चीनी), लवंडिन, ससफ्रास (चीनी), कैम्फर, धनिया, अंगूर, पचपाली, ससफ्रास (ब्राजील) और चूना आसुत (ब्राजील) इनकी प्रमुख मांग स्वाद, सुगंध और फार्मा क्षेत्र हैं।

व्यापार में सबसे आम सुगंधित तेल, मिंट, तुलसी, नारंगी, लौंग का पत्ता, सिट्रोनेला, लेमनग्रास, चंदन की लकड़ी, नीलगिरी, जेरेनियम, लैवेंडर, चमेली और कंद हैं। भारत से रूस, अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी, ब्रिटेन, नीदरलैंड, ऑस्ट्रेलिया और खाड़ी देशों को अदरक, चंदन, लेमनग्रास, जैस्मीन, ट्यूबेरोज आदि के आवश्यक तेल निर्यात किए जाते हैं। तुलसी, चंदन, जीरा, डिल बीज, जुनिपर आदि के तेलों की आंतरिक आवश्यकताओं को पूरी तरह से स्वदेशी उत्पादन से पूरा किया जाता है। हालांकि, औद्योगिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए लैवेंडर, पचौली, लौंग, जायफल, जीरियम और गुलाब के तेल अभी भी चीन, ब्राजील, तुर्की, बुल्गारिया, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया, श्रीलंका आदि से आयात किए जाते हैं।

Qly lj{kk e vko';d r;y

विभिन्न पौधों जैसे *सिंबोपोगोन फ्लेक्ससेंट, यूलेकियाप्टस ग्लोब्युलस, रोजमेरीनस ऑफिसिनैलिस, वेटिवरिया जिजानोइड्स, यूजेनिया कैरोफाइलस, थाइमस वल्गैरिस, मेन्था पिपेरिटा, मेंथा पुलेगियम, मेन्था स्पाइसैटा, ओसीमम बसिलिकम,आर्टेमेशिया वल्गेरिस, मेलेलुका ल्यूकेडेंड्रोन, पेलार्गोनियम ग्रेवोलेंस, मेंथा पिपेरिटा, जुनिपरस वर्जिनियाना, सिनमोमम जेलेनोनम, सिमबोपोगोन सिट्रैटस, लैवेंडुला एंजुस्टिफोलिया, तानैसेटम वल्गारे, रबदोसिया मेलिससाइड्स, एकोरस कैलमस, यूजेनिया कैरोफिल्टा, ट्रैकिस्मो एममी, फेनेनटिकल वल्गारे, एबेलमोसचस मोसैथस, सेडरस देवदरा, नेपेटा कैटरिया, एनेथम सोवा,* आदि के तेलों का कीटों, सूत्रकृमियों, पादपरोगजनकों और जीवाणुओं के नियंत्रण के लिए उपयोगी सूचना है, हालांकि अभी तक कोई सुगंधित तेल आधारित उत्पादों का उपयोग फसल सुरक्षा में नहीं किया जा रहा है, सिवाय सिट्रोनेला तथा युकलिप्टुस तेल के, जो कि मच्छर के विरुद्ध विकर्षक के रूप में आज भी उपयोग किया जाता है।

lqxf/kr r;yksa dh Hkfo"; dh lHkkouk,a

भारतीय कृषि समुदायों और उद्योगों के लिए सुगंधित तेलों के उत्पादन और निर्यात में प्रमुख देश के रूप में उभरने की बहुत संभावना है। हालांकि, इसके लिए सरकारी एजेंसी द्वारा निर्धारित न्यूनतम समर्थन मूल्य के साथ, सुगंधित तेल के उत्पादन और बाजार से प्राप्त करने योग्य बेंच–मार्क को निर्धारित करने के लिए एक शानदार रणनीतिक योजना की आवश्यकता है। अमेरिका और यूरोपीय संघ जैसे विकसित देश सुगंधित तेलों के प्रमुख आयातक हैं लेकिन चीन और भारत जैसे कई विकासशील देश, जिनके पास अत्यधिक जैव–विविधता है, आज भी कॉस्मेटिक, इत्र और औषधीय उत्पादों को अन्य देशों से अत्यधिक मात्रा का आयात कर रहे हैं। आज लोगों में स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए खतरनाक माने जाने वाले जहरीले कृत्रिम उत्पादों के विकल्प के रूप में प्राकृतिक उत्पादों के उपयोग के प्रति रुचि बढ़ने के कारण, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में सुगंधित तेलों की मांग और कीमत लगातार बढ़ रही है। भारत में विभिन्न प्रकार की कृषि–जलवायु परिस्थितियां पाई जाती है, जो बड़ी संख्या में ऐसी पौधों की प्रजातियों के विकास के लिए उपयुक्त हैं। विशाल प्रशिक्षित मानव संसाधन, पौधों की किस्मों, उन्नत प्रौद्योगिकियों और उत्पादन की अपेक्षाकृत सस्ती लागत की उपलब्धता, भारत को विश्व बाजार में सुगंधित और औषधीय पौधों की सामग्री का एक प्रमुख उत्पादक, प्रोसेसर और आपूर्तिकर्ता बनने के लिए अनुकूल बनाता है। विभिन्न भारतीय जैव–विविधता क्षेत्रों में पौधों की ऐसी प्रजातियों की संख्या अभी भी मौजूद है, जिन्हें उनके अंतिम उपयोग के लिए कभी नहीं खोजा गया है। सुगंधित पौधों की खेती को बढ़ावा देने के लिए, किसानों को सुगंधित तेलों का न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रदान करने से भारत में आवश्यक तेलों के उत्पादन में कई गुना वृद्धि हो सकती है। इसके अलावा, आवश्यक तेलों के नए स्रोतों की पहचान, प्रकृति में मौजूद कई सुगंधित पौधों को दुर्लभ या लुप्तप्राय या पृथ्वी से विलुप्त होने से बचा सकती है। ये प्रजातियां नए उत्पादों का नेतृत्व कर सकती हैं, जो मानव के लिए अभी भी अज्ञात हैं। साथ ही इन पौधों की अधिक खेती से किसानों को अच्छा रोजगार एवं उनकी आय दुगुनी करने में भी मदद मिल सकती है।

कीटों का जैविक नियंत्रण का महत्व, प्रगति और इसमें आने वाली बाधाएं

बिश्वजीत पाल एवं शारदा सिंह
कीटविज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012

t\fod fu;=.k dh lhek

पिछले कुछ दशकों से कृषि जगत में कीटों एवं कुटकियों के कारण बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है, जिससे हमारे देश को बहुत आर्थिक क्षति झेलनी पड़ी है। विश्वभर के वैज्ञानिकगण इन कीटों एवं कुटकियों से छुटकारा पाने का उपाय खोजने में प्रयासरत हें। आज विश्वभर में 60 से भी अधिक देशों में जैविक नियंत्रण से कीटों एवं कुटकियों पर वहनीय विजय पाई गई है। आने वाले वर्षों में कीट एवं कुटकियों के जैविक नियंत्रण पर कार्यरत वैज्ञानिकगण अपने उत्साह और प्रयत्न को नई दिशाएँ देंगे।

लगभग 98% हानिकारक कीट एवं कुटकियों की जनसंख्या का नियंत्रण प्रकृति में अपने आप ही करती है। यह अनुमान लगाया गया है कि सिर्फ 5% कीटों की प्रजातियों पर ही जैविक नियंत्रण का प्रयास किया गया है। विज्ञान की दुनिया में अभी तक मात्र 30% ही परजीवी कीटों की जानकारी है। आने वाले कुछ सालों में विज्ञान की नई उपलब्धियों के साथ उन्नत तकनीकों की मदद से हम कीटों और कुटकियों कि रोकथाम करने में समर्थ होंगे जोकि इस पृथ्वी के लिए कम नुकसानदायी होगी।

आज हमें जैविक नियंत्रण के नए क्षितिज तक पहुँचने कि गति को तेज करने कि आवश्यकता है। जैविक कारिन्दों का उपयोग गंभीर कीटों की आबादी नियमन प्रक्रिया की स्थापना में मदद कर सकते हैं। जहरीले कीटनाशकों और उनके दुष्प्रभाव के भार को कम करने के लिए जैविक कारिन्दों का उपयोग करना अत्यंत आवश्यक है। इस प्रक्रिया में जैविक कारिन्दों का आयात, परभक्षी कीटों का उपयोग, जैविक कारिन्दों का संरक्षण इत्यादि लोकप्रिय अवधारणा है जिससे कई मामलों में अच्छी सफलता मिली है। इसी प्रकार नए–नए बायोटाईप, परजीवी के संकर प्रजातियों के रूप में इसी तरह की नई प्रवृत्तियों, कीटनाशी कवक तथा अन्य नव–विकसित जैविक नियंत्रण की तकनीकों के उपयोग से सामंजस्यपूर्ण कीट दमन किए जाने की जरूरत है।

कृषि शिल्प में जैविक नियंत्रण तरीकों को अपनाने कि आवश्यकता है। हालांकि जैविक कारिन्दों के उपयोग के कई फायदे हैं, लेकिन कीट की रासायनिक नियंत्रण जैसे अन्य तरीकों के साथ समायोजित करने की आवश्यकता है। ऐसे कीट कीटनाशक विकसित किए जाएं जिनका दुष्प्रभाव कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं पर कम से कम हो। उदाहरण के लिए, एंडोसल्फान कई जैविक कारिन्दों और सामाजिक कीड़ों के लिए सुरक्षित है। हमारे देश मे एंडोसल्फान के इस्तेमाल पर सरकार ने रोक लगा दी है। आज भारतीय बाजारों में कोई भी ऐसा कीटनाशी नहीं है जोकि कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं पर दुष्प्रभाव ना दिखाये। जैविक नियंत्रण प्रकृति का संतुलन बनाए रखने में मदद करता है।

कीटों के प्रबंधन में परभक्षी, परजीवी और रोगजनकों का उपयोग करने को जैविक नियंत्रण कहते हैं। कीटों के प्राकृतिक दुश्मनों द्वारा प्रदान की गई कीट नियंत्रण को जैविक नियंत्रण कहा जाता है। लेकिन यह जैविक नियंत्रण अक्सर पहचानना कठिन है, लोगों में इसकी समझ कम है, और/या जैविक नियंत्रण का प्रबंधन करना और अधिक कठिन है। जैविक नियंत्रण में संरक्षण, संवर्धन, और कीटों का पारम्परिक शत्रुओं का उचित प्रयोग करने की रणनीति तैयार की जाती है। जैविक नियंत्रण, पारिस्थितिक दृष्टि से प्राकृतिक नियंत्रण का एक चरण के रूप में माना जाता है। जैविक नियंत्रण का व्याख्या है कि परजीवी, परभक्षियों और रोगाणुओं की कार्रवाई से एक और जीव की आबादी घनत्व में औसतन कमी को बनाए रखना जो कि इनकी अनुपस्थिति में घटित होता है। प्राकृतिक शत्रुओं के कृत्रिम वृद्धि या प्रोत्साहन से अवांछनीय कीड़े, अन्य जानवरों या पौधों के दमन या विनाश किया जाना ही इसका मुख्य उद्देश्य है।

जैविक नियंत्रण प्राकृतिक दुश्मनों द्वारा किसी भी स्तर पर जीव की जनसंख्या घनत्व का विनियमन करता है। किसी भी जीव कि आबादी नियमन के लिए अगर जैविक नियंत्रण कारक जिम्मेदार हैं, और वह मानव जगत के हित के लिए प्रतिकूल है तो यह आर्थिक समझ में सफल जैविक नियंत्रण का एक मामला है।

tfod fu;=.k d çdkj

vkf'kd tfod fu;=.k% यदि नियंत्रण कुछ हद तक उच्च औसत जनसंख्या घनत्व पर प्राप्त की है और यह आर्थिक रूप से संतोषजनक है तो यह आंशिक जैविक नियंत्रण कहा जाता है।

i;kIr tfod fu;=.k% यदि जैविक नियंत्रण एक लंबे समय तक आर्थिक रूप से काफी हद तक सफल हो जोकि आंशिक नियंत्रण के बाद का समय हो तो यह पर्याप्त नियंत्रण माना जाता है। इसका मूल्यांकन आर्थिक मापदंड से किया जाता है।

i.k tfod fu;=.k% यदि जैविक कारक एक बहुत ही लंबी अवधि के लिए आर्थिक रूप से सफल होता है तो उसे पूर्ण जैविक नियंत्रण माना जाता है। इस तरह की सफलता अभी तक बहुत कम प्राप्त की जा सकी है। उदाहरण के लिए, *रोड़ोलिया कार्डिनालिस* ने कॉटनि कुशन स्केल का नियंत्रण किया या फिर गन्ने में पाईरिल्ला का नियंत्रण *एपीरीकेनिया मेलनोलुका* ने किया। सफल जैविक नियंत्रण की आर्थिक विशेषता यह है कि एक बार हासिल की है, तो यह अनिवार्य रूप से स्थायी है। इसके अलावा, यह मानव का उद्देश्यपूर्ण गतिविधि से सहमति व्यक्त करता है।

çk—frd 'k= d çdkj

आम तौर पर जैविक कीट नियंत्रण में परभक्षी, परजीवी और रोगजनकों का ही विशेष रूप से एकीकृत प्रयोग किया जाता है। अधिकांश परजीवी, रोगजनक, और कई परभक्षी, कीट विशेष के अति विशिष्ट होते हैं ।

ijthoh dhV

परजीवी का अर्थ है दूसरे जीव पर आश्रित होना। कीटों के संसार में परजीवी बहुत पाये जाते हैं। मगर कीट नियंत्रण के प्रयोग में आने वाले परजीवी अक्सर पूरी तरह से अपने पोषक पर आश्रित नहीं होते हैं। परजीवी कीट एक ऐसा कीट है जो की अपने पोषक के शरीर के अंदर अथवा ऊपर अपना जीवन चक्र पूरा करता है। आम तौर पर परजीवी कीट का अपरिपक्व अवस्था ही अपने पोषक कीट पर आश्रित होता है। कुछ परजीवी कीटों के वयस्क भी अपने पोषक कीटों के ऊपर आश्रित रहते हैं। अधिकांश परजीवी कीड़े या तो मक्खियाँ या ततैया प्रजाति के होते हैं। हायमेनोप्टेरा ऑर्डर में ततैया परजीवी तीन दर्जन से अधिक परिवारों में होते हैं। उदाहरण के लिए, अफीडीने माहू पर हमला करते हैं। ट्राइकोग्रामाटिडे कुन के कीट मुख्यतः दूसरे कीटों के अंडों के अंदर ही अपना अपरिपक्व जीवन व्यतीत करते हैं। *अफेलिनिडे, एंसयरटीडे, ईउलोफिडे* और *इकनुमोनिडे* आदि परिवारों के कीट भी अन्य हानिकारक कीटों पर अपना जीवन चक्र पूरा करते हैं। ज्यादातर ये कीट बहुत छोटे आकार के होते हैं और मनुष्य को या अन्य जीव जंतुओं को किसी भी प्रकार की हानि नहीं पहुंचाते हैं। मादा परजीवी कीट अपने पोषक कीट के शरीर के ऊपर या फिर अंदर अंडे देती है। अंडे अपने ऊष्मायन काल के पूरा होने पर फूट जाते हैं और इस अपरिपक्व अवस्था को ग्रब कहते हैं। अगर मादा परजीवी ने पोषक कीट के शरीर के अंदर अंडे दिये हैं तो वे फूटने पर शरीर के अंदर ही रहकर पनपते हैं। और यदि मादा परजीवी ने पोषक कीट के शरीर के ऊपर अंडे दिए हैं तो ग्रब शरीर के बाहर रहकर ही उसका भक्षण करते हैं।

परजीवी मक्खियों के शरीर पर अक्सर बहुत छोटे–छोटे बाल होते हैं जो दिखने में छोटी–सी आम मक्खी की तरह ही होते हैं और टैकीनिडे कुल के सदस्य होते हैं। टैकीनिडे परजीवी के अपरिपक्व अवस्था को मैगट कहा जाता है। ये मैगट अपने पोषक कीट के शरीर के अंदर पनपते हैं और अपना जीवन चक्र पूरा होने पर ही बाहर आते हैं।

परजीवी कीटों की आदर्श विशेषतायें निम्नलिखित हैं:

1. परजीवी कीट मेजबान कीट से उच्च खोज क्षमता रखते हैं।
2. परजीवी कीट अपेक्षाकृत एक या कुछ प्रजातियों के लिए विशिष्ट होना चाहिए।
3. परजीवी कीट मुख्य रूप से अपने पोषक कीट से उच्च प्रजनन क्षमता वाले होते हैं।
4. परजीवी कीट अपने पोषक कीट के मिलने की हर संभावित जगह पर पहुँचकर उनको ढूंढने में सक्षम होते हैं।
5. परजीवी कीट पोषक कीट के अनुकूल जलवायु परिस्थितियों में जीने की क्षमता रखते हैं।
6. परजीवी प्रजाति के कीटों का प्रयोगशाला में आसानी से वंश वृद्धि होना चाहिए।
7. यह मेजबान कीट को जल्द ही मारने में कुशल होना चाहिए।
8. इन्हें किसी भी परिस्थिति में पौधों के भक्षक नहीं बनना चाहिए।
9. परजीवी कीट का कोई अन्य परजीवी कीट नहीं होना चाहिए।

10. अच्छे परजीवी कीट सफलतापूर्वक अपने प्रतिस्पर्धी कीटों से अपना भोजन छीन लेते हैं, अन्यथा वे जी नहीं सकेंगे।

11. परजीवी और मेजबान के जीवन चक्र में तुलनात्मक होना चाहिए।

ijHk{kh dhV

परभक्षी कीटों की भी एक अलग दुनिया है। एक परभक्षी अपने जीवन काल में सैकड़ों अन्य कीटों का शिकार करते और अपना भरण पोषण करते हैं। परभक्षी कीट खास तौर पर हिंसक भृंग, मक्खियां, लेस्विंग बगस, बग इत्यादि विभिन्न कीट व कुटकी को खाते हैं। अधिकांश मकड़ियां अपने पोषण के लिए कीड़ों पर ही पूरी तरह आश्रित होते है। परभक्षी कीट बहुत ही कुशल शिकारी होते हैं। इनकी अविकसित अवस्था को अक्सर ग्रब कहा जाता हैं।

ijHk{kh dhV dh ifjHkk"kk% परभक्षी वह कीट है जो अन्य कीट (शिकार) से आम तौर पर बड़े और खुद की तुलना में कमजोर को खाती है, अक्सर उन्हें साबुत और तेजी से भक्षण करती है। परभक्षियों के संसार में कई और जीव–जन्तुओं ने भी कीटों को अपने आहार के रूप में स्वीकारा है। ये उभयचर, पक्षी, स्तनधारी, सरीसृप वर्ग के हैं। ये परभक्षी प्रजातियाँ बहुत बड़े पैमाने पर कीटों का शिकार करते हैं।

परभक्षी कीटों की विशेषतायेँ निम्नलिखित हैं:

1. आम तौर पर यह एक से अधिक पोषक कीट को खाते हैं।
2. परभक्षी कीट अपने अपरिपक्व और वयस्क अवस्था में स्वतंत्र रूप से अपने चारों ओर खोज कर अपने शिकार को खाते हैं।
3. हालांकि परभक्षी कीट अक्सर शिकार कीट से बड़े होते हैं पर कई बार छोटे भी होते हैं।
4. परभक्षी कीड़े सभी मेजबान चरणों, अंडा, लार्वा या इल्ली, प्यूपा और वयस्क को खाते हैं।

jkxtud fu;a=.k

सूक्ष्मजैविक नियंत्रण या रोगजनक नियंत्रण सबसे पहले ई ए स्टिंहौस (1949) द्वारा इस्तेमाल किया गया था। सूक्ष्मजीवों के कारण रोग के माध्यम से कीट आबादी प्रबंधन व्यक्त की जा सकती है। प्रकृति में, विषाणु, जीवाणु, कवक और प्रोटोजोआ जैसे सूक्ष्मजीवों की गतिशीलता और कीट और घुन की आबादी का प्राकृतिक नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका प्रदर्शन कर सकते हैं। रोगजनक नियंत्रण जैविक नियंत्रण एक विशेष पहलू है जिसमे सूक्ष्म जीवों के उपयोग से हानिकारक कीटों कि बढ़ती जनसंख्या को नियंत्रण में किया जाता है। रोगाणु का उपयोग करने का तरीका उसके कीट के शरीर में प्रवेश करने की प्रक्रिया पर आधारित होता है। यह मूलतः दो प्रकार के होते हैं:

1½ [kku d ek/;e l% यह जीवाणु, विषाणु और प्रोटोजोआ, जो संक्रमण और मृत्यु के लिए भोजन के साथ किया जाता है, यह पेट जहर के रूप में रासायनिक कीटनाशक के समान माना जा सकता है। विषाणु का संक्रमण प्रक्रिया अति विशिष्ट होते हैं और वे मेजबान के शरीर के भीतर कुछ ऊतकों में घुसकर उन्हें नष्ट कर देते हैं।

2½ vkoj.k d ek/;e l% रोगजनक कवक कीट शरीर के बाहरी आवरण के माध्यम से अपना संक्रमण फैलाते हैं। कवक का संक्रमण आमतौर पर मौसम अनुकूल होने पर ही होता है।

कीट नियंत्रण के लिए रोग का सफल प्रयोग जीवविज्ञान और मेजबान कीड़े और रोगजनक सूक्ष्म जीवों की विशेषताओं के साथ–साथ पर्यावरण पर निर्भर करता है। एक की शुरूआत के लिए पोषक कीट को उपयुक्त निवास पर रोगजनक को कब्जा करना होगा और वहाँ संक्रमण की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ होना चाहिए। चूंकि आम तौर पर रोगजनक का फैलाव पोषक कीट के जनसंख्या के घनत्व पर निर्भर करता है इसलिए पोषक कीट की आबादी अगर कम है तो रोग कम फैलता है। इसके लिए पोषक कीट का अतिसंवेदनशील होना अनिवार्य है। कीटों के स्थायी दमन के लिए रोगजनक कीटनाशक के रूप में एक रोगाणु को बार–बार इस्तेमाल किया जाता है।

jksxtud fu;=.k ds ykHk

1. पोषक कीट विशिष्टता: रोगाणुओं की विशिष्टता से अपेक्षाकृत उच्च स्तरीय लाभप्रद कीड़ों की रक्षा होती है।
2. अपने पोषक कीटों के शरीर में कई गुणा रोगाणुओं की वृद्धि की क्षमता: जब रोगजनक कम मात्रा में उपयोग किया जाता है तो पोषक कीट की कम आबादी होने पर भी काफी समय तक इसका असर रहता है।
3. विषाक्त अवशेषों की कोई समस्या नहीं: रोगजनक आमतौर पर हानि रहित होते हैं और इनका कोई जहरीला अवशेष नहीं रहता है।
4. प्रतिरोध का कोई सबूत नहीं: आजतक किसी भी हानिकारक कीट ने कभी भी किसी रोगजनक का प्रतिरोध नहीं किया। रोगजनक के लिए प्रतिरोध के अभाव में, कीट प्रबंधन कार्यक्रमों में उनके उपयोग के लिए कई तरह के रोगजनक कीटनाशकों का विकास हुआ है और उनका उपयोग भी होता है।
5. उपयोग के लिए परंपरागत तकनीकें/तरीके: रोगजनकों के इस्तेमाल में परंपरागत तकनीकों का ही उपयोग होता है।
6. कीट का स्थायी नियंत्रण: एक बार यदि रोगजनक का किसी भी पोषक कीट के जनसंख्या पर प्रकोप हो गया तो अक्सर लंबे समय तक वह विद्यमान रहता है और हानिकारक कीट की आबादी के भीतर उनके आत्म प्रचार–प्रसार के माध्यम से कीट नियंत्रण का स्थायी रूप देखा गया है।
7. आदर्श रूप में आईपीएम कार्यक्रमों में इसका उपयोग अन्य पौध संरक्षण उपायों के साथ एकीकरण के लिए अनुकूल है।
8. उत्पादन प्रौद्योगिकी: इनकी उत्पादन प्रक्रिया को सरल बना लिया गया है और अब ये बहुत मात्रा में आसानी से बनाया जा सकता है।
9. इनके उपयोग से पर्यावरण में प्रदूषण फैलने की कोई संभावना नहीं है।

रोगजनक नियंत्रण में निम्नलिखित कमियाँ हैं:

1. उच्च चयनात्मकता/मेजबान विशिष्टता: चूंकि रोगजनक एजेंट अक्सर केवल एक कीट प्रजाति के विरुद्ध प्रभावी है इसलिए अलग–अलग कीट के लिए अलग–अलग उपाय करने पड़ते हैं।

2. उपयोग का सही समयः इस संबंध, रोग के ऊष्मायन अवधि, जो एक महत्वपूर्ण कारक है और कीट का उम्र विशिष्टता और अवस्था विशिष्टता की वजह से तय करने में अक्सर मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। रोगजनक निश्चित चरण (लार्वा) पर हमला करते हैं और अंडे या वयस्कों पर इनका प्रभाव नहीं होता। लार्वा की संवेदनशीलता भी आयु में वृद्धि के साथ कम हो जाती है।
3. विलंबित प्रभाव/मृत्युः रोगजनकों की कुछ समय अपनी लंबी बीमारी ऊष्मायन अवधि के कारण अपने लक्ष्य की मेजबान कीट के मौत में विलंब होता हैं और तब तक ये कीट पौधों को क्षति पहुँचाते रहते हैं।
4. रोगजनक जीवाणुओं का सही तरह से छिड़काव करना अतिआवश्यक है। छिड़काव शाम के समय ही करना उचित है अन्यथा सूरज की किरणें जीवाणुओं को मार देती है। छिड़काव का पौधों पर अच्छी फैलाव महत्वपूर्ण है।
5. भंडारण समस्याः रोगजनकों का बहुत ही कम आत्म जीवन है। जीवित अवस्था में रोगजनक का होना आवश्यक है। इसलिए इन का भंडारण ठंडे एवं शुष्क जगहों पर होना चाहिए। अनुकूल भंडारण परिस्थितियों के अभाव में रोगजनक मर जाते हैं।
6. बड़ी मात्रा में संवर्धन की कठिनाईः कृत्रिम आहार पर मेजबान कीट पालन अधिक बोझिल और श्रमसाध्य काम है जिसे लगातार निगरानी की आवश्यकता होती है।
7. कानूनी तौर पर सुरक्षित नहीं है और पंजीकरण के लिए आवश्यक डेटा अत्यधिक महंगा है।

t\o fu;=.k d\ 0;kogkfjd egRo ¼ykHk½

1. यह एक व्यापक क्षेत्र में प्रयोग किया जाता है।
2. जैविक कारक के प्रयोग घने जंगलों और दुर्गम क्षेत्रों में आसानी से किया जा सकता है।
3. यह मनुष्यों और पशुओं के स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित है।
4. जब तक पोषक कीट प्रकृति में उपलब्ध है तब तक जैविक एजेंट भी प्रकृति में जीवित रहते है।
5. यह एक सस्ता तरीका है, जो सफलतापूर्वक उपयोग किया जा सकता है।
6. जैविक कारक प्रकृति में स्वयं को बनाए रखने में सक्षम होते है।
7. इनके प्रयोग से पर्यावरण में प्रदूषण का कोई खतरा नहीं है।
8. इनका उपयोग करने के लिए कोई विशेष उपकरण की आवश्यकता नहीं है।

t\o fu;=.k e\ vku\ okyh ck/kk,\

जैव नियंत्रण धीमी प्रक्रिया है और कीट पर नियंत्रण करने के लिए थोड़ा अधिक समय लगता है। इसमें आने वाली बाधाएँ निम्नलिखित हैं:

1. समय पर जैविक कारकों का उपलब्ध न होना।
2. किसान अक्सर कम पढ़े–लिखे होने की वजह से नई प्रौद्योगिकियों के बारे में नहीं जान पाते।

3. छोटे–छोटे खेत होने की वजह से जैविक कारक दूसरों के खेत में चले जाते हैं।
4. रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग के प्रति झुकाव।
5. जैविक कारकों के बारे में लोकप्रिय साहित्य की अनुपलब्धता।

fu"d"k

यदि भारत अत्यधिक गरीबी और भुखमरी के उन्मूलन के अपने सहस्राब्दी विकास लक्ष्य तक पहुंचने जा रहा है, तो सरकार, गैर सरकारी संगठनों, अनुसंधान केंद्रों और विश्वविद्यालयों को प्रशिक्षण द्व ारा जैविक नियंत्रण में सुधार करने, विश्वसनीय बुनियादी ढाँचा बनाने, कीटनाशक विनियमन को लागू करने और किसान कीटनाशक ज्ञान में सुधार करने पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, वर्तमान कीट नियंत्रण प्रथाओं के लिए और अधिक टिकाऊ विकल्पों का अनुसंधान और विकास किया जाना चाहिए जैसेकि जैविक खेती। केवल इन क्षेत्रों में सुधार करने से ही भारत अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या का पोषण कर सकेगा और अत्यधिक गरीबी और भूख को मिटा सकेगा। पिछले कई वर्षों में, कृषि प्रौद्योगिकी के प्रसार की प्रक्रिया बदल गई है। पिछले कुछ वर्षों में पूरे देश में इंटरनेट के प्रयोग और अन्य मल्टीमीडिया तकनीकों में वृद्धि के कारण कीट प्रबंधन तकनीकों के संबंध में औसत किसान की धारणा को बदल दिया है। पिछले दशकों में जैविक कीट नियंत्रण तकनीक का प्रचलन कम हुआ है क्योंकि यह तकनीक इतना प्रभावशाली नहीं थी। जैविक कीट नियंत्रण तकनीक का सिंथेटिक कीटनाशक या नए सिंथेटिक रसायनों जैसे फेरोमोन, केमोस्टोरिलेंट्स, आकर्षित करने वाले और हार्मोन के साथ प्रतिस्पर्धी होने की संभावना नहीं थी। इस प्रकार, जैविक नियंत्रण को नई प्रौद्योगिकियों के साथ प्रतिस्पर्धात्मक नहीं माना गया और इसे आधुनिक नहीं माना गया। फसल सुरक्षा के लिए बायोइंजीनियरिंग समाधानों की हाल ही में बिक्री को उन कारणों की सूची में भी जोड़ा जा सकता है जिनके कारण वर्तमान में पारम्परिक जैविक नियंत्रण का जोरदार समर्थन नहीं किया गया है। इसमें बेहतरीन शैक्षिक कौशल, वित्तीय संसाधनों और व्यक्तिगत समर्पण की आवश्यकता है, ताकि कीट नियंत्रण के बारे में सही निर्णय लेने के लिए उत्पादकों को सक्षम बनाने के लिए आवश्यक जानकारी को प्रभावी ढंग से बताया जा सके। बहुसंख्यक कृषकों को जैविक नियंत्रण की प्रक्रियाएँ दिखाई नहीं देती हैं। विरले अपवादों को छोड़ कर जैविक नियंत्रण के लाभ जटिल जीव विज्ञान का हिस्सा बन जाते हैं जो फसल उत्पादन के व्यवसाय में अवशोषित हो जाते हैं, जिस कारण इसके लाभ को पुराने और नए ग्राहक समान रूप से भूल जाते हैं। भारत में समस्या बढ़ती जा रही है क्योंकि आधुनिक एग्रोटेक्नोलोजी पारंपरिक तरीकों को विस्थापित करती जा रही है और इसलिए वे भी कीटों के नियंत्रण के लिए कीटनाशकों पर निर्भर होते जा रहे हैं। इस प्रकार, एक कीट नियंत्रण समस्या की समझ अक्सर यह निर्धारित करती हैं कि, क्या पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित विकल्प का चयन किया गया है अथवा नहीं ?

जैविक नियंत्रण: दृष्टिकोण और अनुप्रयोग

बिश्वजित पाल एवं शारदा सिंह
कीटविज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

हाल के दशकों में, पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर कीटनाशकों के उपयोग के प्रभावों के बारे में जागरुकता के परिणामस्वरूप रासायनिक कीट नियंत्रण पर निर्भरता को कम करने के प्रयास हुए हैं। कई देशों ने कीटनाशक निर्माण, पंजीकरण और उपयोग के अधिक कड़े विनियमन की स्थापना की है, जिससे लागत बढ़ रही है, और इन उपकरणों की उपलब्धता में कमी आई है। कई मामलों में, कीटों ने कीटनाशकों के प्रतिरोध के साथ स्वयं ही परिवर्तन की आवश्यकता को इंगित किया है। कीटनाशकों के विकल्पों की आवश्यकता स्पष्ट है, लेकिन ये समाधान कहां से आएंगे? अमेरिका की कांग्रेस की एक हालिया रिपोर्ट, प्रौद्योगिकी आकलन कार्यालय (यूएस कांग्रेस, ओटीए 1995) इंगित करता है कि जैविक उपचार जैसे जैविक नियंत्रण प्रौद्योगिकियों को कीट प्रबंधन में व्यापक रूप से उपयोग किया जा सकता है।

रेचल कार्सन के प्रकाशन 'साइलेंट स्प्रिंग' (1962) जिसमें कि कृषि में प्रयोग होने वाले हानिकारक कीटनाशक पर कई संबंधित रिपोर्ट के प्रभाव के बाद कीटनाशकों के उपयोग के संबंध में सार्वजनिक धारणा धीरे–धीरे बदल गई। बाद में, 1992में "पृथ्वी शिखर सम्मेलन" में एजेंडा 21 ने स्पष्ट रूप से संवहनीय कृषि में कीटनाशकों का उपयोग और पर्यावरण संबंधी सुरक्षा सुधारात्मक उपायों की आवश्यकता को परिभाषित किया। पिछले कई दशकों में, एशिया–प्रशांत क्षेत्रों में जैविक नियंत्रण कारिंदों के हेरफेर से अपनी फसलों की सुरक्षा में निरंतर प्रगति हो रही है। तदनुसार, नए–नए परभक्षी एवं परजीवी कीटों की खोज और उनके उपयोग पर वैज्ञानिकों की दिलचस्पी बढ़ रही है ।

शोध क्रियाओं से यह भी स्पष्ट हुआ है कि एक विशेष जैविक नियंत्रण कारक हमेशा एक ही तरीके से प्रतिक्रिया नहीं करते, इनकी प्रतिक्रिया में भिन्नता हो सकती है। किसी भी कीट के जैविक नियंत्रण के लिए उक्त कीट की जनसंख्या का स्तर, अनुकूल आवासीय पर्यावरण का विस्तृत वैज्ञानिक अध्ययन अतिआवश्यक है। इसी प्रकार जैविक नियंत्रण कारक के जीवन चक्र की विस्तृत जानकारी होना अनिवार्य है। इस संदर्भ में, कई पारम्परिक जैविक नियंत्रण कारकों का उपयोग किया गया है तथा अन्य क्षेत्रों में भी उनके उपयोग की सिफारिश की जाती है।

जैविक नियंत्रण का इतिहास सत्रहवीं शताब्दी का है। कीटों के प्रभाव को कम करने के लिए प्राकृतिक शत्रुओं का उपयोग का एक लंबा इतिहास है। प्राचीन चीनियों ने, यह देखते हुए कि चींटियां कई नींबू (साइट्रस) वर्गीय कीटों के प्रभावी शिकार थे, उन्हें अपने घरों के आस–पास से लेकर अपने बागों में रखकर उनकी जनसंख्या बढ़ा दी। फलस्वरूप चींटियों ने नींबू के कीटों का भक्षण किया और फलों का उत्पादन बढ़ाया। विश्वभर में कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की आज बढ़ती मांग को देखते हुये उन पर वैज्ञानिकों ने बहुत काम किया और आधुनिक सुविधाओं की मदद से उनका आदान–प्रदान किया तथा विभिन्न प्रजातियों के कीड़ों का नियंत्रण किया।

इसी प्रकार के इतिहास से प्रेरित हो कर पूरे संसार में परजीवी एवं परभक्षी कीटों का स्थानांतरण शुरू हुआ। आधुनिक युग में परजीवी और परभक्षी कीड़ों को बहुत आसानी से स्थानांतरित किया जा सकता है। इस लेख में हम जैविक नियंत्रण और आधुनिक कीट प्रबंधन में इन दृष्टिकोणों के अनुप्रयोग आपके सम्मुख प्रस्तुत कर रहे हैं। जबकि जैविक नियंत्रण के सिद्धांतों को विभिन्न विनाशकारी जीवों व परोपजीवी (जैसे खरपतवार, पादप रोगजनक, कशेरुकी और कीड़े) के खिलाफ लागू किया जा सकता है।

भारत में, संगठित और व्यवस्थित जैविक नियंत्रण अनुसंधान की शुरुआत राष्ट्रमंडल संस्थान जैविक नियंत्रण केंद्र (सी आई बी सी) की स्थापना 1957 के साथ बैंगलोर में हुई। तत्पश्चात आवश्यक्तानुसार और कई जगहों पर नए–नए क्षेत्रीय केंद्र खोले गए जैसे श्रीनगर (जम्मू और काश्मीर), डलहौजी, कुल्लू और शिमला (हिमाचल प्रदेश), लुधियाना (पंजाब), श्रीगंगानगर (राजस्थान), लखनऊ (उत्तर प्रदेश), देहरादून (उत्तरांचल), भोपाल (मध्य प्रदेश), परभणी (महाराष्ट्र), सूरत (गुजरात), मोतीपुर (बिहार), भुवनेश्वर (उड़ीसा), प्लासी (पश्चिम बंगाल), जोरहाट और गौहाटी (असम), गंगटोक (सिक्किम), शिलांग (मेघालय), अंबाजीपेट और रामचंद्रपुरम (आंध्र प्रदेश), कोयंबटूर (तमिलनाडु), मंड्या (कर्नाटक) और पालघाट (केरल)। ये क्षेत्रीय केंद्र एक निर्धारित परियोजना के अंतर्गत कुछ महीनों से 3–5 साल तक कार्यरत रहे हैं।

भारत में जैविक नियंत्रण पर क्षोध कार्य हेतु अखिल भारतीय एकीकृत फसल कीट और खरपतवार के जैविक नियंत्रण पर अनुसंधान परियोजना की स्थापना 1977 में 10 केंद्रों में की गई थी। देश के विभिन्न हिस्सों में जैविक नियंत्रण पर अनुसंधान करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई सी ए आर) के उपक्रम से भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बैंगलोर (कर्नाटक), गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर (तमिलनाडु), केन्द्रीय धान अनुसंधान संस्थान, कटक (उड़ीसा), केन्द्रीय तंबाकू अनुसंधान संस्थान, राजामंड्री (आंध्र प्रदेश), केन्द्रीय बागान फसल अनुसंधान संस्थान, कायंगुलम (केरल), केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश), भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली (दिल्ली), आनंद कृषि विश्वविद्यालय, आनंद (गुजरात), पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना (पंजाब) और केरल कृषि विश्वविद्यालय, त्रिशूर (केरल) में कार्य आरंभ हुये। अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (एआईसीआरपी) को 1993 में "जैविक नियंत्रण परियोजना निदेशालय" में तबदील कर दिया गया था। यह निदेशालय मुख्यतः जैविक कारकों पर मूल शोध आयोजित करता है तथा इस दिशा में उन्नत प्रशिक्षण भी प्रदान करता है। जैविक नियंत्रण अनुसंधान में पारंपरिक विश्वविद्यालय, राज्य कृषि विश्वविद्यालय एवं फसल आधारित भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के कई अनुसंधान संस्थान भी सम्मिलित हैं।

नई उदार व्यापार नीतियों के साथ कई विदेशी हानिकारक कीटों ने हमारे देश में प्रवेश किया है, जैसे *सूबबूल सिल्लीड, हेटेरोसिल्ला क्यूबना* सूबबूल पर, *लुकेना लेयूकोसेफाला* (1988); पत्ती खनिक, *लिरिओमाइजा ट्राइफोली*, कई पौधों पर जटिल समस्या (1990); कॉफी बेरी बोरर, *हाइपोटेनमस हैम्पेई* कॉफी पर (1991); *स्पाईरालिंग व्हाइटफ्लाई, एलेरोडिकस डिसपेर्सस* कई पौधों पर (1993); नारियल *इरिओफिड कुटकी एसिरियागु एर्रोनिस* नारियल पर (1998) और *व्हाइटफ्लाई, बेमिसिया अर्जेंटोफोलि* (1999) टमाटर और अन्य पौधों पर।

t\fod fu;=.k d\ –f"Vdk.k

जैविक नियंत्रण के लिए तीन सामान्य दृष्टिकोण हैं: प्राकृतिक शत्रुओं का आयात, संवर्धन और संरक्षण। इन तकनीकों में से प्रत्येक को अकेले या जैविक नियंत्रण कार्यक्रम में संयोजित कर इस्तेमाल किया जा सकता है।

ikjEifjd t\fod fu;=.k

पारम्परिक जैविक नियंत्रण का उद्देश्य विदेशी मूल के अवांछित कीट जोकि अनजाने में भारत में प्रवेश पा गए हैं और इस नए पर्यावरण में हानिकारक बन गए हैं उनका उन्मूलन करना है। हानिकारक कीट और उनके प्राकृतिक शत्रुओं के बीच की खोये हुये संतुलन को फिर से स्थापित करने के लिए गहन शोध करने की आवश्यकता है।

çk—frd 's=qvksa dk vk;kr

प्राकृतिक शत्रुओं का आयात, जिसे कभी–कभी पारम्परिक जैविक नियंत्रण के रूप में जाना जाता है, का उपयोग तब किया जाता है जब विदेशी मूल के कीट का जैव नियंत्रण कार्यक्रम में शामिल करने का लक्ष्य होता है। नये– नये कीट लगातार ऐसे देशों में पाये जा रहे हैं जहां के वे मूल निवासी नहीं हैं, जो कि या तो गलती से, या कुछ मामलों में, जानबूझ कर आयात हो जाते हैं। इनमें से कई कीटों के प्रवेश कि प्रक्रिया का पुष्टीकरण नहीं हो पाती है। इनमे से कई कीट हानिकारक कीट बन जाते हैं और कई कीट हानिकारक नहीं बन पाते हैं। प्रारम्भ में नए कीट हानिकारक नहीं होते हैं, उनके प्राकृतिक शत्रुओं के अभाव से उनकी बढ़ती जनसंख्या पर कोई अंकुश नहीं होता। इन मामलों में, प्राकृतिक शत्रुओं का आयात अत्यधिक प्रभावी हो सकता है।

एक बार कीट की उत्पत्ति के देश का मालूम होने के बाद, मूल क्षेत्र में उक्त कीट के प्राकृतिक शत्रुओं का अध्यन किया जाता है। उनमें से जो प्राकृतिक शत्रु प्रभावशाली हो, उसका चयन किया जाता है। उन प्राकृतिक शत्रुओं की पहचान की जाती है तथा उनका मूल्यांकन (हानिकारक कीट पर संभावित प्रभाव) भी किया जाता है। तत्पश्चात वैकल्पिक रूप से आगे के अध्ययन के लिए नए देश में उस प्राकृतिक शत्रु का आयात किया जा सकता है। इन प्राकृतिक शत्रुओं को आयात के बाद पहले एक या अधिक पीढ़ियों के लिए संगरोध में रखा जाना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि कोई अवांछनीय प्रजातियां गलती से आयात तो नहीं हुई (बीमारियां, परा–परजीवाभी इत्यादि)। अंतरराज्यीय स्थानांतरण और खेतों में छोड़ने के लिए अतिरिक्त परमिट की आवश्यकता होती है। जैविक नियंत्रण के लिए एक देश से दूसरे देश में जीव का पहला सफल आयात 1762 में हुआ जिसमें टिड्डी नियंत्रण के लिए भारत से मौरिशियस द्वीप में मैना पक्षी का निर्यात किया गया। भारत ने अब तक 166 विदेशी जैविक नियंत्रण कारकों का आयात किया है, जिनमें से विभिन्न कारणों से 33 का कभी भी उपयोग नहीं किया गया है और 71 को उपयोग करने के बाद पर्यावरण से वापिस पाया गया (अर्थात वे अब भी पनप रहे हैं)। मात्र छः कारकों ने उत्कृष्ट नियंत्रण, 7 ने पर्याप्त नियंत्रण और 4 ने आंशिक नियंत्रण प्रदान किया। दुनिया में पहली सफलता के बाद भारतीय मूल के छत्तीस परभक्षी/परजीवी कीटों ने अन्य देशों में भी अपनी उपयोगिता स्थापित की और 26 देशों में बड़े पैमाने पर समुचित योगदान कर रहे हैं। प्राप्तकर्ता देशों को पर्यावरण के अलावा आवर्ती आधार पर जैव विविधता की सुरक्षा भी प्रदान की।

जहां तक भारत में फसल कीटों के जैविक नियंत्रण का संबंध है, शायद पहला जानबूझकर प्रवेश किए जाने वाले फायदेमंद कोक्सीनेलिड परभक्षी, क्रिप्टोलिमस मॉन्ट्रोजेरी को जून 1898 में आयात किया गया था। इसने दक्षिण भारत में फलों, फसलों, कॉफी, शोभाप्रद पौधों पर लगने वाले विभिन्न मिलीबग (*प्लानोकोकस साइट्री, पी. लिलासिनास, फेरिसिया विरगाटा, मैकोनेलिकोकस हिर्सुटस*) आदि पर नियंत्रण किया है। यह 1979–81 के दौरान आई०सी०ए०आर० प्रयोगशाला द्वारा भूमि परियोजना के चरण 1 कार्यक्रम के माध्यम से छोटे और अत्यल्प किसानों को वितरित किया गया।

यह परभक्षी, आम, अमरूद, साइट्रस, अंगूर, शहतूत, कॉफी, अनार, शरीफा, बेर इत्यादि पर मिलीबग तथा चीकू, आम, अमरूद, बैंगन और क्रोटन पर लगे हरी शील्ड स्केल (*पुल्विनियारिया* एसपीपी) को दबाने में प्रभावी पाया गया है। *सी. मॉन्ट्रोजियेरी* अब वाणिज्यिक रूप से उत्पादित कर विभिन्न प्रकार के मिलीबग और स्केल कीड़ों के प्रबंधन के लिए उपयोग किया जाता है। *कोक्सीनेलिड बीटल रोडोलिया कार्डिनलिस* ने 1930 और 1941 में केसूरीना, वाटल और अन्य अकेसिया प्रजातियों पर कपास के कुशन स्केल, *आईसीरिया परचेजी* का उत्कृष्ट नियंत्रण प्रदान किया।

लेप्टोमास्टिक्स डैक्टिलॉपी परजीवी 1983 में उपनिवेशित हुआ जिसने कि सामान्य मिलीबग प्लानोकोकस साइट्री से बागानों को, कॉफी एवं शोभाप्रद पौधों को निरंतर सफलता पूर्वक राहत प्रदान की। विदेशी परजीवी एनकरसिया गौड़ालूपे 2001 से सफेद मक्खी, एलेरोडिकस डिसपरसस के फैलाव को केरल, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश के कई हिस्सों में सफलतापूर्वक रोकने के लिए उपनिवेशित किया गया है, जहां यह कीट मिलीबग की जनसंख्या को संवेदनशील रेखा के नीचे बनाए रखता है।

नवंबर 1988 में, *काक्सीनेल्लीड* भृंग, *क्यूरिनस कोरुलेयस* को बैंगलोर के आस–पास सुबबूल पर सुबबूल सिल्लिड, *एच. क्यूबाना* के खिलाफ सफलता पूर्वक उपनिवेशित किया गया था। इस परभक्षी कीट का प्रभाव कीटनाशी मोनोक्रोटोफास के मुकाबले में अच्छा रहा। तब से इस भृंग को कर्नाटक, केरल, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और मणिपुर में जारी और स्थापित किया गया है, जो टिकाऊ रूप से कुशलता पूर्वक एच. क्यूबाना का लागत प्रभावी और पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित नियंत्रण प्रदान कर रहा है। ब्राजील के कोचिनल कीट, *डैक्टिलोपियस सिलोनिकस* का भारत में उपयोग, पहला सफल पारम्परिक जैविक नियंत्रण का उदाहरण है। इस कीट का प्रयोग प्रिकली पियर नामक खरपतवार को नियंत्रित करने में भी किया गया था। जब कोचिनल कीट, *डी. सिलोनिकस* का ब्राजील से आयात किया गया तो इस कीट ने तेजी से लटकने वाली पियर पर अपने आप को स्थापित कर उत्तर और मध्य भारत में *ओपेंशिया वल्गारिस*, जो कि इसका प्राकृतिक मेजबान है, का शानदार दमन किया। 1863 से 1868 में इसे दक्षिणी भारत में लाया गया जहां इसने खरपतवार का सफलता पूर्वक नियंत्रण किया।

ओपनसिया स्ट्रीक्टा एवं *ओपनसिया एलाटीओर* नामक खरपतवार के नियंत्रण के लिए उत्तरी अमेरिकी कीट प्रजाति, *डैक्टिलोपियस ओपनसिए* को 1926 में श्रीलंका से आयात किया गया। इस कीट ने सराहनीय रूप से इन खरपतवारों का नियंत्रण किया। *क्राइसोमिलीड* भृंग, *जाइगोग्रामा बाइकोलोरेटा* को 1983 में मेक्सिको से गाजर घास, *पार्थेनियम हिस्टोरोफोरस* के जैविक दमन के लिए आयात किया गया था। *जाइगोग्रामा बाइकोलोराटा* को 1984 में जारी किया गया, लेकिन सितंबर 1988 में गाजर घास का असली अवशोषण स्पष्ट रूप से नजर आया था। *जाइगोग्रामा बाइकोलोराटा* ने बैंगलोर में

और उसके आसपास 2,00,000 वर्ग किमी से अधिक क्षेत्र में फैली गाजर घास का खात्मा किया और इस खरपतवार द्वारा दबाया गया पहले वाले मूल वनस्पति के विकास को प्रोत्साहित किया। बाद में इस भृंग को पूरे कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, केरल, जम्मू, मध्य प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और हिमाचल प्रदेश में स्थापित किया गया।

जलकुम्भी *ऐछोरनीइया क्रस्सिपेस* के जैविक दमन के लिए, विदेशी मूल का भृंग *नियोकिटिना एकोर्निए* एवं *नियोकिटिना ब्रूची* को 1993 में आंध्र प्रदेश, असम, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, मणिपुर, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल, लोकतक झील, मणिपुर सहित इंदिरा गांधी नहर, राजस्थान; टॉकलाई नदी, असम; मुलामुथा नदी, पुणे, महाराष्ट्र; पिचोला झील, उदयपुर में विभिन्न जल निकायों में सफलतापूर्वक उपनिवेशित किया गया था। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप देश के विभिन्न हिस्सों में इस भृंग की स्थापना हुई और जलकुम्भी से काफी हद तक निजात पाया गया। सिर्फ अकेले बैंगलोर में जलकुम्भी के नियंत्रण से सरकार को 11.2 लाख रुपये का लाभ हुआ।

विदेशी भृंग, *क्यर्तोबागौस साल्विनिया* को 1983–84 में बैंगलोर में लिली तालाब में पानी के फर्न, *साल्विनिआ मोलेस्टा* पर सफलतापूर्वक उपनिवेशित किया गया था। लिली तालाब में इस भृंग के 11 महीनों के भीतर साल्विनिआ पौधों को ध्वस्त कर दिया और साल्विनिआ से प्रतिस्पर्धा से दबी हुई लिली की फिर से वृद्धि हुई। तदन्तर केरल में इस भृंग के फैलाव के परिणामस्वरूप, तालाबों/टैंकों/नहरों/झीलों में इसकी स्थापना हुई और 3 वर्षों की अवधि के भीतर, खरपतवार खतरे के कारण छोड़ दिए गए अधिकांश नहर एक बार फिर से नाव्य (नाव/जहाज खेने योग्य) बन गए हैं। अब तक *सी. सेल्विनिया* द्वारा लगभग 2000 वर्ग कि०मी० क्षेत्र की सफाई हो चुकी है। धान की खेती में लगभग 235 रुपये (1998 में) प्रति हैक्टर की लागत खरपतवारों की हस्त निराई में आती थी। इस भृंग की खरपतवार नाशी क्रियाओं से केरल में लगभग 60.80 लाख रुपयों की सालाना बचत हुई जो कि हस्त निराई में खर्च की जाती थी।

çk—frd 'k=qvksa dh of)

प्राकृतिक शत्रुओं के जीवन चक्र को प्रत्यक्ष रूप से हेरफेर करने से उनकी जनसंख्या में हुई बढ़ोतरी को वृद्धि कहा जाता है। यह प्रक्रिया इन प्राकृतिक शत्रुओं के प्राकृतिक प्रभावों को बढ़ाती है। वृद्धि दो सामान्य विधियों में से एक या दोनों द्वारा पूरी की जा सकती है, बड़े पैमाने पर उनका उत्पादन और आवधिक उपनिवेशीकरण या प्राकृतिक शत्रुओं की अनुवांशिक वृद्धि। पहले दृष्टिकोण का ही सबसे अधिक उपयोग किया जाता है, जिसमें प्राकृतिक शत्रु कीटों को प्रयोगशाला में बड़े पैमाने में उत्पादन के बाद खेतों में उनका टीकाकरण या प्रचुर मात्रा में छोड़ कर विमोचन किया जाता है। उदाहरण के लिए, उन क्षेत्रों में जहां एक विशेष प्राकृतिक शत्रु ठंडी शीत ऋतु को पार नहीं कर सकते है, तो अगले बसंत ऋतु में कृत्रिम रूप से प्रयोगशाला में पैदा की गयी परजीवी/परभक्षिओं से खेतों का टीकाकरन किया जाता है। अंतर्निहित रिहाई में परजीवी/परभक्षिओं की बड़ी संख्या खेतों में छोड़ी जाती है जिससे कि उनकी जनसंख्या पूरी तरह से हानिकारक कीटों पर भारी पड़े और उनकी जनसंख्या से ज्यादा हो। जहां एक प्राकृतिक शत्रु की आबादी मौजूद नहीं होती है या कीट जनसंख्या के लिए पर्याप्त प्रतिक्रिया

नहीं दे सकती वहाँ वृद्धि आमतौर पर कीटों का स्थायी दमन प्रदान नहीं करती है, वहाँ आयात या संरक्षण विधियों द्वारा यह संभव हो सकता है।

टीकाकरण विधि का एक उदाहरण है ग्रीनहाउस सफेद मक्खी (*ट्रायलेरोड्स वापोरीरियम*) जिसकी आबादी को दबाने के लिए एक परजीवी ततैया, *एनकर्सिया फॉर्मोसा* का गहन उपयोग किया गया। ग्रीनहाउस सफेद मक्खी सब्जियों और फूलों की खेती की फसलों की एक सर्वव्यापी कीट है जिसका कि कीटनाशकों के साथ भी प्रबंधन करना मुश्किल है। ग्रीनहाउस फसल पर पहली सफेद मक्खी दिखने के तुरंत बाद ही *ई. फॉर्मोसा* की अपेक्षाकृत कम घनत्व (फसल के आधार पर प्रति पौधे 0.25 से 3) की विज्ञप्ति, प्रभावी रूप से हानिकारक कीट के जनसंख्या वृद्धि स्तरों को रोक सकती है। यद्यपि परजीवी का उपयोग एक "एकीकृत फसल प्रबंधन" कार्यक्रम के संदर्भ में ही किया जाना चाहिए क्योंकि परजीवी में कीटनाशी के लिए कम सहनशीलता को ध्यान में रखना होता है।

çk—frd 'k=qvksa dk lajk{k.k

किसी भी जैविक नियंत्रण प्रयास में, प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण एक महत्वपूर्ण घटक है। इसमें कारक की पहचान करना शामिल है जो किसी विशेष प्राकृतिक शत्रु की प्रभावशीलता को सीमित कर सकता है और लाभकारी प्रजातियों की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए उन्हें संशोधित कर सकता है। सामान्य रूप से, प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण में या तो प्राकृतिक कारकों में हस्तक्षेप करने वाले कारकों को कम करना या प्राकृतिक वातावरण को अपने पर्यावरण में आवश्यक संसाधन प्रदान करना शामिल है।

कई कारक प्राकृतिक शत्रु की प्रभावशीलता में हस्तक्षेप कर सकते हैं। कीटनाशक अनुप्रयोग सीधे प्राकृतिक शत्रुओं को मार सकते हैं या मेजबानों की संख्या या उपलब्धता में कमी के माध्यम से अप्रत्यक्ष प्रभाव डाल सकते हैं। विभिन्न सांस्कृतिक प्रथाएं जैसे कि फसल के मलबे को जलाने से या जलने से प्राकृतिक शत्रुओं की मुत्यु हो सकती है या फसल में उनका आवास अनुपयुक्त हो सकता है। बागानों में, दोहरायी जाने वाली सांस्कृतिक प्रथाओं से पत्तियों पर धूल जमा हो जाती है, छोटे परभक्षियों और परजीवियों की मृत्यु हो जाती है और कुछ कीट और पतंगे जो कभी हानिकारक नहीं थे, उनकी जनसंख्या में वृद्धि हो जाती है और फसल प्रोकोपित हो जाती है। एक अध्ययन में, नींबू प्रजाति के पेड़ों के पत्तों की आवधिक धुलाई के परिणामस्वरूप कैलिफोर्निया लाल स्केल *आओनिडीएल्ला औरणटी* पर परजीवी दक्षता बढ़ने से जैविक नियंत्रण में वृद्धि हुई है। अंत में, मेजबान पौधों के रासायनिक प्रतिरोध क्षमता का प्रभाव जो प्राकृतिक शत्रुओं के लिए हानिकारक हैं, लेकिन हानिकारक कीट अनुकूलित होता है। इस तरह के मेजबान पौधों की प्रतिक्रिया जैविक नियंत्रण की प्रभावशीलता को कम कर सकती हैं। कुछ कीट अपने मेजबान पौधे के जहरीले घटकों को अनुक्रमित करने में सक्षम होते हैं और उन्हें अपने शत्रुओं के खिलाफ रक्षा के रूप में उपयोग करते हैं। अन्य मामलों में, मेजबान पौधे की भौतिक विशेषताएं, जैसे पत्ती पर बालों का होना, प्राकृतिक शत्रु की मेजबानों को खोजने और हमला करने की क्षमता को कम कर सकती हैं।

प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण के लिए यह सुनिश्चित करना अति आवश्यक है कि उनकी पारिस्थितिक आवश्यकताओं को फसल पर्यावरण में पूरा किया जाए। प्रभावी होने के लिए, प्राकृतिक शत्रुओं की पहुंच वैकल्पिक मेजबान तक, वयस्क कीट की खाद्य संसाधन की पूर्ति की आवश्यकता होती है। शीतकालीन

आवास, निरंतर खाद्य आपूर्ति इत्यादि बहुत महत्वपूर्ण हैं। अक्सर यह देखा गया है कि ठंडी शीत काल में परजीवी/परभक्षी मर जाते हैं, उनके लिए छिपने का कोई अनुकूल स्थान नहीं होता है, यदि उनको छिपने का स्थान मिल जाए तो उन्हें बचाया जा सकता है एवं अगले फसल के मौसम में पहले से ही वे खेत में मौजूद होंगे और हानिकारक कीट की जनसंख्या वृद्धि पर अंकुश लगा देंगे।

t|fod fu;=.k d| or|eku vuç;kx

जैविक नियंत्रण एक रोमांचक विज्ञान है क्योंकि यह लगातार नए ज्ञान और तकनीकों को शामिल करता है। इस खंड में हम कई तरीकों को चित्रित करेंगे जिसमें जैविक नियंत्रण का दृष्टिकोण आज की कीट प्रबंधन चुनौतियों को पूरा करने के लिए अनुकूल है।

çk—frd 'k=|vk| d| c<u| e| vk/kfud –f"Vdk.k

चूंकि अधिकतर वृद्धि में प्राकृतिक शत्रुओं के बड़े पैमाने पर उत्पादन और आवधिक उपनिवेश शामिल होते हैं, इस प्रकार के जैविक नियंत्रण ने खुद को व्यावसायिक विकास के लिए उपलब्ध कराया है। सैकड़ों जैविक नियंत्रण उत्पाद दर्जनों कीट अकशेरुकी, कशेरुकी, खरपतवार, और पौधे रोगजनकों के लिए वाणिज्यिक रूप से उपलब्ध हैं।

संवर्द्धन का प्रयास/अभ्यास आयात और संरक्षण से अलग है, जिसमें जैविक नियंत्रण में सुधार के लिए कृषि पारितंत्र में स्थायी परिवर्तन करना प्राथमिक लक्ष्य नहीं है। इसके बजाय, वृद्धि आमतौर पर मौजूदा शत्रुओं को मौजूदा उत्पादन प्रणालियों के लायक बनाने में सहायता करती है। उदाहरण के लिए, परभक्षी कुटकी *मेटासियुलस औक्सीडेंटलिस* के समूह, (जो कि प्रयोगशालाओं में कीटनाशकों से ज्यादा प्रतिरोध क्षमता रखनेवाले हों) को आम तौर पर बागानों में एक एकीकृत पतंग प्रबंधन कार्यक्रम में उपयोग किया था। इस कार्यक्रम से आम तौर पर इस्तेमाल होने वाले कीटनाशकों की मात्रा में कमी आई है। कई परभक्षी/परजीवियों का आनुवांशिक सुधार पारंपरिक चयन विधियों के साथ किया गया है, और यह सुधार पुनः संयोजक डी.एन.ए. प्रौद्योगिकी के साथ भी संभव प्रतीत होता है।

संवर्द्धन अभ्यास का एक उत्कृष्ट उदाहरण *ट्राइकोग्रामा ततैया* है, जो कि विभिन्न प्रकार के कृषि प्रणालियों के लिए सफलतापूर्वक अनुकूलित किया गया है। प्रकोपित फसलों एवं जंगलों को हानिकारक कीटों से बचाने के लिए इन अंडपरजीविओं को करोड़ो की संख्या में खेतों में छोड़ा जाता है। *ट्राइकोग्रामा ततैया* हानिकारक कीटों का एक ऐसा प्राकृतिक शत्रु है जिसका कि कीट जैविक नियंत्रण में लगभग 70 देशों में बड़े पैमाने में उत्पादन एवं अनुप्रयोग किया जाता है। दुनिया भर में, *ट्राइकोग्रामा ततैया* की प्रजातियों से सालाना 3.2 करोड़ हैक्टर से अधिक कृषि फसलों और जंगलों का इलाज किया जाता है, खास तौर से 19 देशों में, जिसमें ज्यादातर चीन और पूर्व सोवियत संघ के गणराज्य देश शामिल है।

चीन में, कृषि उत्पादन और कीट प्रबंधन प्रणाली कम श्रम लागत पर पूंजीकृत होती हैं और आम तौर पर अत्यधिक नवीन और तकनीकी रूप से सरल प्रक्रियाओं का पालन करती हैं। उदाहरण के लिए, *ट्राइकोग्रामा ततैया* की प्रजातियाँ जो गन्ना तना छेदक, काइलो प्रजातियों की बढ़ती जनसंख्या को दबाने के लिए बहुत अधिक मात्र जारी किए जाते हैं। बारिश से बचाने के लिए इन परजीवियों को छोटे–छोटे प्लास्टिक की थैलियों में रखकर फसल में छोड़ा जाता है। चीन में अधिकांश *ट्राइकोग्रामा*

ततैया का उत्पादन विशेष रूप से स्थानीयकृत क्षेत्र के लिए किया जाता है। इन व्यापक स्तर पर परजीवी उत्पादन में स्थानीय सुविधायों को प्रयोग में लाया जाता है जैसे खुली हवा में कीट पालन से ले कर अत्याधुनिक मशीनीकृत सुविधाएँ। चीन इस प्रक्रिया में सबसे ज्यादा विकसित है, उन्होने अंडपरजीवियों के उत्पादन के लिया कृत्रिम मेजबान अंडे बनाने में बहुत विकास किया है।

जैविक नियंत्रण के व्यापक कार्यान्वयन की प्रमुख बाधाओं में से एक सामाजिक–अर्थशास्त्र रहा है। वर्तमान में बड़े पैमाने पर कृषि उत्पादन प्रणालियों में दक्षता और पैमाने का लाभांश अर्थव्यवस्था पर रखा जाता है। संपूर्ण कृषि समर्थन उद्योग के अनुप्रयोग के आसपास विकसित किया है, जिसमें अनुप्रयोग उपकरण निर्माण, वितरण और बिक्री, साथ ही साथ संप्रयोग सेवाएं भी शामिल हैं। जैविक नियंत्रण उत्पादों को कीटनाशकों के साथ दृढ़ता से प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता होनी चाहिए। आदर्श रूप में, उन्हें कीटनाशकों के रूप में प्रभावी होना चाहिए, अवशिष्ट गतिविधि होनी चाहिए, उपयोग में आसान होना चाहिए, और पारंपरिक अनुप्रयोग उपकरण के साथ बड़े पैमाने पर उन्हें प्रयोग करने की क्षमता होनी चाहिए।

पश्चिमी यूरोप में, लगभग दो दशकों के गहन शोध के परिणामस्वरूप मकई के खेतों में मकई छेदक, ओस्ट्रिना नूबिलालिस के नियंत्रण के लिए यूरोपीय मूल के *ट्राइकोग्रामा ब्रासिके* उपयोग करने वाले तीन उत्पादों का वाणिज्यिक विपणन हुआ। इन उत्पादों को सालाना स्विट्जरलैंड और जर्मनी में लगभग 7000 हैक्टर, ऑस्ट्रिया में 150 हैक्टर और फ्रांस में 15000 हैक्टर पर इस्तेमाल किया जाता है। सभी तीन उत्पाद प्लास्टिक या कागज से निर्मित थैलियों पर आधारित हैं जो क्षेत्र में रिहा होने के समय मौसम खराब होने पर भी परजीवियों को सुरक्षा प्रदान करंगे।

यूरोपीय *ट्राइकोग्रामा* उत्पाद भी उपरोक्त चीनी उदाहरण की तरह फसल/खेतों में हस्त से प्रसारित किए जाते हैं। एक अपवाद उत्पाद है, जिसे ट्राइकोकैप्स कहा जाता है, परंपरागत अनुप्रयोग उपकरण का उपयोग करके या तो हस्त से या विमान द्वारा प्रसारित किया जा सकता है। ट्राइकोकैप्स पैकेट वास्तव में खोखले अखरोट के आकार वाले कार्डबोर्ड कैप्सूल (2 से.मी. व्यास) होते हैं जिनमें प्रत्येक में लगभग 500 परजीवी युक्त भूमध्यसागरीय आटा पतंगा *एफिस्टिया कुहेनिएल्ला* के अंडे होते हैं। इस कैप्सूल के अंदर *ट्राइकोग्रामा* को विकसित करने से ततैये बड़े आराम से शीत काल बिता लेता है। और फिर गुणवत्ता के नुकसान के बिना ही नौ महीने तक ठंडी स्थितियों में संग्रहित किया जाता है। यह प्रणाली सर्दियों के महीनों के दौरान उत्पाद के उत्पादन की अनुमति देती है, फिर गर्मियों में आवश्यकता होने पर उत्पादकों को वितरण की अनुमति देता है। ठंडे भंडारण से निकाले जाने के बाद, कैप्सूल के अंदर *ट्राइकोग्रामा* विकास शुरू कर देता है और लगभग 100 डिग्री सेल्सियस दिन के बाद में निकलना शुरू कर देता है। इस प्रक्रिया के साथ छेड़छाड़ की जा सकती है ताकि विभिन्न विकास चरणों में ट्राइकोग्रामा युक्त कैप्सूल एक ही समय में खेतों में प्रसारित हो सकें, परजीवी की उभरती अवधि को बढ़ाया जा सके और एक ही अनुप्रयोग की गतिविधि को लगभग एक सप्ताह तक बढ़ाया जा सके। अनुप्रयोग के लिए उत्पाद की योजना और तैयारी कंपनी द्वारा की जाती है ताकि उत्पादक केवल फसल के खेतों में उत्पाद प्रयोग के लिए जिम्मेदार हों।

ifj–'; ikfjfLFkfrdh vkj çk–frd 'k=qvksa dk laj{k.k

परिदृश्य पारिस्थितिकी एक ऐसे समुदाय की गतिशीलता में आनेवाली बाधाएँ और उनके प्रभाव का अध्ययन है जो कि विज्ञान के जगत में एक नए अंकुर के समान है। परिदृश्य पारिस्थितिकी ही हमें एक नई दिशा में प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण के बारे में सोचने के नए – नए तरीकों से अवगत कराती है। पिछले 20 वर्षों में पारिस्थितिकीय समुदायों की गतिशीलता में आने वाली बाधाओं को पारिस्थितिकीविदों ने पहचान लिया है (उदाहरण के लिए घास के मैदानों में या जंगलों में आग) जो कि इस संरचना की स्थिरता को भंग करती है। लेकिन कृषि जनित इकाइयों में हर मौसम या साल में कई बार परिदृश्य पारिस्थितिकी की स्थिरता नष्ट होती है, क्योंकि हर फसल के काटने के बाद अगली फसल से पहले पलेवा किया जाता है, इससे जो प्राकृतिक शत्रुओं की प्रजातियाँ पनपने लगती है, उनका निवास स्थान नष्ट हो जाता है और वे बेघर होकर मर जाते हैं। साथ ही कई कृषि पारिस्थितिक तंत्र (जैसे हल चलाना, रोपण, पोषक तत्व और कीटनाशक का अनुप्रयोग) के कई कार्यक्रमों से उनमें रहने वाले जीव समुदायों का आपसी समन्वय टूट जाता है। पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से, अत्यधिक कृषि प्रणालियों की वजह से प्रजातियों की विविधता और विभिन्न खाद्य श्रृंखलाओं में कमी आ जाती है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ अच्छी तरह से अनुकूलित प्रजातियां (यानी कीट) अच्छी तरह से पनपने लगती हैं, क्योंकि उनके प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या कम हो जाती है और उनकी बढ़ती जनसंख्या को दबाने के लिए किसान कीटनाशकों का प्रयोग करते हैं। यह एक विषम चक्र बन कर रह जाता है जो कि कभी खत्म नहीं होता। इसके लिए जैसे ही अतिरिक्त परेशानी (हानिकारक कीटों का प्रकोप) की शुरुआत हो उनका पुनर्मूल्यांकन करके नियंत्रण (यानी कीटनाशकों के प्रयोग) की प्रक्रियाओं को शुरू किया जाना चाहिए। क्योंकि प्रारंभिक नकारात्मक लक्षण को नियंत्रण करने के लिया बहुत थोड़ी मात्रा में कीटनाशकों की जरूरत होती है जिस से पर्यावरण को अधिक हानि नहीं पहुँचती है।

फसल उत्पादन की वर्तमान प्रणाली भी हमारे कृषि परिदृश्य की भौतिक संरचना को आकार देती है। मशीनीकरण और कीटनाशकों पर निर्भरता के साथ, खेतों में विविधता तेजी से गायब हो गई है और प्राकृतिक शत्रुओं पर होने वाले प्रभाव को केवल अब समझे जा रहे हें। सामान्य रूप से बढ़ी हुई आवास विखंडन, अलगाव और कम परिदृश्य संरचना की जटिलता, पारस्परिक जैविक क्रियाओं को अस्थिर कर देती है जो प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र को नियंत्रित करने के लिए काम करती है।

जैविक नियंत्रण संरक्षण के लिए पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण का लक्ष्य उस बिंदु तक विघ्न की प्रबलता और आवृत्ति को संशोधित करना है जहां प्राकृतिक शत्रु प्रभावी ढंग से कार्य कर सकते हैं। यह सब क्षेत्र, खेत और बड़े परिदृश्य–स्तर पर होने की आवश्यकता है। खेतों में जुताई की गहनता और आवृत्ति (कम जुताई या बिना–जुताई) में परिवर्तन करने से मिट्टी की सतह पर अधिक पौधे के अवशेष मिलेंगे तथा इस तरह परभक्षी/परजीवियों (परभक्षी भृंग और मकड़ियों) पर सकारात्मक प्रभाव डाला जा सकता है। अंतर–फसल से खेतों की सूक्ष्म वातावरण को संशोधित कर परजीवियों के लिए अधिक अनुकूल बनाया जा सकता है।

खेत के स्तर पर, गैर–फसल (नॉन–क्रॉप) आवासों की उपस्थिति और उनका वितरण प्राकृतिक शत्रु के अस्तित्व के लिए अक्सर महत्वपूर्ण हो सकता है। *एरिबोरस टेरेब्रानस* एक ततैया है जो यूरोपीय

मकई तना छेदक इल्ली का परजीवी है। मादा *एरिबोरस* को मध्यम तापमान (78^0 से.) और शक्कर स्रोत (फूल पौधों के सुधा या माहू मधुरस) की आवश्यकता होती है। ये परिस्थितियां किसी भी पारंपरिक रूप से प्रबंधित मकई क्षेत्र में नहीं मिलती है। इसलिए, ततैया अवांछनीय बेड़ा वाले पौधों की कतारों और जंगलों में बेड़ों के आसपास उगने वाले पौधों एवं अन्य खरपतवार में अधिक आश्रय वाले स्थानों की तलाश करती है जहां उन्हें कम तापमान, उच्च सापेक्ष आर्द्रता और वयस्क के लिए भोजन के प्रचुर स्रोत मिलते हैं। इस प्रकार के आवासों के पास के खेतों में परभक्षी/परजीवियों की मारक दर अन्य जगहों की तुलना में 2.5–3.0 गुना अधिक होती है। वर्तमान जैविक नियंत्रण शोध इन्हीं महत्वपूर्ण संसाधनों को प्रदान करने और इनका भरपूर लाभ लेने में प्रयासर है। अंतर–फसल, पट्टी फसल, साथ ही साथ घास के जलमार्गों, आश्रय–पट्टी, आघात–भंजक और जल धाराओं का तटीय क्षेत्रों में संशोधन करने से काफी हद तक इस समस्या से निपटा जा सकता है।

अंत में, भू–स्तर पर, कृषि उत्पादन प्रणालियों की भौतिक संरचना कीट और प्राकृतिक शत्रु की विविधता और बहुतायत को भी प्रभावित कर सकती है। एक अध्ययन में, सरल बनाम पच्चीकारी परिदृश्य से निष्कर्ष निकला कि प्राकृतिक शत्रु, कीटों की तुलना में शरण स्थल पर अधिक निर्भर हैं। और पच्चीकारी परिदृश्य में इन शरण स्थल की प्रचुरता के परिणामस्वरूप प्राकृतिक शत्रुओं का बहुतायत एवं विविधता में देखा गया है, जिसकी वजह से प्राकृतिक शत्रु शिकार की बढ़ती संख्याओं से निपटने में सक्षम होते हैं। एक अध्ययन में जटिल परिदृश्य बनाम सरल कृषि परिदृश्य में सैन्य इल्ली, *स्यूडेलिशिया यूनिपंकटा* के परजीवीवाद की जांच की। जटिल जगहों में कुल मिलाकर परजीवीकरण सरल जगहों (13.1% बनाम 3.4%) की तुलना में तीन गुना अधिक पाया गया।

अतीत में, संरक्षण के लिए आम तौर पर एक समय में एक प्रजाति को ही लिया जाता था, जो कि किसी विशेष प्रणाली में सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक शत्रु की जरूरतों को पूरा करने पर ध्यान केंद्रित करता था। हालांकि यह एक बेहद उपयोगी दृष्टिकोण है, अब विज्ञान की नई तकनीकों की सहायता से यह संभव है कि प्राकृतिक शत्रुओं के पूरे समुदायों की प्रभावशीलता को और बढ़ाने के लिए बुनियादी पारिस्थितिक सिद्धांतों का प्रयोग करते हुए संरक्षण एवं प्रबंधन करें।

fu"d"k

प्राकृतिक शत्रुओं का आयात, संवर्द्धन और संरक्षण, कीड़ों के जैविक नियंत्रण के तीन बुनियादी दृष्टिकोण हैं। कीट प्रबंधन की बदलती जरूरतों को पूरा करने के लिए इन दृष्टिकोणों के भीतर विशिष्ट तकनीकों को लगातार विकसित और अनुकूलित किया जा रहा है। पालन पोषण और जारी की गई तकनीकों में सुधार और प्राकृतिक शत्रुओं के आनुवंशिक सुधार के परिणामस्वरूप अधिक प्रभावी वृद्धि कार्यक्रम हुए हैं। नए पारिस्थितिकीय सिद्धांत का उपयोग प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण को देखने के तरीके को बदल रहा है। जैविक नियंत्रण पर आधारित कीट प्रबंधन रणनीति की पूरी क्षमता को कार्यान्वित करने के लिए जैविक नियंत्रण दृष्टिकोण और अनुप्रयोगों में निरंतर संशोधन एवं रूपान्तरण आवश्यक है।

पीड़क प्रबंधन के लिए पीड़कनाशक सूत्रीकरण

धुबा ज्योति सरकार, नज्म अख़तर शकील और जितेंद्र कुमार*
कृषि रसायन संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012
*आईपीएफटी, गुरुग्राम, हरियाणा

कृषि उत्पादन और सार्वजनिक स्वास्थ्य को बनाए रखने और बेहतर बनाने के लिए पीड़कनाशकों को महत्वपूर्ण कृषि उत्पादक सामग्री माना जाता है। पीड़कों जैसे – कीटों, मूषक, रोगों और खरपतवारों के आक्रमण के कारण कृषि उपज में भारी मात्रा में हानि होती है। जलवायु और पर्यावरणीय स्थितियों एवं हमले की गंभीरता के आधार पर कीटों के हमले के कारण 10 से 30% वार्षिक नुकसान होता है। भारत में पीड़कनाशकों की खपत अभी भी सबसे कम है। वर्तमान में, उपयोग के लिए लगभग 272 पीड़कनाशक पंजीकृत हैं, और उत्पादन लगभग 90,000 मीट्रिक टन तक बढ़ गया है। भारत में कीटनाशकों की प्रति हैक्टर खपत (400 ग्राम/हैक्टर) विश्व औसत (500 ग्राम/हैक्टर) से कम है। इसका मुख्य कारण है – खंडित कृषि भूमि, मानसून पर निर्भरता और पीड़कनाशकों के विवेकपूर्ण उपयोग के लाभों के बारे में किसानों में कम जागरुकता है। भारत में चावल में सबसे अधिक मात्रा में पीड़कनाशक का प्रयोग होता है (कुल कीटनाशकों का 25.9%)।

संश्लिष्ट पीड़कनाशकों को मुख्य तौर पर कीटनाशकों (कीटों के खिलाफ उपयोग किया जाता है), खरपतवारनाशी (खरपतवार को मारने और नियंत्रित करने के लिए), और कवकनाशी (कवकों से होने वाली बीमारियों के विरुद्ध) में वर्गीकृत किया जा सकता है। कृषि संबंधी महत्वपूर्ण कीटों के नियंत्रण के लिए प्रयोग किए जाने वाले कीटनाशकों के प्रमुख समूहों में *ऑर्गोफॉस्फेट्स, ऑर्गोक्लोराइन, कार्बामेट्स, सिंथेटिक पाइरेथ्रोइड्स, नियोनिकोटेनोइड्स* और अन्य शामिल हैं। भारत में सबसे अधिक खपत किए जाने वाले कीटनाशकों में मोनोक्रोटोफोस, एंडोसल्फान, फोराट, क्लोरपायरीफोस, मिथाइल पैराथियान, क्विनालफोस, मैनकोजेब, पैराक्वाट, बुटाक्लोर, आइसोप्रोटुरोन और फॉस्फैमिडन शामिल हैं। मूल्य के संदर्भ में, ऑर्गनोफोस्फेट्स प्रमुख हैं (50%), इसके बाद सिंथेटिक पाइरेथ्रोइड्स (19%), ऑर्गनोक्लोरिन्स (16%), कार्बामेट्स (4%), और बायोपेस्टीसाइड (1%)। भारत में कीटनाशक के उपयोग में वैश्विक स्तर पर एक अलग स्वरूप देखा गया है । दुनिया में 32% की तुलना में भारत में कीटनाशक का उपयोग लगभग 53% है, जबकि दुनिया भर में 47% की तुलना में खरपतवारनाशी का उपयोग केवल 24% है। हस्त से खरपतवार निकालना एक महत्वपूर्ण कृषि कार्य है जिससे भारत में लाखों गरीब कृषि श्रमिकों, खासकर महिलाओं को रोजगार मिलता है। भारत में वैश्विक खपत का 45% कार्बामेट और सिंथेटिक पाइरेथ्रोइड्स तथा 50% ऑर्गनोफोस्फेट्स का हिस्सा उपयोग होता है। हालाँकि, जैव कीटनाशकों का हिस्सा कुल कीटनाशकों का केवल 1% है।

तकनीकी कीटनाशक यौगिकों का उपयोग करने से पहले तैयार किया जाता है, सक्रिय संघटक (a.i.) को निष्क्रिय सामग्री और या अन्य सहौषधि/सहौषधि सामग्री के साथ मिलाकर, एक उत्पाद

प्राप्त करना जो कि संतोषजनक, अचल जीवन के साथ और अवांछनीय दुष्प्रभावों के बिना, प्रभावी, तथा जिसको संभालना और लागू करना आसान हो। पीड़कनाशक सूत्रीकरण को परिभाषित किया गया है – बिक्री के लिए तैयार पीड़कनाशक उत्पाद। इसमें आम तौर पर सक्रिय संघटक (संघटको), सहौषधि और अन्य फॉर्मूलांट्स शामिल होते हैं, जो उत्पाद के लिए उपयोगी और प्रभावी तरीके से दावा किए गए उद्देश्य (एफएओ, 1986) को पूरा करते हैं। पीड़कनाशक सूत्रीकरण शब्द विभिन्न पीड़कनाशक उत्पादों का विकास, उत्पादन, प्रयोग, भंडारण और अनुप्रयोग शामिल है और विकसित उत्पादों में सक्रिय संघटक की कीटों, पौधों, स्तनधारियों, सूक्ष्मजीवों, मिट्टी, पानी, हवा आदि से जुड़े विभिन्न घटकों के साथ संतोषजनक सहभागिता की आवश्यकता होती है।

तकनीकी पीड़कनाशक के सूत्रीकरण के कई उद्देश्य हैं, महत्वपूर्ण हैं सर्वोत्तम खुराक, पूरा खेत तय करना, द्रव्यमान और संवेग उत्पन्न करना। सूत्रीकरण, उचित खुराक के साथ कीटनाशकों के अनुप्रयोग को सक्षम बनाता है ताकि उत्पाद को लक्षित फसल और सर्वोत्तम द्रव्यमान और गति पर एक अपेक्षित व्याप्ति प्रदान किया जा सके, जो पीड़क नियंत्रण के महत्वपूर्ण कारक हैं। सूत्रीकरण पीड़कनाशक के आर्थिक, कुशल और सुरक्षित उपयोग को भी सक्षम बनाता है। एक सूत्रीकरण का नुकसान और खतरा तकनीकी सामग्री के उपयोग की तुलना में बहुत कम होता है। इसी तरह एक सूत्रीकरण (तनुकरीत उत्पाद) को संभालना तकनीकी (गाढ़े) उत्पाद को संभालने की तुलना में श्रमिकों के लिए अधिक सुरक्षित है। उपचारित फसल पर सूत्रीकरण सुरक्षा में और सुधार किया जा सकता है। सुरक्षित सूत्रीकरण बनाने के लिए कई प्रकार की सहौषधि उदाहरण के लिए– आकर्षित करने वाले, सहक्रियाकार, फसल सुरक्षित सामग्री को सूत्रीकरण में मिलाया जाता है जिससे बायोसेफ्टी व चयनात्मकता में सुधार होता है। पीड़कनाशक सूत्रीकरण को समग्र रूप, भौतिक प्रणाली और अनुप्रयोग के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है।

Bkl l=hdj.k

/ky ¼Dust½ ¼D½

एक बारीक पीड़कनाशक धूल, जो तनु (डाईलुएन्ट)/वाहक, सतह सक्रिय घटकों और सहायक सहौषधि जैसे कि स्टिकर, डिएक्टिवेटर्स आदि के साथ या बिना बनाया जाता है। धूल के लिए उपयुक्त बहाव अति आवश्यक है। धूल को निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया गया है:

lh/k /ky&lkexh (Staright Dust)

यह किसी भी तनु या वाहक के साथ या बिना पीस कर बनाई गयी महीन धूल है। पाइरेथ्रम धूल, सल्फर धूल आदि इनकी संकेंद्रण 1–10% तक होती है।

ldfUær ;k lnf"kr /ky (Dust Concentrates)

ये एक वाहक के अत्यधिक सोखने वाले कणों को पीड़कनाशक के पिघले या संकेन्द्रित घोल के साथ संसेचित या लेपित करके तैयार की जाती हैं। इन धूलों की संकेंद्रण वाहक की क्षमता के साथ–साथ रासायनिक क्षमता पर निर्भर करती है। आम तौर पर संकेंद्रण 25 से 75% तक होती है एवं तनु द्वारा उपयोग से पहले वांछित संकेंद्रण क्षेत्र शक्ति प्राप्त किया जा सकता है। धूल में कण का आकार

आमतौर पर 75 माइक्रोमीटर होता है। धूल को तैयार करने में वाहक या तनु के रूप में उपयोग की जाने वाली सामग्री विभिन्न मिट्टी के खनिज हैं जैसे कि अटापुलगाइट, मॉन्टमोरोलाइट, काओलीनाईट डायटोमेसियस पृथ्वी, अबरक आदि।

धूल बनाने के लिए किसी परिष्कृत उपकरण की आवश्यकता नहीं है, यह सस्ती व कम जहरीली है। इसका छिड़काव करना भी आसान है। धूल कम पानी वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। धूल की त्वचीय विषाक्तता भी कम होती है। परन्तु दूसरी ओर धुल के कुछ नुकसान है जैसे – महंगा परिवहन या प्रबंध, अधिक बहाव संवेदनशीलता, बारिश, हवा या गुरुत्वाकर्षण से धूलने के कारण फसल पर कम जमाव, साँस के साथ फेफड़े में जाने का खतरा, कम अवशिष्ट जीवन के कारण कीट को नियंत्रित करने के लिए बार–बार छिड़काव करना इत्यादि है। भंडारण या परिवहन के दौरान सक्रिय अवयवों एवं तनु कणों के पृथक्करण की अधिक जोखिम होती है।

çokg jfgr /kwy ¼fMª¶Vysl MLV½ (DL)

पारंपरिक धूल के बहाव की समस्या को हल करने के लिए प्रवाह रहित (ड्रिफ्टलेस डस्ट) का विकास किया गया था। डीएल–धूल का औसत कण व्यास 20–30 माइक्रोन है जबकि यह पारंपरिक धूल में 10–12 माइक्रोन होता है।

eghu /kwy (fine dust)

महीन धूल सूत्रीकरण की एक अनूठी विशेषता ग्रीनहाउस में उनकी कम मात्रा का अनुप्रयोग है। 5 माइक्रोन से कम के व्यास वाले सूत्रीकरण को 300–500 ग्राम/1000 मी^{2} की दर से एक बिजली वाले नैप्सैक द्वारा ग्रीनहाउस में डाला जाता है। महीन धूल की एक अच्छी प्रवाह क्षमता के कारण, पत्तियों के निचले हिस्से को भी उपचारित किया जा सकता है।

oÙkkCys ikmMj ¼MCY;wih½

इनमें विषाक्त, तनु और कुछ सतह सक्रिय घटक जैसे सेटिंग एजेंट शामिल हैं। पाउडर के कण गीले हो जाते हैं और पानी में समा जाते हैं जब तक कि कुछ फैलाने वाला घटक नहीं डाला जाये।

ikuh QSykus okyk ikmMj ¼MCY;wMhih½

सूखे पीड़कनाशक को पृष्ठसक्रियकारक (सर्फैक्टेंट) के साथ, अक्सर एक महीन ठोस वाहक के साथ मिश्रित या लेपित किया जाता है जो पानी में फैलने के बाद निलंबन बनता है। इनमें भंडारण के दौरान कुछ सहायक जैसे कि पिण्डन या एकत्रीकरण निरोधक कारक भी होते हैं। ठोस स्प्रे सूत्रीकरण के बीच यह एक सामान्य रूप है जो कीट नियंत्रण के लिए कृषि में उपयोग किया जाता है। डब्ल्यूडीपी में सक्रिय अवयव 10–75% से तक होता है। इस प्रकार का सूत्रीकरण मिश्रण को पीसकर या उच्च सांद्रता वाहक (5 माइक्रोन) के साथ विषाक्तता के साथ उच्च सांद्रता जैसे सिंथेटिक सिलिका के लिए भी तैयार किया जा सकता है जो कि हथौड़ा या माइक्रोनाइजिंग के दौरान सक्रिय अवयवों के संलयन को रोकता है। डब्ल्यूडीपी लाभप्रद है क्योंकि जहां स्प्रे घोल का हिलाना संभव नहीं है वहां उनका उपयोग अधिकांश कीट समस्याओं के लिए और अधिकांश प्रकार की स्प्रे मशीनरी में किया जा सकता

है। ये सस्ते हैं, भण्डारण करना आसान है, कम परिवहन और रखरखाव में सुविधाजनक है, कम वनस्पति विषाक्तता है, ई.सी. और अन्य सूत्रीकरण की तुलना में त्वचा और आंख अवशोषण कम होता है।

df.kdk,¡ (Granules) (G)

दानेदार सूत्रीकरण धूल सूत्रीकरण के समान हैं सिवाय इसके कि दानेदार कण बड़े और भारी होते हैं। मोटे कणों को अवशोषित सामग्री जैसे मिट्टी, मकई के गोले या अखरोट के गोले से बनाया जाता है। सक्रिय संघटक या तो कणिकाओं के बाहर लेपित किया जाता है या उनमें अवशोषित किया जाता है। सक्रिय संघटक की मात्रा अपेक्षाकृत कम है, आमतौर पर 1 से 10% होती है और रसायन की प्रभावकारिता, अनुप्रयोग की दर, कण के आकार आदि पर निर्भर करती है। कणिकाओं को जाल आकार द्वारा वर्गीकृत किया गया है जैसे 8/16, 15/30, 30/60 आदि 8/16 का मतलब है कि लगभग 90% दाने 8 जाल छलनी से गुजरते हैं और एक 16 जाल छलनी द्वारा रोके जाते है। यह सीधे मिट्टी में या साधारण आवेदन उपकरण के साथ फसल में डाला जा सकता है। प्रवाह खतरा कम है क्योंकि कण जल्दी से स्थिर हो जाते हैं। os WP या EC से अधिक अनवरत हैं। हालांकि, वे पत्ते पर उपयोग के लिए अनुपयुक्त हैं और मिट्टी पर अवशोषण के कारण कम जैविक गतिविधि देते है। पीड़कनाशक क्रिया को सक्रिय करने के लिए उन्हें नमी की आवश्यकता हो सकती है।

ckjhd df.kdk,¡ (Fine Granules)

बारीक दाने में कण आकार की सीमा 105–297 माइक्रोन (48–150 जाल) होती है और इन्हें हस्त से या अधिक कुशलता से हेलीकॉप्टर या बिजली के नैप्सैक प्रकार के द्वारा खेत में लगाया जा सकता है। पीड़कनाशक जो मिट्टी से पौधे के ऊतकों में अवशोषित होते हैं, इस रूप में तैयार होते हैं। चावल के तना छेदक, लीफ हॉपर इत्यादि को नियंत्रित करने के लिए ऑर्गनोफॉस्फोरस कीटनाशक फेनिट्रोथियोनं और डायजिनॉन को इस रूप में सफलतापूर्वक तैयार किया गया है।

ty Qyku ;kX; df.kdk,¡ ¼MCyMh th½ ;k 'kq"d çokg ¼Mh,Q½

ये फैलने वाले पाउडर सूत्रीकरण की तरह होते हैं, सिवाय इसके कि सक्रिय संघटक को दाने के रूप में तैयार किया जाता है। इनको पानी में मिलाकर उपयोग किया जाता है। इसे पानी में निलंबित रखने के लिए लगातार हिलाने की आवश्यकता है। पानी के फैलाव के कारण वेटेबल पाउडर के फायदे और नुकसान साझा करते हैं: क) वे आसानी से मापा और मिश्रित होते हैं। ख) वे डालने और मिश्रण बनाने के दौरान किसान को अन्तःश्वसन खतरा पैदा करते हैं।

fVfd;k ¼Pellet½ ¼ih ;k ih,l½

टिकिया सूत्रीकरण दानेदार सूत्रीकरण के समान हैं, शब्दों को अक्सर एक दूसरे के साथ इस्तेमाल किया जाता है। इसमे निर्धारित भार और आकार की एक टिकिया बनाई जाती है। कणों की एकरूपता के कारण इन्हें सटीक एप्लिकेटर मशीन द्वारा डाला जाता है जैसे – बीज के सटीक रोपण के लिए उपयोग किया जाता है।

rjy l=hdj.k

तरल सूत्रीकरण या तो पानी में पीड़कनाशक का प्रत्यक्ष या सतह सक्रिय कारको जैसे कि पायसीकारक आदि के साथ या बिना कार्बनिक विलायक घोल है।

?kksy ¼,l½

कुछ पीड़कनाशक सक्रिय तत्व पानी में आसानी से घुल जाते हैं। इन पीड़कनाशको के निर्माण में सक्रिय घटक और एक या अधिक योजक होते हैं। जब पानी के साथ मिलाया जाता है, तो वे एक ऐसा घोल बनाते हैं, जो अलग नहीं होगा। घोल को किसी भी प्रकार के स्प्रेयर मशीन के द्वारा घर के बाहर या अंदर लगाया जा सकता है। उदाहरण 40% निकोटीन सल्फेट है। घोल को लगातार हिलाना आवश्यक नहीं है लेकिन बहुत कम सक्रिय तत्व पानी में घुलनशील होते हैं।

beYlhQk,cy d,UlsVªsVl ¼EC½

एक इमल्सीफायबल कॉन्सन्ट्रेट में आम तौर पर सक्रिय तत्व एक या अधिक पेट्रोलियम विलायक और एक या एक से अधिक पायसीकारक होते हैं, जो सूत्रीकरण को पानी में घुलनशील बनाते हैं। अंतिम विक्षेपण का कण आकार आमतौर पर 10 माइक्रोन से कम होता है। इस प्रकार के सांद्रता को पानी (O / W) में तेल के रूप में जाना जाता है और यह आमतौर पर उपलब्ध है। पीड़कनाशक और पायसीकारकों को विलायक में घोल कर तेल चरण बनाया जाता है जिसको पानी (जिसे परिक्षेपित प्रावस्था कहा जाता है) में परिक्षेपित किया जाता है। इनकी संकेंद्रण 2.5 से 25% या अधिक तक होती है। इनका उपयोग कृषि, फूलो और घास, वानिकी, संरचनात्मक, खाद्य प्रसंस्करण, पशुधन और सार्वजनिक स्वास्थ्य पीड़को के खिलाफ किया जाता है। ये छोटे, पोर्टेबल स्प्रेयर, हाइड्रोलिक स्प्रेयर, लो–वॉल्यूम ग्राउंड स्प्रेयर, मिस्ट ब्लोअर, और कम वॉल्यूम एयरक्राफ्ट स्प्रेयर सहित कई प्रकार के उपकरणों के अनुकूल हैं।

ईसी फॉर्मूलेशन के निम्नलिखित फायदे हैं:

(क) उच्च सांद्रता जिसके कारण प्रति किलोग्राम पीड़कनाशी की कीमत अपेक्षाकृत कम होती है और उत्पाद को संभालना आसान होता है, (ख) छिड़काव के दौरान घोल को ज्यादा हिलाने की आवश्यकता नहीं होती है। अपघर्षक नहीं है एवं डालते समय संघटक अलग नहीं होते, (ग) फल और सब्जियों पर छिड़काव के बाद अवशेष की मात्रा बहुत कम होती है।

जबकि, इससे जुड़े नुकसान (क) वनस्पति विषाक्तता, (ख) ये आसानी से मानव या जानवरों की त्वचा के माध्यम से अवशोषित हो जाते हैं, (ग) विलायक रबर या प्लास्टिक हौज, अवरोधक डोरा और पंप भागों कि सतह को खराब कर सकता है।

vYVªk yks&o,Y;we dalaVªs'ku l,Y;w'kal ¼ULV½

इस सूत्रीकरण स्प्रे घोल की कुल आयतन दर 5 लिटर प्रति हैक्टर या उससे कम होती है। इस तरह के सूत्रीकरण को विकसित करने का मुख्य उद्देश्य हैं कि इन्हें बिना पानी मिलाये उपयोग किया जा सके। ये अत्यधिक विशिष्ट स्प्रे उपकरण के साथ उपयोग किये जाते हैं और ज्यादातर बाहरी

अनुप्रयोगों जैसे कि कृषि, वानिकी और सजावटी, और मच्छर नियंत्रण कार्यक्रम में उपयोग किए जाते हैं। इनके फायदे और नुकसान इमल्सीफाएबल कॉन्सेंट्रेट्स (EC) के लिए समान हैं।

ekbØkbey lu ¼ME½

ये ऊष्मप्रवैगिकी रूप से स्थिर सूत्रीकरण है जिसे अनायास उत्पादित किया जा सकता है। यह तेल, पायसीकारकों और पानी के अणुओं के बीच विशिष्ट परस्पर क्रिया पर निर्भर करता है। एक बार जब सही रचनाएँ पहुँच जाती हैं, तो माइक्रोइमलसीफिकेसन होता है और किसी यंत्रवत् कार्य की आवश्यकता नहीं होती। यह सूत्रीकरण पारदर्शी तरल है जो सतह पर सक्रिय कारको द्वारा तकनीकी रूप से तरल पीड़कनाशकों के मिसेलल्स बनाता है। इसमें श्रेष्ठ विशेषताएं हैं, जैसे कि अक्षमता, जलन में कमी, सक्रिय अवयवों को परमाणु द्वारा पत्ती की सतहों पर आसंजन में सुधार। उदाहरण के लिए, फ्लुसाईं थ्रीनेट माइक्रोइमलसन जापान में पंजीकृत है।

lLi'ku d,UlUVªsV ;k oV ¶yks,cy (SC)

सस्पेंशन कॉन्संट्रेट को वेट फ्लोएबल सूत्रीकरण भी कहा जाता है, जिसमें सक्रिय संघटक पानी या कार्बनिक विलायक में बारीक कणों के स्थिर विक्षेपण के रूप में होते है। बढ़ती लागत और विलायक के उपयोग से संबंधित अन्य कारकों के कारण ये बहुत महत्वपूर्ण हैं। हाइड्रोलाइटिक रूप से स्थिर, उच्च गलनांक, पानी में कम घुलनशीलता वाले स्थिर रसायनों को इस रूप में तैयार किया जाता है।

lLik&beY'ku ¼lLik½

सस्पेंशन इमल्शन (या सस्पो–इमल्शन) की तैयारी के बहुलक जाली का उपयोग किया गया है। ये सूत्रीकरण कई प्रकार के यौगिकों को एक सूत्रीकरण में संयोजित करने के लिए लोकप्रिय हैं। सस्पो की तैयारी में सबसे बड़ी चुनौती भौतिक रूप से स्थिर प्रणाली विकसित करना है। सक्रिय घटकों और प्रक्रिया नियंत्रण मापदंडों की सावधानीपूर्वक चयन द्वारा ये स्थिरता प्रदान की जा सकती है। गतिज रूप से स्थिर ईडब्ल्यूएस का उत्पादन करने के लिए नियोजित अधिकांश तकनीक को प्रभावी रूप से सस्पो की तैयारी में स्थानांतरित किया जा सकता है। अल्कीलग्लुकोसाइड पृष्ठ सक्रिय कारको को सस्पो–इमल्शन के दोनों चरणों में सफलतापूर्वक नियोजित किया गया है।

vU; lw=hdj.k

धुआंरी (फ्यूमिगेंट्स): धुआंरी पीड़कनाशक होते हैं जो उपयोग में जहरीली गैस बनाते हैं। कभी–कभी सक्रिय तत्व गैसें होती हैं जो दबाव में पैक होने पर तरल बन जाती हैं तथा उपयोग के दौरान जारी होने पर ये गैस बन जाती हैं। कुछ पीड़कनाशी अस्थिर तरल होते हैं जिनको बिना दबाव डाले कंटेनर में रखा जाता है। वे छिड़काव के दौरान गैस बन जाते हैं। दूसरे ठोस होते है जिनको उच्च आर्द्रता या जल वाष्प के दबाव में लागू करने पर गैस निकलती है। धुआंरी को संरचनात्मक पीड़क जैसे – भोजन और अनाज भंडारण सुविधाओं, बंदरगाहों तथा राज्य और राष्ट्रीय सीमाओं पर नियामक पीड़क नियंत्रण में उपयोग किया जाता है। धुआंरी का उपयोग कृषि पीड़क नियंत्रण में, मिट्टी, ग्रीन हाउस, अन्न भंडार और अनाज के डिब्बे में किया जाता है।

/keiku (Smokes)

मच्छर का तार एक विशेष धूम्रपान उत्पादन–यन्त्र का उदहारण है जो लकड़ी की धूल, मंड, विभिन्न अन्य योजक और आमतौर पर हरे रंग की सामग्री के साथ–साथ पीड़कनाशक (प्राकृतिक पाइरेथ्रम एलेथ्रिन आदि) से बना होता है। मच्छर तार के धुएं प्रभाव का अनुक्रम है – निवारण, निष्कासन, मेजबान स्थान के साथ हस्तक्षेप, काटने के लिए निषेध, मार गिराना और अंततः मृत्यु।

cVl ¼Baits½ ¼ch½

इस सूत्रीकरण में पीड़कनाशक के सक्रिय घटक को भोजन या किसी अन्य आकर्षक पदार्थ के साथ मिश्रित किया जाता है। यह सूत्रीकरण कीटों को आकर्षित करता है, तथा जहरीला भोजन खाने या अन्य तरीकों से पीड़क मारे जाते हैं। अधिकांश चारा सूत्रीकरण में सक्रिय संघटक की मात्रा काफी कम होती है (आमतौर पर 5% से कम)। इनका उपयोग इमारतों के अंदर मूषक तथा चींटियों, तिलचट्टे और अन्य कीड़ों को नियंत्रित करने में किया जाता है। बाहर, वे कभी–कभी घोंघा और कुछ कीटों को नियंत्रित करने के लिए उपयोग किए जाते हैं, लेकिन उनका उपयोग मुख्यतः कशेरुक पीड़क– पक्षियों, मूषक और अन्य स्तनधारियों के नियंत्रण के लिए किया जाता है। उपयोग करते समय पूरे खेत में सूत्रीकरण को डालने की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि पीड़क चारा के लिए आ जाता है।

fu;f=r foekpu l=hdj.k

नियंत्रित विमोचन एक ऐसी तकनीक या विधि है जिसके तहत सक्रिय अवयवों को एक निश्चित लक्ष्य के लिए एक निश्चित सांद्रता और अवधि में एक निर्दिष्ट लक्ष्य पर उपलब्ध कराया जाता है। एक पारंपरिक सूत्रीकरण का प्रारंभिक अनुप्रयोग स्तर अक्सर कार्रवाई में अधिकतम सहन स्तर पर होता है, और न्यूनतम निरोधात्मक सांद्रता (एमआईसी) से अधिक होता है। एक नियंत्रित विमोचन सूत्रीकरण में, पीड़कनाशक सांद्रता के प्रारंभिक इस्तेमाल स्तर को प्रभावशीलता की वांछित अवधि के अंत तक पीड़क की न्यूनतम निरोधात्मक सांद्रता (एमआईसी) से ऊपर बनाए रखने के लिए चुना जाता है। सक्रिय संघटक के विमोचन की दर मुख्य रूप से कैप्सूल आव्यूह से बाहर प्रसार की दर पर निर्भर करती है जोकि निर्माण सामग्री, कैप्सूल की मोटाई और निर्माण के दौरान प्राप्त मजबूती पर निर्भर है। नियंत्रित विमोचन सूत्रीकरण मे ये चार मुख्य तकनीकें लागू होती हैः

d½ cgyd f>Yyh&ihMduk'kd gkt ç.kkyh

ये प्रसार नियंत्रित होते हैं और इसमें माइक्रो कैप्सूल और मैक्रो स्ट्रिप्स शामिल होते हैं। एक डाइपोनेट माइक्रो कैप्सूल स्टॉफर माइक्रो कैप्सूलीकरण प्रक्रिया का उपयोग करके तैयार किया जाता है, जोकि पॉली आइसोसायनेट मोनोमर्स के स्वस्थानी संघनन और बहुलकीकरण पर आधारित है।

[k½ eSfVDl ç.kkyh eas Hkkfrd :i ls Qls g, ihMduk'kd

मैट्रिक्स प्रणाली को निष्क्रिय और निर्जन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। एक सक्रिय मैट्रिक्स प्रणाली से कीटनाशक का विमोचन विसरण द्वारा नियंत्रित किया जाता है, जबकि एक निर्जन मैट्रिक्स सिस्टम से कीटनाशक का विमोचन मैट्रिक्स के क्षरण की दर से नियंत्रित होता है। आमतौर

पर नियोजित बहुलक में सेल्यूलोज एसीटेट, एथिल सेलुलोज, पॉलीविनाइल क्लोराइड, पॉलीस्टायर्न आदि होते हैं।

x½ lgl;ksth d ck/; ihMduk'kd cgqyd ç.kkyh

एक बहुलक से बंधे हुए पीड़कनाशक की विमोचन की दर क्षार उत्प्रेरित हाइड्रोलिसिस, फोटोलिसिस या कटायन एक्सचेंज द्वारा पीड़कनाशक को मैक्रो आणविक वाहकों से जोड़ने वाले अतिसंवेदनशील बंधों की दरार की दर पर निर्भर करती है।

?k½ ysfir dhVuk'kd df.kdk,a

स्टार्च या अन्य पॉलीहाइड्रिक यौगिकों के साथ नियंत्रित विमोचन के लिए पीड़कनाशको को दानेदार बनाया जाता है। इस प्रक्रिया में पीएच 3.7 पर जिलेटिनाइजेशन और फैलाव होता है, इस प्रकार पारंपरिक कणिका विधि में इस्तेमाल होने वाले क्षारीय स्थिति के तहत पीड़कनाशक के क्षरण से बचा जाता है।

नियंत्रित–विमोचन सूत्रीकरण के लाभ है – सक्रिय अवयवों की बहुत कम सांद्रता में उपयोग किया जाता है जिससे पर्यावरण और गैर–लक्षित पौधों और जानवरों को नुकसान कम होता है। वे पीड़कनाशको को सूर्य की रोशनी, बैक्टीरिया, हवा और पानी के कारण पर्यावरणीय क्षरण से बचाते हैं। इनके एक बार उपयोग से ही विस्तारित गतिविधि के कारण पूरी फसल अवधि के दौरान सुरक्षा मिलती है।

l=hdj.k p;u ds fy, /;ku j[kus ;kX; ckrs

खेत मे पीड़कनाशको को डालते समय सूत्रीकरण प्रकार का चुनाव बहुत महत्वपूर्ण है। क्षेत्र में पीड़कनाशको के उपयोग का निर्णय लेते समय निम्नलिखित कारकों पर विचार किया जाना चाहिए:

d½ mi;ksx dk rjhdk% पीड़कनाशकों को तैयार करने के लिए उनके इच्छित प्रकार के अनुसार चुना जाना चाहिए। उन्हें निम्नानुसार समूहीकृत किया जा सकता है:

i) पानी/तेल के साथ मिलाने के बाद छिड़काव के लिए: इमल्सीएबल सांद्रता (EC), वेटटेबल पाउडर (WP या WDP), अल्ट्रा लो वॉल्यूम कॉन्सट्रेट (ULVC)

ii) कंटेनर से सीधे सूखे उपयोग के लिए: धूल (डी), ग्रैन्यूल (जी), एनकैप्सुलेटेड ग्रैन्यूल

iii) गैस या वाष्प के रूप में उपयोग के लिए: फ्यूमिगेंट्स, स्मोक जनरेटर या टैबलेट जो वाष्पीकृत होते हैं, एरोसोल और दबाव वाले स्प्रे

iv) अन्य सूत्रीकरण: बीज रक्षक (सूखा या तरल), मूषक, स्लग, मक्खियों, तिलचट्टों आदि के लिए चारा (बैट)।

[k½ ihMd thofoKku% पीड़क की वृद्धि की आदतें और उत्तरजीविता रणनीतियां अक्सर यह निर्धारित करती हैं कि सक्रिय संघटक और कीट के बीच इष्टतम संपर्क क्या प्रदान करता है।

i) चूसने वाला कीट: मृदा मे डालने वाले सूत्रीकरण (जी, एनकोसुलेटेड ग्रैन्यूल्स, डब्लूडीजी, आदि), बीज लेपित (बीज उपचार के लिए डब्लू डी जी) (डब्ल्यूएस) और बीज उपचार (एफएस)

ii) चबाने वाला कीटः छिड़काव योग्य सूत्रीकरण (ईसी, एससी, यूएलवी, आदि)

iii) भंडारण कीटः फ्यूमिगेंट्स, स्मोक जनरेटर या टैबलेट

iv) विशेषः मूषक और मक्खियों के लिए चारा, तिलचट्टे के लिए चाक और जेल तैयार करना, आदि।

x½ fdlku lj{kk% विभिन्न सूत्रीकरण के साथ विभिन्न प्रकार के खतरे हैं। कुछ उत्पाद आसानी से साँस में, जबकि अन्य त्वचा में घुस सकते हैं या आंखों में छींटे लगने पर चोट का कारण बन सकते हैं।

?k½ i;koj.k lc/kh fprk,% ऐसे सूत्रीकरण जो हवा में बहने या पानी में लक्ष्य से दूर जाने के लिए प्रवृत्त हों, उनके के लिए विशेष सावधानियों को अपनाने की जरूरत है विभिन्न सूत्रीकरणों द्वारा वन्यजीवों को अलग–अलग हद तक प्रभावित करते है। पक्षियों को कणिकाओं द्वारा आकर्षित किया जा सकता है और मछली या जलीय अकशेरुकीय विशिष्ट कीटनाशक सूत्रीकरणों के लिए विशेष रूप से संवेदनशील हैं।

M-½ miyC/k midj.k% कुछ कीटनाशक योगों में विशेष हैंडलिंग उपकरणों की आवश्यकता होती है। इसमें एप्लिकेशन उपकरण, सुरक्षा उपकरण और स्पिल कंट्रोल उपकरण शामिल हैं। किसानों को इस बात की जानकारी होनी चाहिए कि कुछ सूत्र कपड़ों को दाग लगा सकते हैं, लिनोलियम को भंग कर सकते हैं, प्लास्टिक को भंग कर सकते हैं, या पर्ण को जला सकते हैं।

कुशल और सुरक्षित कीटनाशक वितरण के लिए वितरण प्रणाली

ध्रुबा ज्योति सरकार, प्रशांत कौशिक, नज्म अख़तर शकील और जितेंद्र कुमार
कृषि रसायन संभाग, भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

कीटनाशक को लक्ष्य पर उपयुक्त मात्रा और एकाग्रता से प्रभावी एवं एकरूप तरीके एवं न्यूनतम नुकसान के साथ पहुँचाने के लिए कुशल वितरण प्रणाली की आवश्यकता है ताकि अपवाह एवं अभिप्राय के कारण कीटनाशक का नुकसान न हो। अपवाह एवं अभिप्राय से न केवल कीटनाशक का अपव्यय होता है, बल्कि व्यावसायिक और पर्यावरणीय सुरक्षा को खतरे में डालने वाले गैर–लक्ष्य क्षेत्रों में वायु, मिट्टी और पानी के प्रदूषण के खतरे पैदा होते हैं। वितरण प्रणाली को लक्ष्य पर्यावरण पर कीटनाशक का वितरण, कृषि योग्य फसल के पत्ते, कीटनाशक अनुप्रयोग संचालन में लगे कर्मियों के लिए न्यूनतम जोखिम के साथ करना चाहिए। कीटनाशक वितरण प्रणाली एक व्यापक अवधारणा को शामिल करती है जिसमें नियंत्रित रिलीज सिस्टम और एप्लिकेशन साधन शामिल हैं। यह अध्याय, केवल, एप्लिकेशन डिवाइस पर प्रतिबंधित डिलीवरी सिस्टम पर केंद्रित होगा।

कीटनाशक अनुप्रयोग उपकरणों को लक्ष्य कीट के वातावरण में सीधे या तो दाने और धूल के रूप में या पानी के फैलने वाले पाउडर के रूप में बिखरे हुए/पायसीकृत रूप में कीटनाशक सूत्रण को वितरित करने के लिए डिजाइन किया गया है, पानी के फैलने योग्य दाने, इमल्सीफायर केंद्रित, इमल्शन केंद्रित आदि उपकरण की जरूरत विभिन्न प्रकार के लक्ष्य वातावरण पर निर्भर करती है जैसे कृषि योग्य फसलों, जंगली और लंबी बागवानी फसलों, मिट्टी, अचल और गतिशील जल निकायों, गोदामों, मवेशियों के शेड, आवास इकाई आदि। कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य संचालन में वितरण प्रणाली हाइड्रोलिक स्प्रेयर हैं जो कीटनाशक को पानी या पेट्रोकेमिकल विलायक में पतला होने के बाद तैयार करते हैं। धूल और कणिकाएं जैसे फॉर्मूलेशन्स को डस्टर, मिट्टी की ड्रिल आदि का उपयोग करके इस्तेमाल किया जाता है, गोदामों के लिए फ्यूमिगेंट फॉर्मूलेशन सही स्थानों पर रखे जाते हैं। फ्यूमिगेंट की अस्थिरता के आधार पर विभिन्न डिजाइनों के मिट्टी फ्यूमिगेटर्स का उपयोग करके मिट्टी के फ्यूमिगेंट्स लगाए जाते हैं। पेड़ों की तरह बागवानी फसलों में उपयोग के लिए प्रणालीगत कीटनाशकों को सिरिंजों का उपयोग करके लगाया जाता है। छोटे पैमाने पर संचालन में हस्त से आयोजित स्प्रेयर का उपयोग किया जाता है। बड़े कृषि कार्यों के लिए, ट्रेक्टर माउंटिंग या एरियल एप्लिकेशन के लिए हैंड–हेल्ड स्प्रेयर को संशोधित किया जाता है। हाइड्रोलिक स्प्रेयर से लक्ष्य वातावरण में कीटनाशक का वितरण निर्भर करता है।

हाइड्रोलिक स्प्रेयर से लक्ष्य वातावरण में कीटनाशक का वितरण कई कारकों पर निर्भर करता है जैसे स्प्रेयर से छोटी बूंद वितरण, लक्ष्य सतह पर वितरण नोजल का अभिविन्यास, एप्लिकेटर – आदमी, ट्रैक्टर या हवाई जहाज की गति, खेत में हवा की दिशा और वेग आदि। कीटनाशक प्रायः कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य क्षेत्रों में स्वतंत्र रूप से वितरित होने वाले अत्यधिक जहरीले रसायन हैं। इसलिए

विभिन्न डिजाइनों की वितरण प्रणाली विकसित की गई है और कीटनाशकों के लक्ष्य पर्यावरण में प्रभावी और सुरक्षित वितरण के विभिन्न पहलुओं पर व्यापक जानकारी उत्पन्न की गई है।

gkbMªkfyd Lç;j

अधिकांश सूत्रीकरणों का कृषि क्षेत्रों में उपलब्ध जल संसाधनों के पानी के साथ मिश्रित करके लक्ष्य पर छिड़काव किए जाते हैं। स्प्रेयर स्प्रे तरल को संपीड़ित करते हैं और इसे नलिका के माध्यम से छोड़ते हैं जिसके परिणामस्वरूप स्प्रे तरल का बूंदो मे परमाणुकरण होता है। स्प्रेयर की कार्यक्षमता उपयोग किए गए पानी की गुणवत्ता, सूत्रीकरण और स्प्रेयर की निहित गुणवत्ता पर निर्भर करता है।

हाइड्रोलिक स्प्रेयर दो प्रकार के होते हैं: 1. कंप्रेशन टाइप और 2. नैप्सेक। कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य में उपयोग किए जाने वाले स्प्रेयर मे आम तौर पर एक मूल इकाई, एक नली और एक लांस होता है। मूल इकाई मे आम तौर पर ढक्कन के साथ एक स्प्रे तरल टैंक, एक हवा पंप और एक संपीड़न कक्ष शामिल होता हैं। लांस में एक ट्रिगर वाल्व, स्प्रे मैनेजमेंट वाल्व और एक नोजल होता है। नोजल और स्प्रे मैनेजमेंट वाल्व एक स्प्रेयर के मुख्य भाग हैं। स्प्रेयर घरेलू, किचन गार्डन, ग्लासहाउस अनुप्रयोगों और कृषि कार्यों के लिए छोटे और बड़े पैमाने पर विभिन्न आकारों में उपलब्ध हैं।

हस्त संचालित हाइड्रोलिक स्प्रेयर में प्रति यूनिट क्षेत्र में स्प्रे तरल पदार्थ के छिड्काव की दर, नोजल के निर्गम द्वार (एपर्चर) के आकार, उपचारित फसल पट्टी की चौड़ाई एवम प्रचालक (ऑपरेटर) की चलने की गति पर निर्भर करती है।

गणितीय रूप से, इसे निम्न रूप में दर्शाया जा सकता है:

$$\text{छिड़काव दर (लिटर/मीटर}^2) \times 10^4 = \frac{\text{नोजल निकासी (लिटर/मिनट)}}{\text{फसल पट्टी की चौड़ाई (मीटर)} \times \text{प्रचालक (ऑपरेटर) की चलने की गति (मीटर/मिनट)}} \text{ लिटर/हैक्टर}$$

एक नोजल की निकासी (आउटपुट) टैंक में छिद्र आकार और दबाव पर निर्भर करता है। इसके अलावा ऑपरेटर की गति और नैप्सेक स्प्रेयर में पंप लीवर को स्थानांतरित करने का तरीका भी प्रति यूनिट क्षेत्र में स्प्रे की मात्रा को प्रभावित करता है।

gkbMªkfyd ufydk

निरंतर वांछित नोजल इनलेट दबाव देने में सक्षम दबाव कक्ष वाले बेस टैंक के साथ ही हाइड्रोलिक नोजल स्प्रेयर का एक महत्वपूर्ण घटक है। अलग–अलग स्प्रे गुणों के उत्पादन के लिए नलिका के विन्यास पर कई नवाचार किए गए हैं और नलिका के मिश्रित वर्ग उपलब्ध हैं

बाजार में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के नोजल नीचे चित्र में दिए गए हैं:

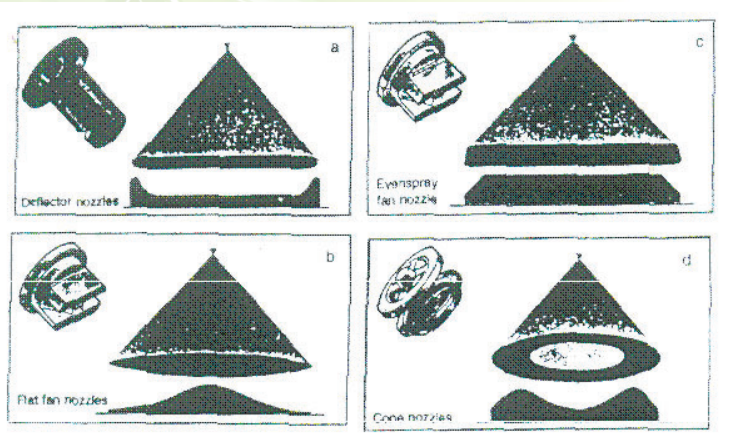

स्प्रे पैटर्न के साथ हाइड्रोलिक स्प्रेयर में उपयोग की जाने वाली नलिका

एक विशिष्ट कोण पर एक ठोस कोण और प्रवाह दर पर स्प्रे देने की क्षमता नलिका मे अंतर्निहित होती है। तदनुसार, एक नोजल को एक कोड के साथ चिह्नित किया जाता है जो प्रकार/स्प्रे कोण/प्रवाह दर (लि./मिनट)/दबाव (बार) को इंगित करता है। उदाहरण के लिए, एक फैन टाइप नोजल को चिह्नित किया जाएगा F11O/ 1-2 / 3- जो फैन प्रकार के नोजल को दर्शाता है, जिसकी प्रवाह दर 3 बार के दबाव पर 1.2 लि./मिनट है। नोजल को लांस में धातु या प्लास्टिक की पेटी में रखा जाता है। पेटी में एक गैर–ड्रिप वाल्व और एक फिल्टर अपस्ट्रीम भी हो सकता है। वाल्व अक्सर एक डायाफ्राम प्रकार का होता है और अधिकांश कृषि कार्यों के लिए 50 mesh आकार का फिल्टर उपयोग होता है।

विभिन्न नलिकाओ को एक कोड द्वारा पहचाना जा सकता है। (तालिका 1)

rkfydk 1% fofHkUu gkbMªksfyd uksty ds fy, uksty dksM

uksty çdkj	uksty dksM
Deflector	D
Fan & standard	F
Even spray fan	FE
Pre&orifice (reduced drift)	RD
Low Pressure	LP
Hollow cone	HC
Offset fan	OC
Bubble jet (air inclusion)	AI

Qu ufydk

इन नोजल में एक वी–आकार का खांचा होता है जो नोजल अग्रभाग के विपरीत तरफ से छिद्र बेधन द्वारा प्राप्त एक गोलार्ध गुहा के साथ प्रतिच्छेद करता है। बाहरी छिद्र खुलने में अण्डाकार होता है। खांचा फैन नोजल द्वारा वितरित स्प्रे के कोण और अन्य गुणों का निर्णय करता है। नलिका की

वितरण दर जो दिए गए दबाव पर छिद्र पर निर्भर करती है, को उत्पादक द्वारा रंगीन कोड संकेतीक किया जाता है क्योंकि लघु प्रकार पर पत्र कोड के साथ शिलालेख की समस्या है। इनको वितरण दर के आधार पर रंग कोड दिया गया है जैसा कि तालिका 2 में है।

rkfydk 2% ufydk çdkj dk jax dkM

jax	çokg nj ¼fy-@feuV] 3 ckj ij½
नारंगी	0.4
हरा	0.6
पीला	0.8
नीला	1.2
लाल	1.6
भूरा	2
धूसर	2.4
सफेद	3.2

नोजल को 1 बार जैसे कम दबाव पर भी चित्रित किया जाता है। कम दबाव वाले नोजल हवा के साथ स्प्रे बहाव को कम करते है इसलिये इनका उपयोग खरपतवरनाशी छिड़काव के लिए किया जाता है।

गेहूं जैसे कृषि योग्य फसलों पर छिड़काव अक्सर 800 या 650 के बजाय 1100 के फैन नलिका के साथ किया जाता है। कोण बढ़ने से एक पतली शीट बनती है, और वीएमडी एक ही वॉल्यूम आउटपुट (अर्नोल्ड, 1983) के लिए छोटा है। एक फैन नोजल का VMD आमतौर पर समान प्रवाह दर और दबाव के लिए शंकु नोजल की तुलना में बड़ा होता है। फैन नोजल को अपेक्षाकृत सपाट सतहों पर छिड़काव के लिए आदर्श माना जाता है। एक सपाट सतह पर कीटनाशकों का वितरण एक फैन नोजल के साथ अधिक असमान है। ट्विन–फैन और प्री–ऑरिफिस नोजल, फैन नोजल के संशोधन हैं।

çfr{kid ¼Deflector½ ufydk

स्प्रे का एक फैन प्रतिरूप, एक समतल सतह पर एक गोलाकार छिद्र से तरल धारा को निर्देशित करके प्राप्त किया जा सकता है, जो स्प्रे के प्रक्षेपवक्र को विक्षेपित करता है। प्रतिक्षेपक नलिका में गोलाकार छिद्र होते हैं, जबकि फैन नलिका में अण्डाकार बाहरी छिद्र होते हैं।

प्रतिक्षेपक नलिका को एनविल या प्रभाव नलिका भी कहा जाता है। एक नए प्रकार के प्रतिक्षेपक नोजल फैन नोजल के समान दिशा में स्प्रे का छिड़काव करते हैं और इसे ट्रैक्टर बूम पर इस्तेमाल किया जा सकता है। लक्ष्य क्षेत्र पर स्प्रे की सुविधा के लिए नोजल को लांस पर एक विशेष कोण पर लगाया जाता है । स्प्रे की रेंज मोटी से बहुत मोटी बूंद तक होती है। प्रतिक्षेपक नोजल का VMD मानक फ्लैट फैन नोजल की तुलना में थोड़ा बड़ा होता है, क्योंकि इसमें तरल शीट के किनारे से अधिक रिम विघटन होता है।

'kdq ufyd

एक शंकु नोजल में दो मुख्य घटक होते हैं: एक गोलाकार छिद्र और दूसरा बंद केंद्र स्पर्श रेखा के साथ घूमता प्लेट। भंवर प्लेट तरल के प्रवाह को घुमाती है इससे पहले कि वह छिद्र तक पहुंचती है जिससे तरल की उभरती हुई शीट एक घूमता हुआ खोखला टी बनाती है। स्प्रे–आउटपुट के आकार के कारण, शंकु नलिका को खोखले शंकु नलिका भी कहा जाता है। इस नोजल को कीटनाशक और फफूंद नाशकों के छिड़काव के लिए पसंद किया जाता है। शंकु प्लेट पर परिधीय स्पर्शरेखा खांचा के अलावा केंद्र छेद के साथ शंकु नलिका एक पूर्ण शंकु स्प्रे देगी। भारत में अन्य छेदों की तुलना में केंद्र छिद्र के साथ शंकु नोजल का उपयोग अधिक लोकप्रिय है। शंकु नलिका में भंवर प्लेट और छिद्र के बीच अंतर होता है। भंवर प्लेट और केंद्रीय छिद्र के बीच की दूरी शंकु स्प्रे आउटपुट का ठोस कोण तय करती है। भारतीय बाजार में उपलब्ध शंकु को शंकु कोण और स्प्रे आउटपुट की विशेषता है। शंकु नोजल पर एक विशिष्ट अंकन 850/425 मिलीलिटर/मिनट है। ऑपरेटर को उपयोग की आवश्यकता के आधार पर शंकु को बदलना होगा। नलिका के लगातार परिवर्तन से बचने के लिए, कुछ सस्ते स्प्रेयर पर एक चर शंकु नोजल लगाया जाता है। इन नलिका पर, छिद्र और भंवर प्लेट के बीच की दूरी को समायोजित किया जा सकता है ताकि स्प्रे स्वरूप को बहुत संकीर्ण जेट से एक विस्तृत कोण वाले ठीक स्प्रे में बदला जा सके। इन नलिकाओं का नुकसान यह है कि उन्हें हस्त से समायोजित करना पड़ता है और सेटिंग को एक जैसा रखना मुश्किल होता है।

v,Q lV ufyd

इन नोजल की छिद्र सीधे एक तरफ छिड़कती है। इनका उपयोग अक्सर सड़कों के किनारे जड़ी–बूटियों के उपचार के लिए किया जाता है। इनका उपयोग कुछ पेड़ों की कम शाखाओं के उपचार के लिए भी किया जाता है।

Lç çc/ku okYo

विभिन्न दरों से जुड़े हाइड्रोलिक स्प्रेयर से आउटपुट में अवांछनीय बदलाव स्प्रे मैनेजमेंट वाल्व (एसएमवी) का उपयोग करके दरों को समाप्त कर दिया जाता है। इस वाल्व में एक डायाफ्राम चेक

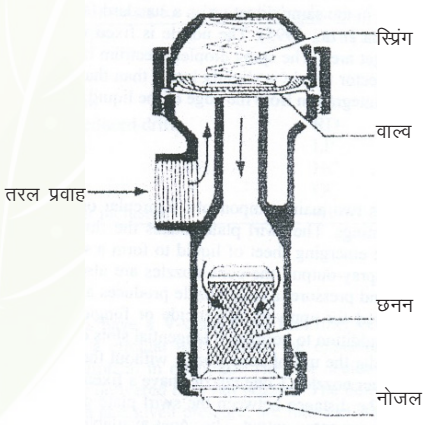

चित्र 2. डायाफ्राम वाल्व के साथ नोजल असेंबली

वाल्व होता है। यह लांस में नोजल असेंबली के अपस्ट्रीम हिस्से में लगाया जाता है। एकैडट के विन्यास का एक विशिष्ट उदाहरण चित्र 2 में दिखाया गया है।

असेंबली के डायाफ्राम वाल्व से जुड़ा स्प्रिंग स्प्रे तरल को नोजल कक्ष में एक महत्वपूर्ण प्रवेश दबाव तक उभरने की अनुमति नहीं देता है। एक बार वाल्व खुलने पर तरल का प्रवाह प्रवेश दबाव के बावजूद स्थिर दर पर नियंत्रित होता है।

dEç'ku Lç;j

इस स्प्रेयर में तरल पात्र के साथ मजबूत निकाय और चेक वाल्व के साथ हवा पंप होता है। टंकी को आंशिक रूप से भरा जाता है, ताकि संपीड़ित हवा के लिए स्थान उपलब्ध रहे। हवा पंप अक्सर पात्र के अंदर लगाया जाता है। तरल पात्र को कीटनाशक स्प्रे तरल के साथ भरने के लिए एक पेचदार (स्क्रू प्रकार) के ढक्कन के साथ प्रदान किया जाता है और स्प्रे के लिए एक नोजल बाहर निकलता है। जब ढक्कन खुला होता है तो संपीड़ित हवा के निकलने के लिए वेंट का काम करता है। इन स्प्रेयरों की क्षमता 1–10 लिटर होती है। दबाव पैमाना शायद ही कभी फिट होते हैं। जब एक पैमाना के साथ प्रदान किया जाता है, तो वे दबाव नहीं देते हैं। 3 बार तक दबाव सामान्य रूप से लागू किया जा सकता है। अक्सर निर्माता डायल में एक हरे निशान को इंगित करता है या उपयोगकर्ता को हवा भरने के लिए दिए जाने वाले पूर्ण स्ट्रोक की संख्या का निर्देश देता है। इसका नुकसान छिड़काव के दौरान दबाव गिरावट है जिसके परिणामस्वरूप मोटे स्प्रे होते हैं और इसे लगातार पुनर्संरचना की आवश्यकता होती है। दबाव–विनियमन वाल्व के साथ फिटिंग करके इसमें कुछ हद तक सुधार किया जा सकता है।

इन स्प्रेयरों में स्प्रे हिलाने की सुविधा प्रदान नहीं की जाती है और स्प्रे को हिलाने के लिए पूरे स्प्रेयर को हिलाया जाता है। दो महत्वपूर्ण सावधानियां बरती जानी चाहिए: 1. स्प्रेयर में अवसादन से बचने के लिए केवल अच्छी गुणवत्ता वाले योगों का उपयोग किया जाना है। स्प्रेयर में भरने से ठीक पहले सस्पेंशन तैयार किया जाना है और तुरंत स्प्रे किया जाना है। यह पंप ग्लास हाउस और किचन गार्डन संचालन में उपयोगी है।

uIld Lç;j

नैप्सैक स्प्रेयर कीटनाशक अनुप्रयोगों में दुनिया भर में उपयोग किए जाने वाले सबसे आम स्प्रेयर हैं। हालांकि, स्प्रेयर की विशेषताएं और विनिर्देश देश–दर–देश भिन्न होते हैं। नैकपैक स्प्रेयर में एक मूल इकाई, एक नली और एक लांस होता है। बुनियादी इकाई में ढक्कन के साथ एक तरल टैंक होता है और एक पंप जिसमें लीवर, प्रवेश वाल्व, पंप सिलेंडर, निकासी वाल्व और स्प्रे तरल के लिए निकासी के साथ एक दबाव कक्ष होता है।

निकासी एक नली के माध्यम से स्प्रे तरल के लिए आउटलेट के साथ फिट किए गए लांस से जुड़ा होता है। आउटलेट एक नली के माध्यम से ट्रिगर वाल्व और स्प्रे नोजल से लैस एक लांस जुड़ा होता है। मूल रूप से नैप्सैक को पंप किए गए पंप के प्रकार के आधार पर पिस्टन पंप और डायाफ्राम पंप के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। पिस्टन पंप वाले स्प्रेयर में उच्च दबाव रखने की क्षमता होती है और कीटनाशकों और फफूंदनाशकों के छिड़काव के लिए उपयोग किया जाता है, जबकि डायाफ्राम पंपों का

उपयोग अपेक्षाकृत कम क्षमता के लिए किया जाता है और स्प्रे तरल के परमाणुकरण में छोटी बूंदों के दृश्य प्रदर्शन में उपयोग किया जाता है स्प्रेयर काफी हद तक दबाव क्षमता और नोजल कॉन्फिगरेशन पर निर्भर करते हैं। इन सुविधाओं के आधार पर कई नवाचार किए गए हैं।

नैकपैक स्प्रेयर की मूल इकाई को दो कंधे पट्टियों और एक कमर पट्टा पर रखा गया है और लांस को पर्यावरण की ओर निर्देशित हस्त में रखा गया है। आवेदक क्षेत्र में आगे बढ़ता है और छिड़काव किए गए पर्णों पर ब्रश करता है। जब ऑपरेटर हवा के अंत में होता है, तो वह एयर–बॉर्न स्प्रे के संपर्क में आ जाता है। ऑपरेटर अक्सर तात्कालिक मास्क का उपयोग करता है, जो केवल बारीक बूंदों को फंसा सकता है। एक बार नकाब पर उतरने वाली बूंदें वाष्पीकरण से गुजरती हैं, जो मास्कवॉच पर कीटनाशक छोड़ कर संचालक के श्वसन मार्ग में प्रवेश कर जाती है।

fiLVu Vkbi uldild Lçs;j

इस प्रकार के स्प्रेयर में एक हाइड्रोलिक पंप होता है जो पिस्टन असेंबली के दोनों सिरों पर दो वाल्वों के साथ टैंक के अंदर लगाया जाता है जो एक तरफ तरल टैंक और दूसरी तरफ दबाव कक्ष को जोड़ता है। वाल्व ए पिस्टन असेंबली में टैंक से स्प्रे तरल के प्रवाह को नियंत्रित करता है और वाल्व बी दबाव कक्ष में पिस्टन असेंबली से तरल के प्रवाह की अनुमति देता है। पिस्टन की लंबाई और पिस्टन के सिर का व्यास लीवर के प्रत्येक स्ट्रोक पर तरल के आयतन को दबाव कक्ष में तय करता है। स्प्रे तरल दबाव कक्ष से नली और लांस में बहता है। पिस्टन के सिर को इलास्टोमर्स से बने ओ रिंग्स से सुसज्जित किया गया है। लीवर और पिस्टन के तरल पदार्थ की टंकी में तरल की अधिक मात्रा के कारण स्प्रे तरल के वांछित निलंबन गुणवत्ता को बनाए रखते हुए लीवर के प्रत्येक स्ट्रोक पर हिलाया जाता है। पिस्टन स्प्रेयर में 3 बार तक दबाव आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए प्राप्त छोटी बूंद रेंज एक डायाफ्राम प्रकार स्प्रेयर की तुलना में महीन होती है।

Mk;kÝke Vkbi uIlsd Lçs;j

इन स्प्रेयरों में एक डायाफ्राम असेंबली होती है, जो तरल टैंक को जोड़ती है और वाल्व A और B के माध्यम से दबाव कक्ष को जोड़ती है। वाल्व टैंक से दबाव कक्ष तक तरल के प्रवाह की अनुमति देता है। डायाफ्राम का व्यास पिस्टन सिर के व्यास से बड़ा होता है और उस पिस्टन प्रकार की तुलना में डायाफ्राम के गति की मात्रा कम होती है। जैसे कि डायाफ्राम प्रकार स्प्रेयर में कोई सील गति नहीं है। दबाव कक्ष में निर्मित दबाव पिस्टन स्प्रेयर की तुलना में कम होता है, इसलिए प्राप्त छोटी बूंद रेंज डायाफ्राम प्रकार स्प्रेयर में मोटी होती है।

ekVj pkfyr Lçs;j

पंप को चलाने के लिए छोटे दो–स्ट्रोक इंजन के साथ नैप्सैक स्प्रेयर प्रदान किए जाते हैं। यह हस्त से संचालित लीवर का स्थान ले सकता है। स्प्रे टैंक को पंप के ऊपर एक कंधे–चढ़ाया हुए फ्रेम पर फिट किया जाता है ताकि पंप को प्राइम करने के लिए गुरुत्वाकर्षण से तरल बहता रहे। दबाव–विनियमन वाल्व से वापस प्रवाह द्वारा स्प्रे मे गति प्रदान की जाती है। मोटर चालित नैप्सैक की क्षमता हस्त संचालित नैप्सैक स्प्रेयर के समान होती है। नैप्सैक स्प्रेयर पर इस तरह की एक इकाई को

लगाने की बजाय पहिएदार फ्रेम पर लगे 25–50 लिटर के बड़े टैंक के साथ भारी चार स्ट्रोक वाले इंजन को फिट करना अधिक सामान्य है। इस तरह के मोटरयुक्त स्प्रेयर का उपयोग स्थिर ट्रॉलियों में खेत मे एक जगह पर रखने के लिए किया जाता है। एकल नोजल लांस के साथ एक लंबी नली का उपयोग हाइड्रोलिक स्प्रेयर के साथ किया जाता है। इनका इस्तेमाल उन ट्रैक्टरों पर भी किया जाता है जहां मोटर के साथ बिजली ली जाती है।

d rkb fMLd Lç;j

स्पिनिंग डिस्क स्प्रेयर (एसपीएस) का उपयोग कम मात्रा और अल्ट्रा कम वॉल्यूम अनुप्रयोगों के लिए किया जाता है। इन स्प्रेयरों में स्प्रे तरल के लिए एक हौज होता है जो गुरुत्वाकर्षण प्रवाह द्वारा एक नली के माध्यम से लांस में स्प्रे तरल को वितरित करता है। लांस, नोजल के रूप में कार्य करने वाली कताई डिस्क, बैटरी डिब्बे मे 4–8 बैटरी और बिजली के स्विच से मिलकर बनता है। हौज की फिटिंग एक कंधे पर चढ़े हौज के रूप में या एक बोतल (1–2–1) लांस की नोक के साथ जुड़ी होती है। दो बैटरियों द्वारा संचालित 12 वी डीसी मोटर कताई डिस्क को 10,000 आरपीएम तक की विभिन्न गति के लिए सक्रिय करती है। कताई डिस्क के केंद्र में वितरीत तरल परिधि तक पहुंच जाता है। स्प्रे तरल को कताई डिस्क से स्नायुबंधन के रूप में वितरित किया जाता है, जो महीन कणों में विघटित हो जाता है। कताई डिस्क से निकलने वाला स्प्रे ऑपरेटर के फसल के ऊपर होता है, ताकि हवा विक्षोम (टर्बुलेंस) फसल चंदवा (कैनोपी) के भीतर स्प्रे वितरित करता है।

पहले के कई संस्करणों में, डिस्क समतल और परिधि समरूप थी। आधुनिक एसडीएस में, डिस्क की सतह पर खांचे बने होते हैं। जबकि एक चिकनी धार वाली डिस्क महीन स्प्रे का उत्पादन करेगी, दांतों और खांचे का एक संयोजन प्रवाह दरों की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए छोटी बूंद के आकार का बेहतर नियंत्रण देता है। छोटी बूंद आकार और छोटी बूंद स्पेक्ट्रम कताई डिस्क के घूमने की रफ्तार, विन्यास, स्प्रे तरल की गत्यात्मक चिपचिपाहट और सतह तनाव और क्षेत्र में प्रचलित संयोजी वायु प्रवाह पर निर्भर करता है। संकीर्ण बूंदों के भीतर विशेष रूप से छोटी बूंद की आवश्यकता नियंत्रण बूंद आवेदन (सीडीए) (बेल्स, 1975) की अवधारणा के कारण हुई। कताई डिस्क के उपयोग से संकीर्ण छोटी बूंद स्पेक्ट्रम हासिल की गयी है। डिस्क की घूर्णन गति को बढ़ाकर छोटी बूंद के आकार को कम किया जा सकता है। ये स्प्रेयर कीटनाशक के आवेदन को 5–15 लि./है. की दर के लिये सक्षम हैं। वे 50–100 माइक्रोन के एक छोटी बूंद के उत्पादन में सक्षम हैं।

byDVkLVfVd Lç;j

पारंपरिक हाइड्रोलिक स्प्रेयर कम बहाव के साथ, पत्तियों के निचले सतह पर कीटनाशक स्प्रे देने में सक्षम हैं। इससे बूंदों पर इलेक्ट्रोस्टैटिक चार्ज का उपयोग करने के कई प्रयास किए गए। कई मामलों में इलेक्ट्रोस्टैटिक चार्ज को हाइड्रोलिक नोजल या कताई डिस्क से इंडक्शन, आयनीकृत क्षेत्र या स्प्रे की सीधी चार्जिंग से जोड़ा जाता है (मर्चेंट, 1980य मैथ्यूज, 1989)। कानून (1980) ने ट्रैक्टर–माउंटेड बूम में उपयोग के लिए एक एयर–शीयर नोजल के लिए एक इंडक्शन चार्जिंग सिस्टम विकसित किया और एक हस्त में लैंस पोर्टेबल लाइन सिस्टम रखा। तकनीक ने 24 केवी पर नोजल को चार्ज करने

के लिए 1.5 वी बैटरी द्वारा संचालित एक उच्च वोल्टेज जनरेटर का उपयोग किया। गुरुत्वाकर्षण के तहत उभरते हुए, चार्ज तरल ने नियमित स्नायुबंधन का गठन किया और एक बहुत ही संकीर्ण छोटी बूंद स्पेक्ट्रम का उत्पादन किया। किसी भी निश्चित वोल्टेज पर, प्रवाह दर बढ़ने से छोटी बूंद का आकार बढ़ जाता है। 3 लि./है. से कम मात्रा में सूत्रकृमित कीटनाशकों की सीमित संख्या और आवश्यक प्रतिरोधकता उन कारकों में से एक है जो प्रणाली के निरंतर व्यावसायिक विकास को रोकती हैं, जबकि इलेक्ट्रोस्टैटिक चार्जिंग द्वारा स्प्रे हवा के साथ स्प्रे बहाव (ड्रिफ्ट) को कम किया जा सकता है, विशेष रूप से बारीक स्प्रे के साथ, एक फसल के भीतर चार्ज स्प्रे का वितरण असंतोषजनक हो सकता है। चार्ज किए गए बूंदों को निकटतम पृथ्वी की सतह पर जमा किया जाता है, इसलिए जब फसल को चंदवा के बीच स्प्रे की जरूरत होती है, तो निचले पर्णसमूह के लिए थोड़ा सा प्रवेश हो पाता है। इलेक्ट्रोस्टैटिक चार्ज किए गए स्प्रे के साथ वायु सहायता का उपयोग स्प्रे प्रवेश में सुधार करेगा। अब्देलबागी और एडम्स, ने 2 मीटर^3/सेकंड के वायु प्रवाह में 18 माइक्रोन छोटी बूंद का उपयोग करते हुए, पत्तियों की निचली सतह पर स्प्रे मात्रा बढ़ाकर ग्लासहाउस में सफेद मक्खी नियंत्रण में सुधार किया। एलेन व अन्य ने हवाई सहायता प्राप्त शंकु नोजल के साथ एक प्रेरण (induction) चार्जिंग सिस्टम का उपयोग करके सेब के पेड़ों पर स्प्रे मात्रा मे सुधार किया और पाउडर फफूंदी की घटनाओं को कम किया।

[kjirokj fudkyu oky

डेट द्वारा (1979) रूपांकित किए गए खरपतवार वाइपर, प्रणालीगत खरपतवारों जैसे– ग्लाइफोसेट द्वारा घास पैड के स्थानीयकृत उपचार के लिए उपयुक्त हैं। खरपतवार वाइपर में एक पीवीसी हैंडल होता है, जिसमें कीटनाशक घोल/सस्पेंशन और वाइपर पैड होते हैं। वाइपर पैड से जब तरल बहता है तब वाइपर को खरपतवार के साथ ब्रश किया जाता है। वाइपर पैड में विभिन्न सामग्रियों, जैसे कि नायलॉन की रस्सी की बाती, का उपयोग किया गया है। इस तरह के प्रयोग का एक नुकसान यह है कि सतह धूल से भरी हो सकती है।

cie Lç;j

पारंपरिक हाइड्रोलिक स्प्रेयर से निकलने वाला स्प्रे धौंकनी (ब्लोअर) की मदद से आगे विघटित हो जाता है। वायु धौंकनी से लगे ऐसे स्प्रेयर को वायु–सहायता प्राप्त (एयर–असिस्टेड) बूम स्प्रेयर कहा जाता है। बूम स्प्रेयर का सबसे सरल उदाहरण मोटर चालित धुंध धौंकनी है। ट्रैक्टर स्प्रे और एयरक्राफ्ट पर बड़े पैमाने पर अनुप्रयोगों में उपयोग के लिए बूम स्प्रेयर विकसित किए गए हैं। लांस को अक्सर कई नलिका के साथ फिट किया जाता है, यह संख्या 15 या उससे अधिक तक होती है। एक लांस को विभिन्न आकारों में रैखिक से चाप के आकार में डिजाइन किया गया है। प्रायः केन्द्रापसारक पंखों का उपयोग नलिकाओं के माध्यम से हवा को पंप करने के लिए किया जाता है और सर्वोत्तम निष्पादन के लिए विभिन्न कोणों पर लांस के पास फिट किया जाता है।

Q,x@feLV Cykoj

फॉग/धुंध धौंकनी को ग्लासहाउस, गोदामों और घने पत्तों के अंदर कीटनाशक पहुंचाने के लिए वहां डिजाइन किया जाता है, जहाँ कीटनाशक को वांछित कीट नियंत्रण के लिए वायुवाहक होना

पड़ता है। कोहरे (फॉग) में आमतौर पर 15 माइक्रोन से कम आकार की बूंदें होती हैं और दृश्यता कम हो जाती है। धुंध का वीएमडी 50 और 100 माइक्रोन के बीच होता है और 5 प्रतिशत से कम आयतन 30 माइक्रोन से छोटे आकार का होता है। एरोसोल छोटी बूंदों के लिए उपयोग किया जाने वाला एक शब्द है, लेकिन दबाव बोझ द्वारा उत्पादन तक ही सीमित है। जंगलों में मच्छरों और कीटों को नियंत्रित करने के लिए फॉग्स का उपयोग पार्श्व भवनों के लिए किया जाता है, लेकिन इस तरह के बाहरी अनुप्रयोगों को केवल तभी अनुमति दी जाती है, जब तापमान व्युत्क्रम हो और हवा न हो। कोहरे का उत्पादन या तो गर्मी से होता है यानी थर्मल फॉग या फिर एयर–शीयर और भंवर से जिसे कोहरे के रूप में जाना जाता है।

कई प्रकार के थर्मल फॉगर्स हैं। एक प्रकार पल्स जेट इंजन का उपयोग करके 500°C का निकास तापमान स्थापित कर उसमे एक कीटनाशक डाला जाता है। वाष्पीकरण होता है, इसके बाद कोहरे के घने सफेद बादल पैदा करने के लिए बहुत कम परिवेश के तापमान के साथ संपर्क में वाष्प संघनित होती है। हस्त चालित धौंकनी में दो–स्ट्रोक इंजन होते हैं और गर्मी पैदा करने के लिए घर्षण प्लेट और/या निकास गैसों का उपयोग किया जाता है। बड़े प्रकार की गर्म धौंकनी में एक मोटर और एक ब्लोअर यूनिट होती है। ईंधन को एक दहन कक्ष में पंप किया जाता है और गर्म हवा को एक मिश्रण नोजल में उड़ा दिया जाता है जहां कीटनाशक वाष्पीकृत होता है। छोटी बूंदों को बनाने के लिए शीत धौंकनी एक एयर–शीयर का उपयोग करते हैं। कुछ धौंकनी में हवा को एक भंवर बनाने के लिए घुमाया जाता है जिसमें कीटनाशक डाला जाता है।

enk /keu midj.k

मृदा धूमन के लिए आवश्यक धूमन उपकरण, धूमन के लिए उपयोग होने वाले धुआंरी (फ्यूमिगेंट्स) के प्रकार पर निर्भर करता है:

1. कम दबाव (कम वाष्पशील) तरल धुआंरी
2. अत्यधिक वाष्पशील धुआंरी, जो केवल तभी तरल रहते हैं, जब दबाव में रखा जाता है।

निम्न–दबाव वाले धुआंरी को लागू करने के लिए उपकरण डिजाइन में व्यापक रूप से भिन्न होते हैं, लेकिन धुआंरी की मात्रा को पूरा करने के लिए दो मूल डिजाइनों का उपयोग करते हैं। ये डिलीवरी सिस्टम या तो दबाव (पंप)– चलित या गुरुत्वाकर्षण– चलित होता है।

एक दबाव चलित उपकरण में एक पंप और एक पैमाइश उपकरण होता है और कम दबाव वाले स्प्रेयर के साथ नोजल ओपनिंग (ओरिफिस) के दबाव में फ्यूमिगेंट को बचाता है। गुरुत्वाकर्षण द्वारा चलित आवेदक, नोजल छिद्रों के संकीर्ण आकार का उपयोग करते हैं और गुरुत्वाकर्षण द्वारा बनाए गए दबाव का उपयोग धूमन के उत्पादन को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। एक समान वितरण दर बनाए रखने के लिए निरंतर गति आवश्यक है।

अधिकांश उपकरणों में, जैसे ही धुआंरी टैंक या पात्र खाली होता है एक स्थिर हेड गुरुत्वाकर्षण प्रवाह उपकरण छिद्र पर दबाव को निरंतर स्थिर रखता है। सुई वाल्व, छिद्र प्लेट या डिस्क और केशिका ट्यूब का उपयोग प्रवाह दर को समायोजित करने के लिए किया जाता है।

एक कम दबाव वाली धूमक आमतौर पर मिट्टी या पानी को स्वयं सील के रूप में इस्तेमाल करती है ताकि धुआंरी को वाष्पीकरण और लक्ष्य से बहुत तेजी से दूर जाने से रोका जा सके। उपयोग की जाने वाली कुछ विधियाँ हैं:

1- e'nk btD'ku% मृदा इंजेक्टर धुआंरी को मिट्टी में डालने के लिए (आमतौर पर 6 इंच या अधिक की गहराई में) विभिन्न प्रकार के तंत्र का उपयोग करते हैं और फिर धुआंरी को सील करने के लिए फिर से मिट्टी के साथ क्षेत्र को ढकते हैं।

2- e'nk fuxeu% मृदा निगमन का उपयोग कम–वाष्पशील धुआंरी को लागू करते समय किया जाता है। धुआंरी को आमतौर पर मिट्टी की सतह पर स्प्रे किया जाता है। क्षेत्र को तुरंत 5 इंच या उससे कम की गहराई तक जोता जाता है, और फिर एक पटरे के साथ दबाया जाता है। बिजली चालित रोटरी कल्टीवेटर का भी उपयोग किया जाता है।

3- fHkxkuk% इस विधि में सीलेंट के रूप में पानी का उपयोग किया जाता है। धुआंरी को पानी में मिलाकर मिट्टी को भिगोया जाता है। उपयोग किए जाने वाले उपकरण आकार और अनुप्रयोग के समय पर निर्भर करते हैं। इसे स्प्रिंकलिंग कैन, स्प्रिंकलर सिस्टम, या सिंचाई उपकरण या धुआंरी के साथ छिड़काव या मिट्टी की सतह पर लगाया जा सकता है और तुरंत पानी के साथ क्षेत्र को भर दिया जाता है। पानी की सील की गहराई (आमतौर पर 1–4 इंच गीली मिट्टी) धुआंरी की अस्थिरता पर निर्भर करती है।

अत्यधिक वाष्पशील धुआंरी का प्रभावी अनुप्रयोगः मिट्टी को तार, प्लास्टिक की फिल्म या इसी तरह के आवरण के साथ कसकर सील करने पर निर्भर करते हैं। उच्च दाब वाले धूमक की दो प्रमुख विधियाँ हैं, जो किनारों पर वाष्प– अभेद्य टारपों का उपयोग करती हैं और किनारों के चारों ओर कवच बनाती हैं और टर्प के नीचे धुआंरी को डाला जाता है। अन्य विधि में धुआंरी को इंजेक्शन छेनी के द्वारा मिट्टी में लगाया जाता है और तुरंत बाद ढक दिया जाता है।

अत्यधिक वाष्पशील धुआंरी को बंद दबाव वाले पात्र में संभाला जाना चाहिए। उपकरण गुरुत्वाकर्षण प्रवाह और कम दबाव वाले धूमक के समान है, टैंक में दबाव नोजल छिद्रों पर दबाव बनाए रखता है। टैंक या तो अपनी सामग्री को खाली करने के लिए पर्याप्त दबाव के साथ रिचार्ज किया जाता है, या धुआंरी को विस्थापित करने के लिए एक निष्क्रिय दबाव गैस को धूमन के दौरान टैंक में डाला जाता है। एक गैस दबाव नियामक प्रणाली में एकसमान दबाव बनाए रखता है। सटीक धूमन सुनिश्चित करने के लिए धुआंरी को टैंक, दबाव लाइनों और मीटरिंग उपकरणों में तरल अवस्था बनाए रखने के लिए पर्याप्त दबाव होना चाहिए।

ckxokuh Qlyk d fy, lhfjat

प्रणालीगत कीटनाशक बागवानी के फसलों में ताड़ के पेड़ की तरह इंजेक्ट किए जाते हैं, जो तने में नीचे की ओर 45^0 के कोण पर बेधन द्वारा छोटे छेद करके और छोटे हस्त इंजेक्टर/सिरिंज का उपयोग करके कीटनाशक को इंजेक्ट किया जाता हैं। छेद एक कवकनाशी पेस्ट के साथ कवर किया जाता है या कीटनाशक संसेचन प्लास्टिक प्लग से भरा होता है।

MLVj vkj nkunkj vuç;kx

धूल के सूत्रीकरणों को कृषि कार्यों में पत्ते, मिट्टी, आदि पर डाला जाता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यों में धूल को सार्वजनिक उपयुक्तता, सड़कों आदि पर प्रयोग किया जाता है। प्रायः अत्यधिक जहरीले कीटनाशकों से बनाए ग्रेन्युल सूत्रीकरणों को फसल पौधों के मूल क्षेत्रों के पास मिट्टी में मिलाया जाता है। इन सूत्रीकरणों को विशेष प्रकार के प्रयोग के लिए विशेष उपकरणों की आवश्यकता होती है।

MLVj

धूल (डस्ट) का काम वायु विस्पॉट (एयर ब्लास्ट) के निर्माण से होता है जो धूल कक्ष में जाता है, जिससे धूल एक वितरण ट्यूब के माध्यम से बाहर निकल जाती है। ये ज्यादातर घर के माली और संरचनाओं में कीट नियंत्रण ऑपरेटरों द्वारा उपयोग किया जाता है। डस्टर हस्त या शक्ति संचालित हो सकता है।

gLr MLVj

हस्त–डस्टर में एक निचोड़ बल्ब, धौंकनी, ट्यूब, आरंभक (शेकर), फिसलन (स्लाइडिंग) ट्यूब या हस्त क्रैंक द्वारा संचालित पंखा शामिल हो सकता है। ये हल्के हैं, सीमित स्थानों में आसानी से प्रवेश करने और कीटनाशक के मिश्रण को आसानी से फैलाने मे लाभदायक हैं। हस्त डस्टर के कुछ नुकसान है – उपयोग किए जाने वाले कीटनाशक की उच्च लागत, खराब पर्ण प्रवेश, हवा के साथ बहाव और खराब लक्ष्यीकरण।

ikoj MLVj

पावर डस्टर एक बिजली के पंखे या धौंकनी का उपयोग करते हैं ताकि धूल को लक्ष्य तक पहुँचाया जा सके। इनमें नैप्सेक या बैकपैक प्रकार शामिल हैं। उनकी क्षमता (प्रति घंटे के हिसाब से उपचारित क्षेत्र) हैंड स्प्रेर्स के साथ अनुकूल रूप से तुलना करती है। धूल के फायदे हैं– भार में हल्के, बिना पानी के उपयोग, आसान रखरखाव और कम लागत। हवा के साथ बहाव का खतरा, कीटनाशक की उच्च लागत, असमान वितरण और खराब पर्ण प्रवेश आदि धूल की कुछ हानियां है।

nkunkj vuç;kx

दानेदार अनुप्रयोग का उपयोग मुख्य रूप से कृषि, सजावटी, मैदान, वानिकी और जलीय कीट नियंत्रण में किया जाता है। प्रसारण और मिट्टी बेधन के लिए दानेदार अनुप्रयोग उपलब्ध हैं। प्रसारण के लिए उपकरणो में एक कताई या भंवर डिस्क शामिल है। कुछ अनुप्रयोगों में दबावयुक्त वायु को डिस्क पर दानों को डालने वाले हॉपर पर लगाया जाता है। एक सकारात्मक विस्थापन घूर्णक (रोटर) को प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि यह प्रत्येक चक्कर के लिए एक स्थिर आयतन देता है। ग्रैन्यूल को पैमाइश प्रणाली में लुढ़का दिया जाता है। ट्रैक्टर पर लगे हुए उपकरण में, घूर्णक एक अनुचक्र (ट्रेलिंग व्हील) द्वारा संचालित होता है, ताकि ग्रैन्यूल का वितरण वास्तविक अग्रिम गति के लिए आनुपातिक हो। घूर्णक की गति निर्धारित करने में सावधानी बरती जानी चाहिए ताकि ग्रैन्यूल धूल में न धंसें। यह विशेष रूप से सबसे विषैले कीटनाशक के रूप में महत्वपूर्ण है, जैसे कि एल्डीक्रब, अक्सर दाने के रूप में तैयार किया जाता है।

कुछ मॉडल गुरुत्वाकर्षण चलित होते है। सीड ड्रिल प्रकार के मृदा ड्रिल को फेरो खोलने और दानों के स्थानन द्वारा संचालित किया जाता है। बीज के वितरण के लिए इसके विभिन्न संशोधनों के साथ सीड ड्रिल का उपयोग ग्रैन्यूल के हल–रेखा स्थानन (फरोज प्लेसमेंट) के लिए किया जाता है। अब तक, मिट्टी में ग्रैन्यूल की हल–रेखा स्थानन मृदा जनित कीटों के लिए सबसे अच्छी विधि है।

forj.k ç.kkyh dk p;u

कुशल और सुरक्षित कीटनाशक वितरण को सुनिश्चित करने के लिए एक विशेष कीट नियंत्रण कार्य के लिए एक वितरण प्रणाली का चयन बहुत महत्वपूर्ण है। चयन अक्सर फसल के पर्णसमूह, मिट्टी, पानी आदि जैसे लक्ष्य के आधार पर किया जाता है, संचालन का क्षेत्र/सीमा, कीट नियंत्रण का वातावरण जैसे कि खुला मैदान या बंद वातावरण जैसे कांच घर या आवास इकाइयाँ और मैदान में वायु प्रवाह की स्थिति। वितरण प्रणाली जो बहुत मोटे स्प्रे बूंदे दे सकते हैं, उष्णकटिबंधीय जलवायु में कृषि योग्य फसलों और खरपतवारों के छिड़काव के लिए पसंद किए जाते हैं। ट्रेक्टर माउंट्स और एयरक्राफ्ट्स में उपयोग के लिए महीन स्प्रे उपकरणों का चयन किया जाता है, जहां तापमान और शांत हवा की स्थिति के संबंध में जलवायु सौम्य होते हैं। लेकिन अक्सर उपकरणों की लागत जैसे कई विचार वितरण प्रणाली की योग्यता पर प्रधानता लेते हैं। हाइड्रोलिक स्प्रेयर उपकरणों की खूबियों और अवगुणों को नीचे दी गई तालिका (तालिका 3) में सूचीबद्ध किया गया है, जो अक्सर स्प्रेयर चयन में मार्गदर्शन करते हैं।

rkfydk 3- eU;|vy :i l| fd, x, Lç;j d| Qk;n vkj u|d lku

yhoj l|pkfyr cLrk	ncko Lç;j	ekVjh–r /k|/k /kkduh	cVjh pfyr fLifu;x fMLd Lç;j
लाभ बहुविज्ञता, अधिकांश कीटनाशक और कम मात्रा (100 लि./हैक्टर) मे पानी आधारित सूत्रीकरणों का उपयोग	कीटनाशक की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए उपयुक्त छोटी, हल्की इकाइयाँ। आंतरायिक पंपिंग है इसलिए ऑपरेटर नोजल को निर्देशित करने पर ध्यान केंद्रित कर सकता है	पेड़ों में स्प्रे डाल सकते हैं। ग्रेन्युल डालने के लिए अपनाया जा सकता है और विस्तृत पट्टी ULV–200 लि./है. प्रदान कर सकता है	बड़े बूंदों के साथ हर्बिसाइड एप्लिकेशन के लिए हल्के अलग मशीनें। छोटी बूंद के आकार का बेहतर नियंत्रण। अल्ट्रा लो या बहुत अल्ट्रा लो एप्लीकेशन के लिए आदर्श (2–30 लि./है.)
हानि निरंतर पंपिंग ऑपरेटर की आवश्यकता होती है जो आमतौर पर स्प्रे में चलता है। पानी की आवश्यकता होती है, इसलिए शुष्क क्षेत्रों में कम उपयुक्त है। नोजल पर दबाव में उतार–चढ़ाव हो सकता है।	दबाव में गिरावट आउटपुट और स्प्रे स्पेक्ट्रम को प्रभावित करती है जब तक कि दबाव नियंत्रण वाल्व का उपयोग नहीं किया जाता है। स्प्रेयर की संख्या को कम करने के लिए पसंद किए जाने वाले कम आयतन को फिर से दबाव डालना पड़ता है।	शोर, उच्च पूंजी लागत। इंजन का रखरखाव। तेल के भाव। ले जाने के लिए भारी। सही अनुपात में पेट्रोल और तेल के मिश्रण का उपयोग करने की आवश्यकता है।	बैटरी का उपयोग। स्प्रे में सक्रिय संघटक की उच्च सांद्रता। ULV को विशेष गैर–वाष्पशील योगों की आवश्यकता होती है।

दानों के लिए अनुप्रयोग उपकरणों के बीच विकल्प सीमित हैं और अक्सर बीज ड्रिल बुवाई के समय दाने के आवेदन के लिए सबसे अच्छा और बहुउद्देशीय विकल्प हैं। धूमक की सही पसंद कीटनाशक के इस्तेमाल की अस्थिरता पर आधारित है और यह पर्यावरण और व्यावसायिक सुरक्षा के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण है। किसानों को सरकार द्वारा अधिकृत विशेषज्ञ अधिकारियों से सलाह लेनी होती है।

नैनो फार्मूलेशन विकास के लिए उभयरागी बहुलक : भावी अनुसंधान के लिए अवसर

नज्म अख़्तर शकील, पंकज[1] एवं प्रशांत कौशिक
कृषि रसायन संभाग, [1]सूत्रकृमिविज्ञान संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110 012

भारतीय कृषि में पिछले 50 वर्षों के दौरान उल्लेखनीय प्रगति हुई है। देश में जहां पहले खाद्यान्न की कमी थी वहीं हरित क्रांति के कारण आरक्षित खाद्य भंडार में अब बहुत बढ़ोतरी हुई है। तथापि, वह उत्पादन स्तर प्राप्त करने के लिए जिससे वैश्विक खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से बढ़ती हुई जनसंख्या को आहार उपलब्ध कराने के लिए खाद्यान्न की पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित हो सके। विश्व अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र के और अधिक विस्तार की आवश्यकता है।

पीड़कों, विशेष रूप से खरपतवारों, रोगजनकों एवं पशुओं का प्रकोप मानव उपभोग के लिए उगाई जाने वाली फसलों की उत्पादकता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है क्योंकि ये सभी अनिवार्य पोषक तत्वों के लिए फसलों से प्रतिस्पर्धा करते हैं और इस प्रकार फसलों की उपज और गुणवत्ता को कम कर देते हैं। इसके साथ ही परिवर्तित होती हुई जलवायु संबंधी स्थितियों के कारण पीड़कों का दबाव और अधिक गहन हो जाता है। इसके अलावा वर्ष 2050 तक 9 बिलियन लोगों को आहार उपलब्ध कराने के लिए कृषि के क्षेत्र में और अधिक उत्पादन करना होगा ताकि जलवायु परिवर्तन के कारण अधिक कठिन पर्यावरण के विरुद्ध संघर्ष किया जा सके।

पीड़कों और रोगों के कारण कृषि उपज में होने वाली हानि तथा कृषि उपज की गुणवत्ता संबंधी विशेषताओं में सुधार की मांग और इसके साथ–साथ कृषि उपज के मूल्यवर्धन के कारण फसल सुरक्षा से संबंधित उत्पाद बहुत महत्वपूर्ण हो जाते हैं। किसान इन उत्पादों पर निर्भर रहते हैं ताकि वे अपनी फसलों को पीड़कों से होने वाली हानि से बचा सकें क्योंकि ये पीड़क उपज में कमी लाते हैं। इस प्रकार, अब फसल सुरक्षा संबंधी उत्पादों का प्रभावी उपयोग पहले की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण हो गया है।

फसल सुरक्षा संबंधी उत्पाद किसानों को परिवर्तित हुई दशाओं के प्रति अनुकूल ढालने में सक्षम बनाते हैं तथा बढ़ी हुई उपज, कम भूमि में अधिक उत्पादन व भूख के जोखिम को कम करके लाभ पहुंचाते हैं। फसल सुरक्षा संबंधी उत्पाद किसानों की अभिनव तथा पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल उत्पादों के माध्यम से सहायता करते हैं और इस प्रकार ये किसानों के फसल पौधों की पीड़कों, रोगों व खरपतवारों से सुरक्षा करते हैं जिसके कारण स्वास्थ्य पर बिना कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़े अधिक टिकाऊ उपज प्राप्त होती है। ऐसे परिदृष्य में फसल सुरक्षा संबंधी उत्पाद कृषि में पारिस्थितिक विज्ञानी, आर्थिक तथा सामाजिक टिकाऊपन के लिए अपरिहार्य हैं।

रासायनिक पादप सुरक्षा संबंधी उत्पाद आधुनिक व टिकाऊ रूप से प्रबंधित कृषि का एक अंग है। इन उत्पादों से उच्च उपज सुनिश्चित होती है जिसके परिणामस्वरूप कारगर किस्में विकसित होती हैं,

पौधों को पोषक तत्वों की अच्छी आपूर्ति होती है और अभिनव कृषि अभियांत्रिकी का विकास होता है। तथापि, इनके सीधे अनुप्रयोग में अनेक कमियां हैं जिनमें गंभीर पर्यावरणीय प्रदूषण (जल, वायु तथा मृदा), अलक्षित जीवों पर पड़ने वाला प्रतिकूल प्रभाव, अचयनशीलता, प्रतिरोध का विकास तथा कृत्रिम रसायनों की उच्च लागत जैसे पहलू शामिल हैं। पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल विधि से पीड़कों और रोगों से कृषि फसलों की सुरक्षा करना तथा खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता व उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्ततम रासायनिक पादप सुरक्षा की आवश्यकता होती है।

पीड़कनाशक प्रदानीकरण में नैनोटैक्नोलॉजी का उपयोग अपेक्षाकृत नया और विकास की आरंभिक अवस्थाओं में है। इस प्रौद्योगिकी का उद्देश्य परंपरागत पीड़कनाशकों के गैर समझे–बूझे अंधाधुंध उपयोग को कम करना तथा उनका सुरक्षित उपयोग सुनिश्चित करना है। नैनो–स्केल कणों का नए रासायनिक और/अथवा भौतिक गुणों के लिए किया जाने वाला उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। इनका उपयोग खेतों में तो किया जाता ही है, साथ ही चिकित्सा, जैवप्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स, पदार्थ विज्ञान एवं ऊर्जा क्षेत्र भी कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहां इनका उपयोग बढ़ रहा है। ये आशाजनक नैनो कण कृषि क्षेत्र की आंख के समान हैं जिसके लिए निरंतर नई–नई खोजों की आवश्यकता है, ताकि बढ़ती हुई वैश्विक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके तथा जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटा जा सके। कृषि नैनो प्रौद्योगिकियों के अनुप्रयोगों पर होने वाले अनुसंधानों को अनेक कृषि व पर्यावरणीय चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए किया जा रहा है जैसे टिकाऊपन, उन्नत किस्में तथा बढ़ी हुई उत्पादकता। इस उद्देश्य से कृषि नैनो प्रौद्योगिकी, विशेष रूप से रोग प्रबंध तथा फसल सुरक्षा से संबंधित अनेक वैज्ञानिक प्रकाशन निकाले गए हैं और पेटेंट किए गए हैं। कृषि में नैनो पदार्थों का उद्देश्य, विशेष रूप से फसल पर छिड़के जाने वाले रासायनिक उत्पादों की मात्रा को कम करना है। ऐसा चतुराई से फसलों को सक्रिय घटक प्रदान करके, उर्वरीकरण में पोषक तत्वों को होने वाली हानि को न्यूनतम करके, जल का ठीक–ठीक उपयोग करते हुए उपज में वृद्धि करके व पोषक तत्व के प्रबंध द्वारा किया जाना संभव है। इसके अतिरिक्त जैव, नैनो संकुलों का उपयोग परंपरागत रूप से प्राप्त की गई कृषि सामग्री जैसे गेहूं के भूसे तथा सोयाबीन के छिलके को सृजित करने के लिए भी किया जा सकता है। कृषि रसायन (पीड़कनाशक, उर्वरक, वृद्धि हार्मोन, आदि) प्रदानीकरण के संदर्भ में नैनो स्केल कणों में ऐसे नए गुण हैं जिनसे कृषि रसायनों की दक्षता बढ़ सकती है और प्रदानीकरण प्रणाली 'स्मार्ट' बन सकती है। इस स्मार्ट प्रदानीकरण प्रणाली से रसायन नियंत्रित तथा लक्षित विधि से प्रदान किए जा सकते हैं जैसा कि मनुष्यों को नैनो औषधियां देते समय किया जाता है।

उभयरागी बहुलकों के संश्लेषण व उनके लक्षण–वर्णन के प्रति हाल ही में रुचि बढ़ी है। ऐसा उनकी अनोखी आण्विक संरचना के कारण हुआ है जिसमें दो विरोधी भाग होते हैं – पहला जल विरागी ब्लॉक जो जल में अघुलनशील होता है और दूसरा जल में घुलनशील जलरागी ब्लॉक। इस प्रकार एक उभयरागी (उभयः दोनों प्रकार का; रागी : किसी के प्रति राग या विराग) गुण निर्मित होता है।

उभयरागी अणुओं की आण्विक संरचना में दो विपरीत भागों की उपस्थिति से घोल में विशेष गुण युक्त विशेषताएं उत्पन्न होती हैं जैसे अंतर सतहों और सतहों पर अधिशोषण, मिसेली समुच्चयों में

विविध प्रकार की ज्यामितीय के साथ स्वतः–संकलित। बहुलकी (पॉलिमेरिक) मिसेली बहुरागी ब्लॉक सहबहुलकों (कोबहुलक) से बने होते हैं जो औषधियों तथा पीड़कनाशक प्रदानीकरण प्रणाली में आकर्षी गुणों की एक श्रृंखला प्रदर्शित करते हैं, जैसे श्रेष्ठ जैव सुसंगतता तथा इन विट्रो व इन विवो उच्च स्थिरता तथा इनका उपयोग जलीय घोल में कम घुलनशील विभिन्न एजेंटों के कवचीकरण में किया जा सकता है। ये बहुलक एक से अधिक प्रकार के एकलक (मोनोमर) के बहुलकीकरण से प्राप्त होते हैं जिनमें से विशिष्टतः एक जलविरागी और एक जलरागी होता है, ताकि परिणामस्वरूप प्राप्त होने वाला अणु उन क्षेत्रों से युक्त हो जिनमें किसी जलीय घोल के लिए विपरीत संलयताएं मौजूद हों।

उभयरागी ब्लॉक सहबहुलक के मिसली गुण प्रत्येक ब्लॉक की प्रकृति पर निर्भर करते हैं और ऐसे स्व–संगठित मिसेल के सतह संबंधी गुण जलरागी ब्लॉक की संरचना पर अत्यधिक निर्भर होते हैं। नैनो कणों के विभिन्न स्वरूप निर्मित करने की क्षमता के कारण इन बहुलकों की ओर अत्यधिक ध्यान आकर्षित हुआ है।

उभयरागी बहुलक जटिल तथा साधारण श्रेणीबद्ध नैनो प्रणालियां आरोहित करने के लिए सर्वाधिक आशाजनक मौलिक निर्माण खण्ड हैं। इन बहुलकों का अनुप्रयोग अत्यधिक व्यापक है और बहुलक या बहुलक आधारित नैनो प्रौद्योगिकियां तेजी से उभर रही हैं। इन बहुलक को नैनोमापी परास में अनेक आयामों की संख्या के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है; अ–स्वतःसंकलित संरचनाएं तथा स्व–स्वतः संकलित संरचनाएं बहुलकी नैनो कण तब अत्यधिक स्थिरता प्रदर्शित करते हैं जब वे जैविक तरलों के सम्पर्क में आते हैं तथा उनकी बहुलकी प्रकृति के कारण औषधियों का विमोचन नियंत्रित रूप से होता है। नैनो कण अधिकांश प्रदानीकरण मार्गों के लिए औषधी प्रदानीकरण की उचित प्रणालियों का खुलासा करते हैं। रोगरोधी प्रणाली द्वारा उनकी त्वरित पहचान के कारण सुई द्वारा लगाए जाने वाले वाहकों के रूप में उनका उपयोग भले ही सीमित क्यों न हो। नैनो कण या तो पूर्व निर्मित बहुलकों, जैसे पॉली एस्टर (अर्थात् पॉलिलैक्टिक अम्ल) या बहुलकीकरण के दौरान मोनोमर से तैयार किए जाते हैं, जैसा कि एल्काइल साइनोएक्राइलेट के मामले में होता है। नैनो संरचित बहुलक तेजी से विकसित हो रहे हैं और इसका कारण उनका आकार तथा गुण हैं। विभिन्न लंबाई पैमानों पर स्वः संकलित संयोग के कारण संरचनात्मक हायरार्की उत्पन्न होती है। इससे नैनो संरक्षित पदार्थ निर्मित होने की संभावनाएं काफी बढ़ जाती हैं तथा स्वःसंकलित संरचनाओं की प्रावस्था परिवर्तन के आधार पर उनके परिवर्तनशील (अनुक्रियाशील) गुण भी परिवर्तित हो जाते हैं। हाल ही के वर्षों में नैनो सामग्री जैसे बहुलक–औषध कांजूगेट, लिपोसोम,नैनोकण तथा बहुलम मिसेल को ऐसी जलविरागी औषध प्रदानीकरण की वाहक क्षमता वाला माना गया है जिससे उपरोक्त उल्लिखित समस्याएं हल की जा सकती हैं। उभयरागी ब्लॉक सहबहुलकों से बने बहुलक मिसेल में औषधि प्रदानीकरण प्रणालियों के आकर्षण गुणों की श्रृंखला प्रदर्शित हुई है, जैसे श्रेष्ठ जैव सुसंगतता तथा इन विट्रो व इन विवो उच्च स्थिरता। इनका उपयोग विभिन्न कम घुलनशील एजेंटों के कवचीकरण के लिए सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इन नैनो आकार के मिसेल में एक जलरागी बाहरी खोल होता है और एक जलविरागी आंतरिक केन्द्रीय भाग होता है जिसका उपयोग जलीय घोल में वसा रागी औषधियां मिलाने के लिए किया जा सकता है।

पॉली इथिलीन ग्लाइकॉल (पीईजी) आधारित (सह) बहुलकों का उपयोग दवा वितरण प्रणाली के

प्राथमिक घटकों के रूप में किया गया है। इसका कारण न केवल पीईजी का अ–विषाक्त व जैव सुसंगत व जैविक प्रणालियों के लिए पर्याप्त टिकाऊ व स्थिर होना है बल्कि इसका अन्य कारण इनकी श्रेष्ठ घुलनशीलता, कम लागत, सरलता से उपलब्धता और रासायनिक रूप से रूपांतरित होने व अन्य बहुलकों से सरलता से जुड़ जाना है। पीईजी का एक अन्य मुख्य गुण अन्य अणुओं के साथ जिसका सम्बद्ध होना है तथा ऐसी सतहें उपलब्ध कराना है जो जैव सुसंगत हो, इसके अलावा सुरक्षा पूर्ण कवच उपलब्ध कराना भी इसकी एक विशेषता है। सुरक्षात्मक कवच से जैविक प्रणालियों (जैसे मानव काया) में पदार्थों को अस्वीकार करने की प्रवृत्ति धीमी पड़ जाती है और इनके कारण जीवाणुओं का अधिशोषण बहुत कम हो जाता है और उपयोग में आसानी होती है। इसके अतिरिक्त इसे अन्य अणुओं के साथ बिना उनका रसायनविज्ञान प्रभावित किए, जोड़ा जा सकता है, लेकिन उनकी घुलनशीलता नियंत्रित हो सकती है और आकार भी बढ़ सकता है। इन नए गुणों को आण्विक संरचना में रासायनिक सुधार करके और अधिक बढ़ाया जा सकता है।

पीईजी में मातृ दो अंतस्थ समूहों की स्थिति से औषधियों से संबंधित इसकी उपयोगिता सीमित हो जाती है जिसका प्रभाव औषधियों की लोडिंग क्षमता पर पड़ता है। औषध प्रदानीकरण प्रणालियों को और अधिक बहुमुखी बनाने के लिए पूरे विश्व में अनुसंधानकर्ताओं ने विभिन्न आण्विक भार के पीईजी को लेते हुए तथा उनके जलविरागी खंड की चलशीलता से युक्त उनका बहुलकीकरण करते हुए पीईजी–आधारित बहुलक/सहबहुलक संश्लेषित करने के प्रयास किए हैं, ताकि निर्मित बहुलक उभयरागी प्रकृति के हों। यह वांछनीय है कि भौतिक रूप से कवचित छोटे सक्रिय अभिकर्मकों (जैसे औषधियां, पीड़कनाशक) सक्षम मिसेल को डिज़ाइन करने के लिए बहुलक की उभयरागी संरचनाएं हों। जलरागी पीईजी खंड को एक या इससे अधिक जलविरागी लिगेंड अथवा खंड (डों) से सम्बद्ध करके उभयरागी बहुलक तैयार किया जा सकता है। यह उभयरागी बहुलक किसी विशिष्ट विलायक प्रणाली, जैसे जल में मिसेल के रूप में पुनः संकलित होने में सक्षम होना चाहिए।

उभयरागी ब्लॉक सहबहुलक, जिसमें जलरागी और जलविरागी घटक होते हैं, गहन रूप से खोजे गए हैं और इसका कारण न केवल उनकी अनोखी स्वःसंगठित होने की विशेषता है बल्कि उनकी व्यापक श्रेणी की अनुप्रयोग क्षमता भी है जैसे औषधि प्रदानीकरण एवं विलगन प्रौद्योगिकी प्रणालियां आदि। उभयरागी ब्लॉक बहुलकों के मिसेली गुण प्रत्येक ब्लॉक की प्रकृति पर निर्भर करते हैं तथा स्वतः संगठित मिसेल के सतह संबंधी गुण जलरागी ब्लॉकों की संरचनाओं पर अत्यधिक निर्भर होते

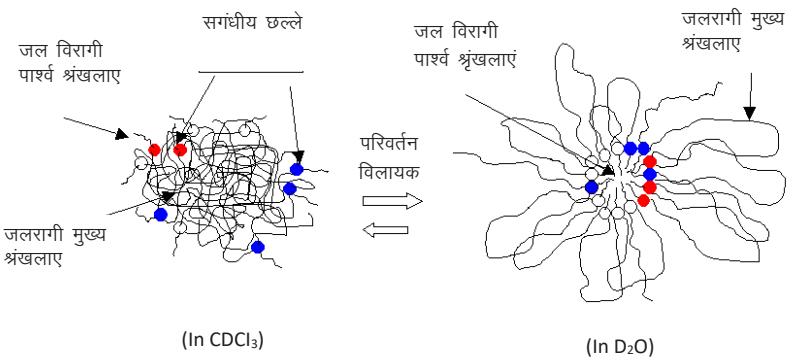

उभयरागी सह–बहुलकों के स्वतः संकलन द्वारा मिसेल का निर्माण

हैं। जलीय माध्यमों में उभयरागी सह–बहुलकों के स्वतः संकलन द्वारा मिसेल का निर्माण नीचे दिए गए चित्र में दर्शाया गया है।

जैसा कि चित्र में दर्शाया गया है विलायकों के प्रकार को परिवर्तित करके अर्थात् कार्बनिक से जलीय प्रणाली में परिवर्तित करके बहुलक स्थायी समुच्चय या मिसेल में स्वतः संकलित हो जाते हैं। जल विरागी पार्श्व श्रृंखलाओं के मिसेल के केन्द्रीय मुख्य भाग में होने की सर्वाधिक संभावना होती है। इन मिसेल के घूर्णन की त्रिज्या नैनो परास के अंदर आती है, अतः पीईजी–आधारित बहुलकों पर आध ाारित जैव सक्रिय अणुओं के नैनो फार्मूलेशन के धीमे विमोचित होने वाले स्वरूपों को विकसित करना संभव है।

उभयरागी बहुलकों का उपयोग कार्बोफ्यूरॉन, थियामेथोक्सेम, इमिडाक्लोप्रिड, बीटा–साइफ्लूथ्रिन, थिरेम, कार्बेन्डाज़िम, एज़ोक्सीस्ट्रोबिन, मैंकोजेब और एज़ाडिरेक्टिन के नियंत्रित विमोचित होने वाले फार्मूलेशन के विकास के लिए किया जा चुका है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि नैनो कवचित पीड़कनाशक फार्मूलेशन के उपयोग से प्रयुक्त होने वाले पीड़कनाशक की खुराक में कमी आएगी और मानव के उनके सम्पर्क में आने में भी कमी होगी। इस प्रकार, ये फसल सुरक्षा के लिए पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल और सुरक्षित सिद्ध होंगे। विभिन्न नैनो कवचित पदार्थों ने अपनी क्षमता प्रदर्शित की है तथा उपलब्ध पीड़कनाशकों के कवचीकरण के द्वारा उनके उपयोगी अनुप्रयोग प्रदर्शित किए गए हैं जिनके वांछित परिणाम प्राप्त हुए हैं। ऐसे बहुलकों में से रंध्रीय सिलिका, मृत्तिका तथा एलडीएच–आधारित नैनो पदार्थ बहुत महत्वपूर्ण पाए गए हैं। पीड़कनाशकों तथा कवचीकरण पदार्थों और इसके साथ ही पीड़कनाशक फार्मूलेशन की कवचीकरण की यांत्रिकी के बीच सुसंगता को समझने के लिए और अधिक अध्ययनों की आवश्यकता है।

इन नए उत्पादों का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ता है, इससे संबंधित पर्याप्त आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं और यह भी ज्ञात नहीं है कि नैनो फार्मूलेशनों का मूल्यांकन वर्तमान पीड़कनाशक विनियमनकारी ढांचे के अंतर्गत किया जा सकता है या नहीं। यह ज्ञात तथ्य है कि विश्व के अधिकांश भागों में पीड़कनाशकों को अत्यंत कठोर विनियमनकारी प्राधिकृतिकरण प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। इन फार्मूलेशनों का पर्यावरण पर पड़ने वाला संभावित प्रभाव तथा पीड़कनाशकों में सक्रिय घटकों के प्रभाव का मूल्यांकन अभी तक केवल सीमित सीमा के अंतर्गत ही हुआ है। उदाहरण के लिए यह अवध ाारणा है कि फार्मूलेशन तथा उसके सक्रिय घटक खेत में उपयोग करने के बाद तेजी से अलग–अलग हो जाते हैं। तथापि, खेत में अनुप्रयोग के बाद नैनो पीड़कनाशकों का व्यवहार कैसा होता है, इसके बारे में बहुत कम आंकड़े उपलब्ध हैं और यह भी ज्ञात नहीं है कि नैनो पीड़कनाशकों का वर्तमान पीड़कनाशक विनियमनकारी ढांचे के अंतर्गत पर्याप्त रूप से मूल्यांकन किया गया है अथवा नहीं। इन नए उत्पादों से संबंधित नए जोखिमों तथा नए लाभों का मूल्यांकन करने के लिए यह आवश्यक है कि नैनो पीड़कनाशकों के सम्पर्क में आने का क्या प्रभाव पड़ता है, इसका पर्याप्त मूल्यांकन किया जाना चाहिए। वर्तमान में मृदा आव्यूह में बहुलक नैनो वाहकों का पता लगाना या उनका मात्रात्मक निर्धारण करना संभव नहीं है क्योंकि उनका तत्वीय संघटन एक समान होता है। इसके अलावा ऐसी उचित विलेषणात्मक तकनीकों को विकसित करने की भी आवश्यकता होगी जिनसे पीड़कनाशकों तथा अन्य

जैव सक्रिय पदार्थों के लिए अधिक कार्यनीतिपरक नैनो सक्षम प्रदानीकरण प्रणालियां डिज़ाइन की जा सके और इसके साथ ही नए जोखिमों तथा लाभों का सषक्त मूल्यांकन सुनिश्चित किया जा सके। ऐसे अनेक व्यापक जैविक नैनो कण हैं जो पर्यावरण में जान–बूझकर अथवा अनजाने में छोड़े गए हैं (जैसे खाद्य पदार्थों, औषधि उद्योग, या सौंदर्य उद्योग, बहुलकों के खंड और अन्य प्लास्टिक अपशिष्ट)। पर्यावरण पर इनका क्या प्रभाव पड़ता है इसका मूल्यांकन करने के लिए तथा संदूशकों के साथ ये किस प्रकार अंतरक्रिया करते हैं, इस दृष्टि से उन्नत प्रयोगात्मक व मॉडलिंग युक्तियों की तत्काल आवश्यकता है। स्वतः संवेदी शक्ति का उपयोग करके लक्षित क्षेत्र में सक्रिय तत्व को विमोचित करने के लिए नैनो कवचीकरण सामग्रियों के नियंत्रित विमोचित होने संबंधी गुणों पर और अधिक खोज करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त नैनो कवचित पदार्थों के लागत–लाभ विश्लेषण से संबंधित ज्ञान की कमी के कारण पीड़कनाशक प्रदानीकरण में उनका उपयोग करने में बाधा उत्पन्न होती है। साथ ही इन पदार्थों के व्यवहार तथा पर्यावरण पर पड़ने वाले इनके अंतिम प्रभाव से संबंधित और अधिक खोज होने से इनके वाणिज्यीकरण के लिए एक नियंत्रित व विनियमनकारी ढांचा स्थापित करने में सहायता मिलेगी।

उन्नत पादप सुरक्षा के उपकरण

इंद्र मणि एवं दिलीप कुमार कुशवाहा
कृषि अभियांत्रिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

भारतीय कृषि देश की सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में, 15 प्रतिशत की हिस्सेदारी के साथ अर्थव्यवस्था की रीढ़ है (केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय, सीएसओ)। वैश्विक फसल उत्पादन का लगभग 25 प्रतिशत कीटों, खरपतवारों और बीमारियों के हमलों के कारण नष्ट हो जाता है। अतः उत्पाद को सुरक्षित रखने में कृषि रसायनों की भूमिका महत्वपूर्ण है। भारत में कम उत्पादकता के कई कारणों में से एक कारण कीटों के हमले से फसलों का नुकसान है। भारत में हर साल किसानों द्वारा उत्पादित खाद्य पदार्थों का औसतन 15–25 प्रतिशत हिस्सा कीटों और बीमारियों द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। कीटों और फसल कटाई उपरांत से होने वाली फसलों को बढ़ी क्षति, खाद्य सुरक्षा के लिए एक गंभीर खतरा बनी हुई है और कृषि रसायनों के महत्व को दर्शाती है। भारतीय कीटनाशक रसायन उद्योग 4.1 मिलियन (यूएस डॉलर) का बढ़ता उद्यम है। कीटों एवं रोगों के आक्रमण की सघनता एवं बारम्बारता पर कीटनाशक रसायन उद्योग की क्षमता निर्धारित होती है। घरेलू कीटनाशक उद्योग अनियमित मानसून पर निर्भर है। मानसून उचित समय पर आने और आवश्यक मात्रा में बारिश होने से कीटनाशकों और छिड़काव यंत्रों की मांग भी बढ़ जाती है। कृषि कार्य में कीटनाशक अंतिम इनपुट के रूप में देना होता है जिसके कारण, कीटों, खरपतवारों आदि से फसलों के विनाश को रोकने के लिए उपयोग किया जाता है, जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है। कीटनाशकों को पहले तकनीकी ग्रेड उत्पाद (85 प्रतिशत या अधिक सक्रिय रासायनिक अवयवों) के रूप में निर्मित किया जाता है जो की उच्च व्यावसायिक शुद्धता है। इसके बाद सक्रिय तत्व में वांछित सूत्रीकरण को प्राप्त करने के लिए अक्रिय अवयवों जैसे सॉल्वैंट्स, एडजुवेंट और फिलर्स इसके साथ मिलाये जाते हैं। सक्रिय संघटक कीट को मारता है जबकि अक्रिय घटक पौधों को संभालने, छिड़काव और कोटिंग देने में सहायता करता है। भारत सन 2017 के आंकड़ों के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान और चीन के बाद में अनुमानित 4.9 बिलियन डॉलर के क्षमता के साथ कीटनाशकों का चौथा सबसे बड़ा वैश्विक उत्पादक है और भविष्य में इसके 10 प्रतिशत वृद्धि होने की सम्भावना है (FICCI, 2017–2018)। वैश्विक कीटनाशक बाजार में भारत की हिस्सेदारी लगभग 10 प्रतिशत है। भारत की कीटनाशकों की खपत प्रति हैक्टर दर से, यह 0.6 किलोग्राम/हैक्टर के साथ निम्न स्तर है जबकि अमेरिका और जापान में लागत मात्रा क्रमशः 5–7 और 11–12 किलोग्राम/हैक्टर है। भारतीय बाजार में कीटनाशकों की हिस्सेदारी 60 प्रतिशत है वही कवक, खरपतवारनाशी व अन्य के हिस्सेदारी क्रमशः 18, 16 और 6 प्रतिशत है। भारत में, कुल कीटनाशक उत्पादन का लगभग तीन प्रतिशत हिस्सा जैविक कीटनाशी का है। जैविक कीटनाशी का गैर विषैले प्रकृति का होने के कारण भविष्य में विकास की अभूतपूर्व क्षमता है। प्रमुख जैविक कीटनाशी *बेसिलस थुरिंगेंसिस*, एनपीवी तथा *ट्राइकोडर्मा* है।

कृषि रसायनों के छिड़काव के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:

1. खरपतवारों के कुप्रभावों को कम करने के लिए खरपतवारनाशी का छिड़काव करना
2. रोगजीवाणुओं को नष्ट करने के लिए रोगनाशी का छिड़काव
3. विभिन्न प्रकार के शत्रु कीटों का नाश करने के लिए कीटनाशी का छिड़काव
4. मैगनीज या बोरान जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव

कीटनाशक शब्द का उपयोग समग्र रूप से कीटनाशकों, कवकनाशी, खरपतवारनाशी, कृन्तकों, उद्यान रसायनों, लकड़ी के संरक्षक और घरेलू कीटाणुनाशक के लिए प्रयोग होता है। सामान्यतः कीटनाशकों का वर्गीकरण तीन प्रकार से किया जा सकता हैः

(i) क्रिया विधि के आधार पर

(ii) लक्षित कीट प्रजातियों के आधार पर

(iii) कीटनाशकों की रासायनिक संरचना के आधार पर

—f"k mRikndrk e l/kkj d fy, dhVuk'kd d l egRoi.k g

पिछले 70 वर्षों में, भारत में कृषि रसायनो का उपयोग 30 गुना बढ़ गया है (तालिका–1)। कीटनाशकों का छिड़काव धूल या धुंध के रूप में पौधों और मिट्टी पर किया जाता है। ज्यादातर रसायन महंगे होते हैं और इनके उचित अनुपात में छिड़काव के लिए प्रभावी यंत्रों डस्टर और स्प्रेयर की आवश्यकता होती है।

rkfydk 1% —f"k jlk;uk d mi;ksx dk le; d lkFk c<rk ifj–';

वर्ष	1950–51	1960–61	1970–71	1980–81	1991–92	1999–2000	2010–11	2016–2017
उपयोग (कि.ग्रा./है.)	0.02	0.06	0.15	0.26	0.38	0.35	0.50	0.60

(श्रोत: Project report "Study on status and projection estimate of agricultural implements and machinery, IAS-RI, 2010; Report: Mechanization for sustainable Agricultural intensification in SAARC Regions, 2017)

भारतीय बाजार में ये यन्त्र विभिन्न आकार व क्षमताओं में उपलब्ध है जो विभिन्न तकनीकों पर आधारित है। कीटनाशकों के बारे में किसान जागरुकता के निम्न स्तर के कारण भारत में प्रति हैक्टर कीटनाशक की खपत कम हुई है। इसलिए भारत में कीटनाशकों की प्रति हैक्टर खपत दुनिया में सबसे कम है। किसानों को कीटनाशक के फायदे और इसके सुरक्षित उपयोग के बारे में शिक्षित करने से देश में कीटनाशक की मांग बढ़ेगी। खाद्यान्नों की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए या तो उत्पादन के तहत क्षेत्र में वृद्धि की जानी चाहिए या मौजूदा भूमि की उत्पादकता में सुधार किया जाना चाहिए। चूंकि कृषि योग्य भूमि सीमित है, उत्पादकता बढ़ाना एकमात्र विकल्प उपलब्ध है। यह केवल उच्च उपज वाले बीज, उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। जैसे–जैसे फसल की पैदावार बढ़ती है, कीटों के हमले में वृद्धि होती है जिससे कीटनाशकों की मांग बढ़ती है। कीटनाशकों के मांग के बढ़ने के साथ ही छिड़काव यंत्रों की उसी अनुपात में मांग बढ़ जाती है।

विभिन्न फसलों में खरपतवार एवं कीट नियंत्रण में मशीनीकरण के स्तर का परिदृश्य देखा जाये (तालिका 2) तो खाद्यान्न फसलों में सबसे अधिक मशीनीकरण 60–90 प्रतिशत तक पहुँच गया है।

वहीं तिलहनी फसलों में इस मशीनीकरण का स्तर 60–80 प्रतिशत तक पहुँच गया है। चारे की फसल, सब्जी की फसल और बागवानी फसलों में कीट नियंत्रण संबंधी मशीनीकरण का स्तर क्रमशः 80–90, 80–90 व 40–50 प्रतिशत तक पहुँच गया है। बागवानी फसलों में मशीनीकरण का स्तर सबसे कम है जिसका मुख्य कारण वृक्षों की ऊंचाई है जिसके कारण उन पर छिड़काव कर पाना कठिन हो जाता है। वैसे ता बागवानी संबंधी स्प्रेयर उपलब्ध है लेकिन उनका प्रचलन अभी उच्च स्तर पर नहीं पहुंचा है।

rkfydk 2% fofHkUu Qlyksa esa [kjirokj ,oa dhV fu;a=.k esa e'khuhdj.k dk Lrj

Øe la[;k	Qly	[kjirokj ,oa dhV fu;a=.k] %
1.	धान	80–90
2.	गेहूं	70–80
3.	आलू	80–90
4.	कपास	50–60
5.	मक्का	70–80
6.	चना	60–70
7.	बाजरा	60–70
8.	तिलहन	60–80
9.	चारे की फसल	80–90
10.	सब्जी की फसल	80–90
11.	बागवानी फसलें	40–50

(श्रोत : AMMA India, 2014)

भारत में वर्ष 2013–14 के आंकड़ों के अनुसार (तालिका 3) मानव शक्ति एवं इंजन शक्ति से संचालित स्प्रेयर/डस्टर की संख्या क्रमशः 2214 व 796 हजार है। जो की वर्ष 2031–32 में अनुमानित आंकड़ों के अनुसार मानव शक्ति एवं इंजन शक्ति से संचालित स्प्रेयर/डस्टर की संख्या क्रमशः 2611 व 1823 हजार होने की सम्भावना है।

rkfydk 3% Hkkjr esa ekuo pfyr ,oa 'kfä pfyr Lç;j@MLVj dh la[;k

वर्ष	सुरक्षा उपकरण संख्या (हजार में)	
	मानव चलित	शक्ति चलित
1992–93	1827	303
2003–04	2046	561
2013–14	2214	796
2031–32	2611.27	1823.82

(श्रोत : Project report "Study on status and projection estimate of agricultural implements and machinery, IASRI, 2010; Report: Mechanization for sustainable Agricultural intensification in SAARC Regions, 2017)

यदि शक्ति चलित स्प्रेयर/डस्टर की संख्या को प्रति हजार हैक्टर के अनुसार देखा जाये तो ये वर्ष 1972–73 के मुकाबले वर्ष 2012–13 में बढ़कर 22 प्रतिशत तक पहुँच गया और वर्ष 2022–23 में बढ़कर 29 प्रतिशत होने का अनुमान है (तालिका 4)। भारत में पादप सुरक्षा उपकरणों की निर्माण इकाइयों की संख्या 300 के लगभग है।

rkfydk 4% Hkkjr esa 'kfä pfyr Lçs;j@MLVj midj.kksa dh la[;k dk ifj–';

वर्ष	1972–73	1982–83	1992–93	2002–03	2012–13	2022–23	2023–24	2024–25
संख्या प्रति 1000 है.	0.249	0.884	2.131	3.810	5.459	7.134*	7.302*	7.472*

* अनुमानित आंकड़ा

(श्रोत: Project report "Study on status and projection estimate of agricultural implements and machinery, IAS-RI, 2010; Report: Mechanization for sustainable Agricultural intensification in SAARC Regions, 2017)

cwfndk vkdkj dk egÙo rFkk eqy ckrsa

दरअसल बूँदिका आकार का उसके बहाव एवं पौधे के प्रभावित भाग तक पहुंचने में गहरा सम्बन्ध है। बूँदिका आकार एक प्रभावी कारक है तथा विभिन्न उद्देश्यों हेतु उपयुक्त बूँदिका की संस्तुति की गयी है (तालिका 5)। उड़ने वाले कीड़ों को निशाना बनाने के लिए बूँदिका का आकार 10–15 माइक्रोन मीटर संस्तुत है, जबकि रेंगने व चूसने वाले कीड़ों के लिए बूँदिका का आकार 30–35 माइक्रोन मीटर संस्तुत है। पौधे की सतह और मिट्टी की सतह पर छिड़काव के लिए बूंदो का भारी होना आवश्यक होता है जिससे वे बिना बहाव के ऊर्ध्वाधर दिशा में नीचे की ओर गिर सकें। पौधे के सतही हिस्से में रहने वाले कीटों आदि को निशाना बनाने के लिए बूँदिका का आकार 60–150 माइक्रोन मीटर संस्तुत है जबकि मिटटी की सतह व खरपतवारनाशी के लिए 250–500 माइक्रोन मीटर संस्तुत है।

rkfydk 5% fofHkUu mís';ksa gsrq mi;qä cwfndk vkdkj

mís';@fu'kkuk	cwfndk dk vkdkj ¼ekbØksu ehVj esa½
उड़ते कीड़े	10–15
रेंगने एवं चूसने वाले कीड़े	30–35
पौध सतह	60–150
मिटटी की सतह–फसल जमने से पहले खरपतवारनाशी का छिड़काव	250–500

इन बूँदिका के आकार को प्राप्त करने के लिए एक बेहद ही सरल उपकरण चंचु नलिका/नोजल का प्रयोग किया जाता है। नोजल द्वारा दबाव में द्रव की बूंदें एक स्वरुप में तोड़ने के लिए किया जाता है। नोजल के साधारण कार्यकारी सिद्धांत होने बाद भी, बाजार में ये विभिन्न डिजाइन और रेंज में उपलब्ध हैं। एयर एटमाइजिंग नोजल सबसे छोटी बूंद के आकार का उत्पादन करते हैं, इसके बाद फाइन स्प्रे, हॉलो कोन, फ्लैट फैन और फुल कोन नोजल होते हैं। दवाव, द्रव में लगने वाले सतही तनाव और नोजल की संरचना बूंद के आकार के लिए मुख्य कारक है।

इनमे बदलाव होने पर निम्न लिखित प्रभाव हो सकतें हैः

(क) गिराव वेग बूँद आकार पर निर्भर है। छोटी बूंदों में एक उच्च प्रारंभिक वेग हो सकता है, लेकिन वेग जल्दी कम हो जाता है। बड़ी बूंदें लंबे समय तक वेग बनाए रखती हैं और आगे की यात्रा करती हुई नीचे की ओर गिरती हैं।

(ख) तरल पदार्थ की सतह में तनाव वृद्धि होने पर बूँद के आकार में भी वृद्धि होती है।

(ग) उच्च दबाव के प्रभाव से छोटी बूंद निकलती है और कम दबाव से बड़ी बूंद निकलती है।

(घ) निम्न प्रवाह नोजल्स सबसे छोटी बूंदों का उत्पादन करती है और उच्च प्रवाह नोजल्स सबसे बड़ी बूंदों का उत्पादन करती है।

fNMdko midj.k d çdkj

विभिन्न प्रकार के अनुप्रयोगों के लिए छिड़काव उपकरण के विभिन्न डिजाइन विकसित किए गए हैं। इसलिए छिड़काव उपकरण का उचित रूप में प्रयोग के लिए निर्माता के निर्देशों को सावधानीपूर्वक पढ़ा जाना चाहिए ताकि ये पता हो जाये कि उपकरण को किस क्षमता के लिए विकसित किया गया है, जिससे रसायन का सही मात्रा व रूप में छिड़काव किया जा सके।

1- mi;ksfxrk d vk/kkj ij fNMdko lEcU/kh rduhdh midj.kksa dk fuEu çdkj l oxhZr fd;k tk ldrk g

(क) हस्त चलित

(ख) स्वचालित

- निम्न एचपी (160 एचपी – 250 एचपी)
- मध्यम एचपी (251 एचपी – 350 एचपी)
- उच्च एचपी (351 एचपी – 400 एचपी)

(ग) ट्रेक्टर से जुड़े

(घ) ट्रेक्टर से खींचने वाले

(ड़) हवाई विधि

2- {kerk d vk/kkj ij fNMdko lEcU/kh rduhdh midj.kksa dk fuEu çdkj l oxhZr fd;k tk ldrk g%

(क) अति निम्न आयतन छिड़काव यन्त्र (यू एल वी) जिनसे 5 लि. प्रति है. की दर से से छिड़काव कर सकते हैं।

(ख) निम्न आयतन वाले छिड़काव यन्त्र (एल वी) जिनसे 5 से 400 लि. प्रति है. की दर से छिड़काव किया जा सकता है।

(ग) उच्च आयतन छिड़काव यन्त्र (एच वी) जिनसे 400 लि. प्रति है. से अधिक दर से छिड़काव किया जा सकता है।

3- Qly çdkj ds vk/kkj ij fNM+dko lEcU/kh rduhdh midj.kksa dks fuEu çdkj ls oxhZ—r fd;k tk ldrk gS%

(क) अनाजः मक्का, धान, गेहूं व अन्य

(ख) तिलहनः सोयाबीन, तोरिया, कैनोला, सूरजमुखी और कपास, मूंगफली, नारियल, जैतून, कनोला, कुसुम और कोपरा आदि

(ग) फल एवं सब्जियांः फलों में आम, लीची, अनार, सेव आदि एवं सब्जियों में फूलगोभी, पत्तागोभी, भिंडी, टमाटर, बैगन आदि

(घ) अन्यः टर्फ घास, फूलों की खेती, स्थायी फसलें, चारागाह, घास के मैदान आदि

4- rduhdh vk/kkj ij fNM+dko lEcU/kh midj.kksa dks fuEu çdkj ls oxhZ—r fd;k tk ldrk gS%

(क) हाइड्रोलिक नोजल स्प्रे तकनीक

(ख) एयर–असिस्टेड इलेक्ट्रोस्टैटिक स्प्रे तकनीक

(ग) परिवर्तनीय दर प्रौद्योगिकी (वीआरटी)

(घ) नियंत्रित छोटी बूंद आवेदन (सीडीए)

(ङ) अल्ट्रा–कम मात्रा छिड़काव तकनीक (यूएलवी)

(च) लक्षित डिस्पेंस तकनीक

(छ) अन्य सेंसर–आधारित तकनीक

बाजार में उपलब्ध स्प्रेयर को उपयोगिता के आधार पर वर्गीकरण को ध्यान में रखते हुए विशेष विवरण के साथ तालिका 6 में दर्शाया गया है।

rkfydk 6% Lçs;j ds çdkj ds vk/kkj ij fo'k"k fooj.k

Ø- l-	Lçs;j dk çdkj	'kfä dk lzksr	VSad vkdkj] fyVj	ukstym çdkj	lkekU; dke dk ncko] ckj bdkbZ esa	jlk;u fNM+dko dh nj] fyVj @ feuV	otu] fdyksxzke	mi;ksfxrk
1.	नैपसैक हैंड स्प्रेयर	हस्त चलित	16	फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल	2–3	0.5–3.0	4–6	सब्जियां, अनाज, चाय, कॉफी आदि
2.	नैपसैक बैटरी संचालित स्प्रेयर	बैटरी चलित 8 घंटे कार्य करने में सक्षम	16–20	फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल	2–4	0.5–3.0	5–7	सब्जियां, अनाज, चाय, कॉफी आदि

3.	नैपसैक पावर स्प्रेयर	स्वचालित	15–25	फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल	10–13	10–11	6–10	सब्जियां , अनाज, चाय, कॉफी के साथ – साथ बागानों, बागों और ऊंचे पेड़ों की पंक्ति में छिड़काव के लिए उपयुक्त
4.	फुट एंड रॉकिंग स्प्रेयर	पैर चलित	कोई टंकी नहीं, 8 मीटर तक लम्बी नली	फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल	6–7	–	9–10	कपास, सोयाबीन, सब्जियां, चाय और कॉफी के बागानों, बागों और ऊंचे पेड़ों की पंक्ति और जमीन की फसलों के लिए उपयुक्त
5.	ट्रैक्टर स्प्रेयर ट्रेल और माउंटेड प्रकार	ट्रैक्टर चलित	400–1000	एंटी ड्रिप डबल नोजल, 10–25 की संख्या में	6–7	36–50	150–200	ग्राउंड स्प्रे बूम के साथ साथ कृषि फसलों में कीटनाशकों, खरपतवार और उर्वरकों के आर्थिक और प्रभावी अनुप्रयोग के लिए
6.	पावर मिस्टब्लोवर्स एंड डस्टर	स्वचालित	10–13	–	वायु वेगः 60 मीटर प्रति सेकंड	8 घन मीटर प्रति मिनट	10–55	बागों, चाय, कॉफी और अन्य फसलों में त्वरित छिड़काव के संचालन के लिए आदर्श
7.	हैंड कम्प्रेशन स्प्रेयर	हस्त चलित	3–15		4 बार		4–7	आलू, धान, जूट, मूंगफली और गन्ने में कीटों और रोगों को नियंत्रित करने के लिए छिड़काव के लिए उपयुक्त है
8.	अति निम्न आयतन स्प्रेयर	हस्थ चलित	4	स्प्रे आंशिक आकारः 5–50 माइक्रोन	–	0–13 लिटर प्रति घंटे	5–6	फार्म्स, नर्सरी, शेड नेट्स और ग्रीन हाउस में स्पॉट एप्लिकेशन को महंगे कीटनाशकों के छिड़काव के लिए उपयुक्त है
9.	एरियल स्प्रे	ड्रोन द्वारा	2–10	5 – 50 माइक्रोन	2–3	2	4–15	बागों, चाय, कॉफी और अन्य फसलों में त्वरित छिड़काव के संचालन के लिए आदर्श

uild Lç;j% नैपसैक स्प्रेयर बाजार में तीन रूपों में उपलब्ध है– हस्त चलित, बैटरी चलित व स्वचालित (चित्र–1)। इन स्प्रेयर में टंकी की क्षमता 16 से 25 लिटर तक होती है और इनका वजन 4–10 किलोग्राम तक होता है। इनमें सामान्यतः फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल का उपयोग किया जाता है। हस्त और बैटरी चलित स्प्रेयर 2–4 बार के दबाव पर कार्य करतें है, जबकि स्वचालित स्प्रेयर

10–13 बार के दबाव पर कार्य करते हैं। हाथ और बैटरी चलित स्प्रेयर द्वारा रसायन छिड़काव की दर 0.5–3.0 लिटर प्रति मिनट होती है वही जबकि स्वचालित स्प्रेयर के रसायन छिड़काव की दर 10–13 लिटर प्रति मिनट होती है। उपयोगिता के आधार पर यदि देखा जाये तो हाथ और बैटरी चलित स्प्रेयर का उपयोग कम ऊंचाई तक जाने वाली फसलें जैसे सब्जियां, अनाज, चाय, कॉफी आदि में प्रयोग में लाया जाता है, जबकि स्वचालित स्प्रेयर का प्रयोग बागानों, बागों और ऊंचे पेड़ों की पंक्ति में भी किया जा सकता है।

(क) हस्त चलित नैपसैक स्प्रेयर * (ख) बैटरी चलित नैपसैक स्प्रेयर* (ग) स्वचालित नैपसैक स्प्रेयर

चित्र 1. नैपसैक स्प्रेयर के प्रकार (*श्रोत:ASPEE website)

QV ,M j,fdx Lç;j% फुट एंड रॉकिंग स्प्रेयर को पैरों द्वारा चलाया जाता है और इनमे टंकी नहीं होती है और इनका वजन 9–10 किलोग्राम तक होता है (चित्र–2)। इनमें लगभग 8–10 मीटर लम्बी नली होती है जिसका प्रयोग दूर तक छिड़काव के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इनमें सामान्यतः फ्लैट फैन और हालो कोन नोजल का उपयोग किया जाता है। ये स्प्रेयर 6–7 बार के दबाव पर कार्य करतें है। इन स्प्रेयर का प्रयोग कपास, सोयाबीन, सब्जियां, चाय और कॉफी के बागानों, बागों और ऊंचे पेड़ों की पंक्ति और जमीन की फसलों के लिए उपयुक्त होता है।

चित्र 2. फुट एंड रॉकिंग स्प्रेयर

VDVj pfyr Lç;j% ट्रैक्टर कृषि कार्यों के लिए एक प्रमुख शक्ति का श्रोत है जिसे अनेक कृषि कार्यों में प्रयोग होता है। इनका प्रायोग रसायन छिड़काव के लिए भी किया जाता है। ट्रेक्टर से चलने वाले स्प्रेयर को दो रूपों में ट्रेक्टर से जोड़ कर और ट्रेक्टर से खींच कर चलाया जाता है (चित्र–3)। इन स्प्रेयर की टंकी की क्षमता 400–1000 लिटर तक होती है। इनमे एंटी ड्रिप डबल नोजल का प्रयोग लगभग 10–25 की संख्या में एक पंक्ति में किया जाता है जिसे बूम कहतें है। ये नोजल 6–7 बार के

दबाव पर कार्य करते हैं। इनके द्वारा रसायन छिड़काव की दर 36–50 लिटर प्रति मिनट तक होती है। ये उच्च आयतन छिड़काव के लिए उपयुक्त है। इस तरह के स्प्रेयर का वजन 150–200 किलोग्राम तक होता है। ट्रैक्टर से चलने वाले स्प्रेयर की क्षेत्र क्षमता अधिक होती है। इन स्प्रेयर का प्रयोग ग्राउंड स्प्रे बूम के साथ–साथ कृषि फसलों में कीटनाशकों, खरपतवारों और उर्वरकों के आर्थिक और प्रभावी अनुप्रयोग के लिए होता है।

चित्र 3: हाई क्लीयरेंस ट्रैक्टर चलित बूम स्प्रेयर

ikoj feLVCykoll ,M MLVj% पावर मिस्टब्लोवर्स एंड डस्टर स्वचालित होते है (चित्र 4 बाईं ओर)। इनकी टंकी की क्षमता 10–13 लिटर तक होती है। ये रसायन को द्रव या चूर्ण के रूप में छिड़क सकतें है। इन स्प्रेयर से रसायन को बड़ी तेज 60 मीटर प्रति सेकंड की गति से निष्कासित किया जाता है। इस तरह के स्प्रेयर का वजन 10–55 किलोग्राम तक होता है। ये स्प्रेयर त्वरित छिड़काव के लिए आदर्श माने जाते हैं।

पावर मिस्टब्लोवर्स एंड डस्टर   हैंड कम्प्रेशन स्प्रेयर (श्रोत: ASPEE website)

चित्र 4. पावर मिस्टब्लोवर्स एंड हैंड कम्प्रेशन स्प्रेयर

gM dEç'ku Lç;j% हैंड कम्प्रेशन स्प्रेयर हस्त चलित होते है और इनकी टंकी की क्षमता 3–15 लिटर तक होती है (चित्र 4 दाईं ओर)। ये स्प्रेयर 4 बार के दबाव पर कार्य करते हैं और इनका वजन 4–7 किलोग्राम तक होता है। इनका प्रयोग आलू, धान, जूट, मूंगफली और गन्ने में कीटों और रोगों को नियंत्रित करने के लिए छिड़काव के लिए उपयुक्त होता है।

vfr fuEu vk;ru Lç;j ¼;, ,y oh½% अति निम्न आयतन स्प्रेयर हस्त चलित होते हैं और इनकी टंकी की क्षमता 4 लिटर तक होती है (चित्र 5)। इन स्प्रेयर के नोजल द्वारा 5–50 माइक्रोन मीटर की बूँदिका के आकार को प्राप्त किया जा सकता है। इनके द्वारा रसायन के छिड़काव करने की दर 0–13 लिटर प्रति घंटे तक हो सकती है। इस तरह के स्प्रेयर का वजन सामान्यतः 5–6 किलोग्राम तक

होता है। महंगे कीटनाशकों के स्पॉट छिड़काव के लिए, इस तरह के स्प्रेयर का प्रयोग खेत, नर्सरी, शेड नेट्स और ग्रीन हाउस आदि जगहों में होता है।

चित्र 5. अति निम्न आयतन स्प्रेयर (यू एल वी) (श्रोत:ASPEE website)

,fj;y Lçs ड्रोन खेत में निश्चित मात्रा में कीटनाशक का छिड़काव के लिये प्रयोग किया जा सकता है (चित्र 6) । ड्रोन का प्रयोग करके कीटनाशकों का छिड़काव पारम्परिक मशीनों की तुलना में लगभग पांच गुना तेजी से किया जा सकता है। दुनियां के कई देशों जैसे अमेरिका, इंग्लैंड, चीन आदि में ड्रोन का प्रयोग कीटनाशकों के छिड़काव के लिए आरम्भ कर दिया है। हमारे देश में भी ड्रोन द्वारा कीटनाशकों के छिड़काव पर अनुसंधान बड़े व्यापक रूप में हो रहा है। ड्रोन को निम्न और अति निम्न आयतन छिड़काव के लिए प्रयोग किया जाता है। इस तरह के स्प्रेयर के टंकी का आयतन 2–10 लिटर तक हो सकता है। इनके नोजल 2–3 बार दवाव पर काम करतें है और 5–50 माइक्रोन मीटर की बूँदिका के आकार को निकालते हैं। स्प्रे पंप को ड्रोन की बैटरी द्वारा संचालित किया जाता है। ड्रोन स्प्रेयर का कुल वजन 4–15 तक हो सकता है। इनका प्रयोग बागों, चाय, कॉफी और अन्य फसलों में त्वरित छिड़काव के लिए उपयुक्त होता है। ड्रोन एक बार में 10–15 मिनट की उड़ान भर सकता है।

चित्र 6. कीटनाशक का ड्रोन द्वारा छिड़काव

Lçs ukt y ds çdkj

स्प्रे नोजल की विशेषताएं कई कारकों पर निर्भर करती है जैसे कि प्रकार, दबाव, दूरी, स्प्रे कोण, आफसेट कोण, स्प्रे पैटर्न गुणवत्ता, बहाव और अंशछादन। स्प्रे के चयन के समय इन कारकों को ध्यान

में रखना चाहिए। एक नोजल के व्यापन (छिड़काव–चौड़ाई/क्षेत्र) की एक निश्चित सीमा होती है और अधिक व्यापन चौड़ाई को पाने के लिए कई नोजल को एक समूह में सीधी रेखा में लगाकर एक बूम का निर्माण किया जाता है। बूम के रसायन वितरण की गुणवत्ता भी कई कारकों पर निर्भर करती है जैसे कि नोजल प्रकार, बूम ऊंचाई, नोजल का घिसाव दर, दवाव में कमी, बूम की स्थिरता, हवा की गति व दिशा, स्प्रेयर की गति और उसके द्वारा होने वाले विक्षोभ आदि।

नोजल द्रव को छोटी–छोटी बूंदों में परिवर्तित करने के लिए मुख्यतः दो सिद्धांतों हाइड्रोलिक और एयर ऑटोमाइजेशन पर कार्य करते हैं। हाइड्रोलिक ऑटोमाइजेशन को पाने के लिए द्रव को नोजल के सूक्ष्म छिद्र से उच्च दाब में प्रवाहित किया जाता है जिसके फलस्वरूप पानी को बहुत छोटी –छोटी बूंदों में तोड़ दिया जाता है, जबकि एयर ऑटोमाइजेशन प्रक्रिया में सम्पीड़ित हवा और निम्न दाब पर पानी को नोजल के सूक्ष्म छिद्र में से प्रवाहित किया जाता है जिसके फलस्वरूप पानी को बहुत छोटी –छोटी बूंदों में तोड़ दिया जाता है। इस प्रक्रिया में प्राप्त बूंदों का आकार हाइड्रोलिक ऑटोमाइजेशन की तुलना में छोटा होता है।

हाइड्रोलिक ऑटोमाइजेशन सिद्धांत पर कार्य करने पर वाले नोजल बनावट में सरल व सस्ते होते है। इन नोजल्स की परिचालन लागत भी कम पड़ती है। हालांकि उच्च दाब की आवश्यकता के चलते अधिक विद्युत ऊर्जा की खपत होती है और पम्प के पुर्जे जल्दी घिस जाते है। इस तरह के नोजल को ठीक से काम करने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि पानी की गुणवत्ता अच्छी हो और नोजल जाम न हो। इस तरह के नोजल का प्रदर्शन कम वायु विक्षोभ की अवस्था में उत्तम रहता है। एयर ऑटोमाइजेशन सिद्धांत पर कार्य करने वाले नोजल आकार में बड़े होते है। इनमे नोजल अवरुद्धता की शिकायत नहीं आती है।

परिचालन स्थितियां निर्धारित करती है कि कौन सी नोजल का प्रकार और स्प्रे वितरण सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन दिखायेगा। नोजल्स को बूंदों के वितरण के स्वरुप के आधार पर मुख्यतः चार प्रकार में बांटा जा सकता हैः

- हॉलो कोन नोजल
- फुल कोन नोजल
- फ्लैट फैन नोजल
- सॉलिड स्ट्रीम नोजल

इन नोजलों के कार्य करने के तरीके को चित्रमय प्रस्तुति के साथ चित्र 7 में दर्शाया गया है। चित्र से यह स्पष्ट है कि हॉलो कोन, फुल कोन, फ्लैट फैन, सॉलिड स्ट्रीम नोजल से निकले वितरण का स्वरुप क्रमशः वृत्ताकार वलय, पूर्णतः गोल वलय, उत्तल संकुचित किनारों एवं सीधी धारा के रूप में होता है। नोजल के वितरण स्वरुप का परिक्षण स्प्रे पैटर्नेटर यन्त्र द्वारा किया जाता है। हॉलो कोन, फुल कोन, फ्लैट फैन व सॉलिड स्ट्रीम नोजल की पहचान स्प्रे पैटर्नेटर यन्त्र द्वारा प्राप्त वितरण स्वरुप को देखकर पता लगाया जा सकता है। इसके साथ ही इस परिक्षण से नोजल में होने वाले दोष को मानक वितरण स्वरुप से तुलना करके पता लगाया जा सकता है।

चित्र 7. नोजल के कार्य करने के तरीके का विवरण

g,yk dku ukt y dh fo'k"krk,a

इस तरह के नोजल्स पानी की छोटी–छोटी बूंदों का वृत्ताकार वलय बनाते हैं। इन नोजल में छिद्र बड़ा होने के वजह से अवरुद्धता की शिकायत कम होती है। इन नोजल द्वारा पैदा की गयी बूंदों का आकार अन्य नोजल की तुलना में छोटा होता है। सामान्यतः इस तरह के नोजल्स को धूल के कणों को नीचे गिराने के लिए प्रयोग किया जाता है।

Qy dku ukt y dh fo'k"krk,a

इस तरह के नोजल से छोटी–छोटी बूंदें पूर्णतः गोल वलय के स्वरुप में बाहर निकलती हैं। बूंदों का वेग दूरी तय करने के साथ बढ़ता जाता है। इन नोजल से बूँदें मध्यम व बड़े आकार की उत्पन्न की जाती है। इन नोजल को भी धूल के कणों को नियंत्रित करने के लिए उपयोग में लाया जाता है।

¶ySV Qu ukt y dh fo'k"krk,a

ये नोजल रसायन की छोटी–छोटी बूंदों के वितरण स्वरुप को उत्तल संकुचित किनारों, आयताकार अथवा समरूप में बाहर निकालते हैं। इन नोजल द्वारा बूंदों का आकार छोटी से मध्यम आकार का होता है। इन नोजल का प्रयोग संकीर्ण या आयताकार स्वरुप के स्थानों पर प्रयोग में लाये जाते हैं। फ्लैट फैन नोजल कृषि क्षेत्र में साधारण संरचना व सस्ता होने के कारण सबसे ज्यादा प्रयुक्त होने वाला नोजल है। इन नोजल का प्रयोग मुख्य रूप से कीटनाशक रसायन के बैंडिंग (पंक्तियों के बीच और ऊपर) और प्रसारण अनुप्रयोगों के लिए प्रयोग किया जाता है। अधिक व्यापन के लिए इन नोजल को बूम के रूप में निश्चित प्रतिशत के अंशदन के साथ प्रयोग में लाया जाता है। फ्लैट फैन नोजल कई संरचनाओं के साथ विभिन्न श्रेणियों में आता है जैसे कि मानक फ्लैट फैन नोजल, सम फ्लैट फैन नोजल, निम्न दाब फ्लैट फैन नोजल, द्विछिद्र फ्लैट फैन नोजल आदि। इन नोजल की नई संरचनाएं भी तैयार की गयी है जैसे कि टर्बो, फ्लड, रेनड्राप, एयर इंडक्शन नोजल जिनमें वायु प्रवाह द्वारा बूंदो के बहकर ले जाने से रोकने की क्षमता है। साधारण फ्लैट फैन नोजल 2–3 बार दवाव पर कार्य करते है। नोजल के व्यापन चौड़ाई को बढ़ाने के लिए ऊंचाई और स्प्रे कोण को बदला जा सकता है। फ्लैट

फैन नोजल मुख्यत: 65, 80 और 110 डिग्री स्प्रे कोण में आते हैं। नोजल और लक्ष्य तक के बीच की दूरी को नोजल ऊंचाई कहते है और लक्ष्य मिट्टी की सतह, फसल छत्र और फसल अवशेष हो सकते है। नोजल की 30 इंच तक की ऊंचाई तक उपयोग में लाने के लिए नोजल से नोजल से दूरी 30 इंच और नोजल का स्प्रे कोण 110 डिग्री होना चाहिए। अधिक स्प्रे कोण के फ्लैट फैन नोजल छोटी बूंदों का उत्पादन करते हैं जिस वजह से वायु विक्षोभ से प्रभावित होने की संभावना होती है अतः इन्हें अधिक ऊंचाई पर प्रयोग में नहीं ला सकते हैं। इसलिए नोजल और लक्ष्य के बीच अधिक ऊंचाई होने पर 65 या 80 डिग्री का स्प्रे नोजल को प्रयोग में लाना चाहिए।

l,fyM LVhe uktsy dh fo'ks"krk,

ये नोजल रसायन की छोटी–छोटी बूंदों के वितरण स्वरुप को एक सीधी धारा के रूप में बाहर निकालते हैं। इस तरह से ये नोजल विक्षोभ रहित प्रवाह को प्राप्त करने में सफल होता है। इनका प्रयोग तरल उर्वरकों को फसल के ऊपर से छड़काव के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

Lçs uktsy p;u ds fy, fn'kkfunsZ'k

वांछित कीटनाशक का छिड़काव करने के लिए स्प्रे नोजल का सही चुनाव करना अति महत्वपूर्ण है। सटीक नोजल के प्रकार का चुनाव व क्षमता निर्धारित करने के लिए निम्न बिन्दुओं का पालन करना चाहिएः

क) सर्वप्रथम, कीटनाशक के डिब्बे पर अंकित जानकारी को पढ़ना चाहिए जैसे कि छिड़काव की दर व नियंत्रित होने वाले कीट, जरूरी बूँदिका आकर व नोजल का प्रकार। यदि जानकारी पट्टिका पर नोजल का प्रकार अंकित नहीं है तो बूँदिका आकार से नोजल का चुनाव करें।

ख) अब यह निर्णय ले कि छिड़काव किस तरह के यन्त्र से करना है और उसका शक्ति श्रोत क्या है जैसे कि हस्त चलित, बैटरी चलित, स्वचालित स्प्रेयर या ट्रेक्टर से जोड़ कर या खींच कर आदि। इसके बाद कार्यकारी स्थितियों का निर्धारण करें जैसे कि छिड़काव गति, नोजल से नोजल की दूरी, नोजल से लक्ष्य की दूरी व नोजल का छिड़काव दर। इन कारकों के चुनाव से वायु विक्षोभ का प्रभाव, क्षेत्र क्षमता और कीटनाशक प्रभावकारिता का निर्धारण होगा।

पीड़कनाशियों के अवशेष-दशा एवं दिशाएं

ईरानी मुखर्जी[1], अमन कुमार[1] एवं रणबीर सिंह[2]
कृषि रसायन संभाग[1] एवं फार्म संचालन सेवा इकाई[2]
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है और कृषि प्रणालियों में फसलोत्पादन मुख्य घटक है। फसल उत्पादन में कीट, बीमारी तथा खरपतवार एक प्रमुख समस्याएं हैं, जिनके रासायनिक नियंत्रण हेतु विभिन्न प्रकार के कार्बनिक एवं अकार्बनिक रसायनों का प्रयोग किया जाता है। जिन्हें संक्षेप में पीड़कनाशी कहते हैं। फसलों की सुरक्षा में पीड़कनाशी आधुनिक कृषि विधियों में आवश्यक संसाधन है। दूसरी ओर पीड़कनाशियों का असंतुलित एवं अविवेकपूर्ण प्रयोग फल एवं सब्जियों में अवशेषों की समस्या उत्पन्न करता है जो भारत सहित अधिकांश देशों की प्रमुख समस्या है। फल एवं सब्जियों के उत्पादन के दौरान पीड़कनाशियों के प्रयोग से अवशेष की समस्या कटाई उपरांत भी बनी रहती है। पीड़कनाशी अवशेष फल एवं सब्जी उपभोक्ताओं के लिए चिन्ता का विषय है। इनके प्रयोग से पीड़कों और बीमारियों के अतिरिक्त अलक्षित जीवों पर भी बहुत हानिकारक प्रभाव पड़ता है। अभी हाल ही के समय में पीड़कनाशियों के मानव जीवन, जंगली जीव एवं जलवायु परिवर्तन पर प्रभाव को गंभीरता से देखा गया है। पीड़कनाशियों के नियंत्रण के लिए विश्व के विभिन्न देशों में सरकारी एजेंसियाँ स्थापित की गई है ताकि पर्यावरण का कम से कम ह्रास हो सके। यदि पीड़कनाशियों के अवशेषों की सीमा निर्धारित स्तर से नीचे से रहे तो क्षति की सीमा को काफी हद तक कम किया जा सकता है। प्रायः जोखिम के अनुपात पीड़कनाशियों की एक निश्चित स्वीकार्य उदभासन सीमा होती है इसके बदले खाद्यान्न में इनकी एक स्वीकार्य अवशेष सीमा बनी रहती है। इनमें कुछ निश्चित पीड़कनाशियों की सहन क्षमता 0.01 पीपीएम से भी नीचे होती है।

ihM+duk'kh dk ifjp;

विश्व में खाद्यान्न को बढ़ाने एवं स्थिर रखने में पीड़कनाशियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। साथ ही देश में हरित क्रांति को सफल बनाने में भी पीड़कनाशियों की अहम भूमिका रही है। पीड़कनाशियों के अंधाधुंध एवं असंतुलित प्रयोग ने वातावरण, पर्यावरण, सामाजिक एवं आर्थिक समस्या की ओर ध्यान आकर्षित किया है। समय की आवश्यकता को देखते हुए यह संभव नहीं है कि पीड़कनाशियों का उपयोग कृषि कार्यों में पूरी तरह से रोका जा सके। इन पीड़कनाशियों के प्रयोग से हम अधिक से अधिक पैदावार प्राप्त करते हैं, परन्तु ये जहरीले होते है। इस प्रकार किसी कार्बनिक, अकार्बनिक या प्राकृतिक यौगिक का कोई एकल मिश्रण जो पीड़कों को मारने की क्षमता इनके प्रभाव को कम करने की क्षमता रखता है, उसे पीड़कनाशी कहते हैं। विभिन्न प्रकार के पीड़कों में, खरपतवार, कीट, मकड़ी, चूहे, घरेलू कीट इत्यादि सम्मिलित हैं। पीड़कनाशी एक व्यापक शब्द है, जिसमें कीटनाशी, शाकनाशी, कवकनाशी और दूसरे यौगिक जो कीट,झिंगुर, शाक, सूत्रकृमि, चूहे और अन्य दूसरे पदार्थ जो पीड़कों को नियंत्रित करते हैं, वे सभी पीड़कनाशी कहलाते हैं।

ihMdukf'k;k dk oxhdj.k

पीड़कनाशियों का वर्गीकरण उनके कार्य के अनुसार यथा कीटनाशी जिनका प्रयोग कीड़ों और पीड़कों को मारने के लिए किया जाता है, शाकनाशी जिनका प्रयोग खरपतवारों के नियंत्रण के लिए किया जाता है, कवकनाशी जिनका प्रयोग कवकजनित बीमारियों को नियंत्रण हेतु किया जाता है, दूसरा वर्गीकरण इनकी रासायनिक संरचना पर आधारित है, जैसे; कार्बनिक फॉस्फेट, कार्बनिक क्लोरीनस, संश्लेषित पायरेथ्रोदडस, कार्बामेटस जैविक पीड़कनाशी इत्यादि।

ihMdukf'k;k dk iz;kx

पीड़कनाशियों का प्रयोग किसान अपनी फसलों को कीटों, पीड़कों, खरपतवारों, कवकों और जीवाणुओं से रक्षा करने के लिये करते हैं। पीड़कनाशी बीमारियों को उत्पन्न करने वाले रोगजनकों को मारकर मानव की सहायता करते है। गंदे खटमल, पिस्सु से छुटकारा दिलाने के लिए पीड़कनाशी का प्रयोग मुख्य भूमिका अदा करते हैं। कभी–कभी पीड़कनाशियों का प्रयोग मोथ को दूर रखने के लिए कपड़ों पर भी किया जाता है। कुछ पीड़कनाशी भंडारण के लिए इन खाद्य पदार्थों में रखे जाते है जिसे हम खाते हैं। किसान अपनी फसलों के उत्पादन को बढ़ाकर और भण्डारण करके इससे लाभ उठा रहे हैं। वही दूसरी ओर पीड़कनाशी से बीमारियों के वाहकों को मार कर घरेलू और आवासीय लोग इनसे लाभ ले रहे हैं।

Ñf"k e ihMdukf'k;k d iz;kx vkj bud LokLF; ij izHkko dh i"BHkfe vkj bfrgkl

पीड़कनाशियों के कृषि में प्रयोग और उनका स्वास्थ्य पर प्रभाव के इतिहास और पृष्ठभूमि की शुरुआत कीटों और पीड़कों की जनसंख्या वृद्धि और मृदा की उत्पादकता की कमी से शुरु होती है। आधुनिक कृषि में पीड़कनाशियों के प्रयोग और स्वास्थ्य पर इनके प्रभाव की शुरुआत 19 वीं शताब्दी से पूर्व हुई थी। प्रथम पीढ़ी के पीड़कनाशी बहुत विषैले जैसे; लेडआर्सनेट और कैल्शियम आर्सनेट थे। वर्ष 1860 में हाइड्रोजन सायनाइड का प्रयोग धुम्रण (फ्यूमीगेंट) के रूप में पीड़कों, कवकों, जीवाणओुं और कीटों के नियंत्रण के लिए किया गया था। इनके कुछ यौगिक जैसे बारडेक्स मिश्रण जो बुझा चुना द्वितीयक पीढ़ी के पीड़कनाशी संश्लेषित कार्बनिक यौगिकों पर आधारित थे। पहला संश्लेषित कार्बनिक पीड़कनाशी शुरुआती दिनों में डीडीटी ही था। डीडीडी अपनी विस्तृत क्रियाशीलता के कारण चमत्कारी साबित हुआ। यह बहुत स्थायी, अघुलनशील, और सस्ता होने के कारण, विशेषकर पैरा–पैरा–डीडीडी प्रभावी रूप से पीड़कों को मारकर फसल सुरक्षा में वरदान साबित हुआ। यह सस्ता और अधिक प्रभावी होने के कारण सम्पूर्ण विश्व में फैल गया। डीडीटी का प्रयोग गैर कृषि अनुप्रयोगों के लिए भी प्रयोग किया लगा था। उदाहरण के लिए द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान सैनिकों से जुएं निकालने के लिए और जन स्वास्थ्य कार्यक्रम में मच्छरों के नियंत्रण के लिए मलेरिया उन्मूलन के लिए है। डीडीटी की सफलता के पश्चात वर्तमान में दूसरे रसायनों का भी संश्लेषण किया गया। आर. कार्जन ने 1962 में अपनी पुस्तक साइलेट स्प्रिंग में इनका वर्णन ''रसायनों की वर्षा'' के युग के रूप में किया गया है। बारबस ने 2006 में इनका वर्णन खाद्यान्नों की उत्पादन में वृद्धि के लिए, पीड़कनाशियों और खेती में मानवीय श्रम को कम करने के लिए शाकनाशी जिम्मेदार है। पीड़कनाशियों के प्रयोग से भण्डारण के दौरान होने वाली

क्षति को कम किया गया है। इस प्रकार से पीड़कनाशी कृषि उत्पादन और प्रयोग को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त पीड़कनाशी वाहक जनित बीमारियों जैसे; मलेरिया, डेंगू, प्लेग, इत्यादि को नियन्त्रित करने में प्रभावी भूमिका अदा करते हैं।

पीड़कनाशी विकासशील देशों की आर्थिकी में बहुत बड़ी भूमिका अदा करते हैं। पीड़कनाशी बिना मौसम की फल व सब्जियों का उत्पादन करने में समशीतोष्ण देशों विशेषकर विकासशील देशों की आर्थिक स्थिति में वृद्धि करते हैं। विकासशील देश एक वर्ष में दो या तीन फसलों का उत्पादन करके विश्व के ''ब्रेडएड वास्केट'' बन रहे हैं। तथापि यह लक्ष्य पीड़कनाशियों के प्रयोग के बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता है। कटाई के समय की जानकारी बहुत ही महत्वपूर्ण हो गयी है। यहाँ तक कि कम स्थाई पीड़कनाशियों के बारे में भी विशेषकर फल एवं सब्जियों के लिए जहाँ पर फसलें पीड़कनाशियों के प्रयोग होने के समय के कम अंतराल पर काट या चुन ली जाती है। इस प्रकार से पीड़कनाशियों के अवशेषों की समस्या सब जगह और सबके लिए चिंता का कारण बनी हुई है। कुछ देशों ने खाद्य उत्पादनों का नियमित रूप से परीक्षण करना प्रारम्भ कर दिया है। अनुवीक्षण प्रणाली पीड़कनाशियों के संदूषण के स्तर का खाद्य उत्पादकों में पहचान करती है और यह सुनिश्चित करता है कि संदूषण का स्तर कहीं अनुशंसित किये गए स्तर से अधिक तो नहीं है। अनुशंसित किये गये स्तर की यह मात्रा अवशेष की अधिकतम सीमा कहलाती है। पीड़कनाशी की सहन क्षमता से अधिक सीमा (अवशेष की अधिकतम सीमा) कटाई के समय देश और विश्व के लिए चिंता का कारण है। अवशेष की यह गंभीर समस्या पीड़कनाशियों के, असमय, गलत तरीके से प्रयोग और अविवेकपूर्ण प्रयोग से उत्पन्न होती है। पीड़कनाशियों के अवशेषों के कारण खाद्यान्न का प्रयोग और उनका निर्यात प्रभावित होता है। पीड़कनाशी विनिर्माण, परिवहन, प्रयोग और संभरण तथा फसलों में प्रयोग के दौरान पर्यावरण में विमुक्त होते हैं। पीड़कनाशियों के अवशेष मानव रक्त, पशुओं के दूध, पशुओं के रक्त, मानव स्तनीय दूध, दुग्ध उत्पादों, पीने के पानी, भूजल, पृष्ठीय जल, वर्षा का जल, मानव आहार, सब्जियों, मृदा इत्यादि पर्यावरणीय घटकों यथा वायु, जल एवं मृदा में भी पाये गये हैं। यह विनिर्दिष्ट करता है कि पीड़कनाशियों का पर्यावरण में अविवेकपूर्ण, अनुचित और लापरवाही से प्रयोग किया जा रहा है।

ihMdukf'k;k dh of'od [kir

वर्ष 1990 तक पीड़कनाशियों की वैश्विक उत्पादन और खपत तथा पीड़कनाशियों की वैश्विक बिक्री लगभग 270 से 300 के बीच स्थिर रही है। जिसका 47 प्रतिशत शाकनाशी, 79 प्रतिशत कीटनाशी, 19 प्रतिशत कवकनाशी/जीवाणुनाशी तथा अन्य 5 प्रतिशत पीड़कनाशी रहे हैं। वर्ष 2007 से 2008 के समय में अपनी सभी श्रेणियों में शाकनाशी सबसे पहले स्थान पर है।

Hkkjr e ihMduk'kh

भारत में कृषि अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है। लगभग भारत की कुल जनसंख्या का 65 प्रतिशत हिस्सा प्रत्यक्ष रूप से इससे जुड़ा है और यह भारत के कुल सकल घरेलु उत्पाद में 17 प्रतिशत का योगदान करती है। कृषि का महत्व इस तथ्य से और उजागर होता है कि यह विनिर्माण क्षेत्र में एक मजबूत मांग और आपूर्ति के जोड़ को स्थापित करता है। पिछले पाँच वर्षों के दौरान कृषि क्षेत्र खाद्यान्न,

तिलहन, व्यापारिक फसल, फल, सब्जियों, कुक्कुट और डेयरी उत्पादों की उत्पादकता में एक विशेष वृद्धि का गवाह रहा है। भारत फल और सब्जियों के उत्पादन में विश्व में द्वितीय बड़ा उत्पादक और काजू एवं मसालों में दूसरा बड़ा निर्यातक के रूप में उभरा है। देश की 1.21 बिलियन जनसंख्या की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए कृषि योग्य भूमि को बचाये रखना दूसरा बड़ा कार्य है। इसके लिए आवश्यक है कि उच्च उपज वाली प्रजातियों के बीज, उर्वरकों का नियंत्रित प्रयोग उच्च गुणवत्ता के पीड़कनाशियों का विवेकपूर्ण प्रयोग, किसानों का शिक्षित होना और आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकियों का प्रयोग आवश्यक है। भारत में लगभग 230 पीड़कनाशियों का कृषि में प्रयोग हेतु पंजीकृत किया गया है। भारतीय पीड़कनाशी कारखानों का आकार स्थिर रहा है। वर्ष 2010 के वित्तीय वर्ष के दौरान पीड़कनाशियों का कुल उत्पादन 82,000 से 85,000 मिट्रिक टन रहा है। मूल्य वृद्धि के रूप में भारतीय पीड़कनाशियों के कारखानों ने 180 बिलियन रुपये की विशुद्ध आमदनी प्राप्त की है। जिसमें 100 बिलियन रुपये का विदेशी निर्यात भी सम्मिलित है। भारत में पीड़कनाशियों की कुल खपत 600 ग्राम प्रति हैक्टर है जबकि इनकी तुलना में विश्व के दूसरे देशों में 3000 ग्राम प्रति हैक्टर है। भारत में पीड़कनाशियों के कम खपत का मुख्य कारण यहाँ पर लघु एवं सीमांत किसान का होना, सिंचाई के साधनों का निम्न स्तर और इनके प्रयोग की जानकारी न होना है। वर्ष 2010 के वित्त वर्ष के दौरान पीड़कनाशियों की खपत 52 प्रतिशत रही है जो अच्छी खपत मानी जाती है। सबसे अधिक पीड़कनाशियों की खपत वाला राज्य आंध्र प्रदेश (22 प्रतिशत) रहा है। इसके पश्चात महाराष्ट्र और पंजाब राज्य है।

ihMdukf'k;k d i;kx dk egRo vkj blls tM g, tkf[ke

पिमेटेंल 2009 के अनुसार विश्व में फसलों को 14 प्रतिशत हानि कीटों और पीड़कों से और लगभग 13 प्रतिशत हानि रोगजनकों और खरपतवारों से होती है। विश्व में लगभग 50,000 प्रजातिया पादप रोगजनकों, 9,000 प्रजातियाँ कीटों एवं झिंगुरों की और 8,000 प्रजातियाँ खरपतवारों की हैं जो फसलों को हानि पहुँचाते है। इसलिए कृषि उत्पादन में पीड़कनाशी बहुत महत्वपूर्ण है। लगभग कृषि उत्पादों का एक तिहाई भाग पीड़कनाशियों के प्रयोग से उत्पन्न किया जाता है। यह देखा गया कि पीड़कनाशियों के प्रयोग के बिना फलों, सब्जियों और अनाजों में 78 प्रतिशत, 54 प्रतिशत और 32 प्रतिशत तक पहुँच जाता है। यह भी देखा गया है कि पीड़कनाशियों के प्रयोग से फसलों की पीड़कों से हानि 35 प्रतिशत से 42 प्रतिशत तक कम हो जाती है। इस वैश्विक खाद्यान्न सुरक्षा के परिदृष्य में, बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए, फसलों के उत्पादन के लिए पीड़कनाशियों का सीमित प्रयोग अपेक्षित है। यह भी देखा गया है कि जब यू.एस.ए. में पीड़कनाशियों के प्रयोग को प्रतिबंधित कर दिया तो फसल उत्पादन गिर गया था बाजार में खाद्यान्नों की कीमत बढ़ गयी थी। इसके कारण कपास, गेहूँ और सोयाबीन का निर्यात 27 प्रतिशत तक गिर गया था और 1,32,000 रोजगार खत्म हो गये थे। यह देखा गया कि पीड़कनाशियों का प्रयोग जोखिम से भरा है क्योंकि अधिकांश पीड़कनाशी अपने आप उत्पन्न नही होते हैं। अधिकांश पीड़कनाशी मानव और पर्यावरण के लिए विषैले होते है।

Hkkjr e ihMdukf'k;k dk fofu;eu

भारत में पीड़कनाशियों का विनियमन सरकारी संस्था केन्द्रीय पीड़कनाशी बोर्ड एवं पंजीकरण समिति (सीआईबीआरसी) और भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानकीकरण प्राधिकरण (एफएसएसआई) के

द्वारा किया जाता है। सीआईबीआरसी पीड़कनाशियों के फसलों में प्रयोग करने के लिए पंजीकरण और एफएसएसआई फसल विशेष में पीड़कनाशियों के अवशेषों की एमआरएल के निर्धारण से जुड़ा हुआ है। पीड़कनाशियों से संबंधित संयुक्त संसदीय समिति की अनुशंसाएं उचित प्रकार से लागू नही की गई है। भारत में लगभग 234 पीड़कनाशियों का पंजीकरण किया गया है और एफएसएसआई ने अधिकतम 59 पीड़कनाशियों के लिए एमआरएल निर्धारित किये हैं। ये फसलों में प्रयोग किये जाते हैं इसलिए ही एमआरएल निर्धारित किये गये है। पीड़कनाशियों के आयात, पंजीकरण, निर्माण, बिक्री और वितरण का विनियमन पीड़कनाशी नियम 1971 के अंतर्गत किया जाता है। पशुओं और मानव जीवन स्तर पर पीड़कनाशियों के जोखिमों के लिए भी उत्तरदायी है। बाजार में पीड़कनाशियों की बिक्री केन्द्रीय पीड़कनाशी बोर्ड और पंजीकरण समिति के पंजीकरण के उपरांत ही हो पाता है। इस प्रकार तकनीकी रूप से भारत में सभी पीड़कनाशी वे पदार्थ है जो पीड़कनाशी अधिनियम 1968 के अंतर्गत सूचीबद्ध है।

पंजीकरण समिति का यह अनुदेश है कि पीड़कनाशियों के पैकिंग पर यह लेबल चिपका होना चाहिए जिस पर स्पष्ट रूप से पीड़कनाशी की प्रकृति (घरेलू प्रयोग के लिए या कृषि के लिए) संगठन, सक्रिय द्रव्यमान, लक्षित पीड़क, अनुशंसित की गई मात्रा, सावधानी चिह्न, सुरक्षा की सावधानियां लेबल पर अंकित होनी चाहिए। इस प्रकार एक पीड़कनाशी जो कृषि के लिए निर्धारित किया गया उसका प्रयोग घरेलू कार्यों के लिए नहीं होना चाहिए।

ihMdukf'k;ksa ds vo'ks"kksa dk fofu;eu

पीड़कनाशियों के अवशेषों का सुरक्षित स्तर तक विनियमन का विचार सबसे पहले 1955 में संयुक्त रूप से कृषि एवं खाद्य संगठन और विश्व स्वास्थ्य संगठन की खाद्य एवं सम्मिश्रण पर एक विशेषज्ञ समिति में प्रस्तुत किया। एफएओ और डब्ल्यूएचओ पीड़कनाशियों से संबंधित अनुशंसाओं को संयुक्त रूप से लागू करवाने के लिए विशेषज्ञ खाद्य मानक कार्यक्रम एवं कोडैक्स एलोमेंटिरियस कमीशन के आधार पर पीड़कनाशियों से संबंधित सभी मामलों पर अपनी सलाह देती है। इनका मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य की रक्षा करने एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अवरोध की अधिकतम सीमा का निर्धारण करना है। इसके लिए कुछ अनुशंसाएं निम्न कारणों पर आधारित हैः

1. पर्यवेक्षित खेत परीक्षण का प्रतिवेदन जो पीड़कनाशी के अवशेष की अधिकतम सीमा के निर्धारण के लिए डिजाइन किया गया जिसमें पीड़कों को निम्नतम करने के लिए निर्धारित मात्रा में पीड़कनाशी का प्रयोग किया गया है।
2. विस्तृत रूप से पीड़कनाशी का विष–विज्ञान प्रतिवेदन में पैत्रक यौगिक और उसके उपापचयी का अध्ययन भी समाहित हो।

मानव जीवन और पर्यावरण पर पीड़कनाशियों के प्रभाव के मूल्यांकन करने के लिए फसलों पर पीड़कनाशियों की घनत्वता का उचित रूप से निगरानी का एक उत्कृष्ट प्रतिवेदन प्रस्तुत करना चाहिए। कोई भी रसायन सुरक्षित नहीं है, परन्तु प्रत्येक रसायन के प्रयोग करने के लिए सुरक्षित विधियाँ है। हाल ही के वर्षों में कानून और उपभोक्ताओं दोनों में खाद्य पदार्थों की सुरक्षा में बढ़ती हुई रूचि को देखा गया है। विश्व व्यापार संगठन के विनियमन में, जिस पर हस्ताक्षर करने वाला भारत भी एक देश है सभी निर्यात के लिए खाद्य पदार्थों का अवपेक्षित परीक्षण अनिवार्य कर दिया गया है। वर्ष 2005 में जब

विश्व व्यापार संगठन समझौता लागू हुआ, खाद्य एवं कृषि संगठन/विश्व स्वास्थ्य संगठन मानक स्थापित किये जो स्वच्छता और पादप स्वच्छता के प्रक्रमों के दृष्टि से संदर्भों के लिए आधारित बिन्दु होंगे। निर्यात के लिए विनिर्दिष्ट प्रत्येक कृषि उत्पादों को अवशेष की अधिकतम सीमा से संवर्धित प्रमाणीकरण जांच से गुजरना होगा और यह सुनिश्चित करना होगा कि इसका उत्पादन प्रमाणित कृषि मानकों के अंतर्गत किया गया है। हाल ही में पीड़कनाशियों के मानव, जलीय जंगली जीवन और पर्यावरण पर प्रभाव से सवंर्धित समस्याओं पर गंभीरता से ध्यान केन्द्रित किया गया है। पीड़कनाशियों के प्रयोगों को नियंत्रित करने के लिए देशों में सरकारी एजेंसियां स्थापित की गयी है, ताकि पर्यावरण पर इनका कम से कम प्रभाव हो और कम से कम हानि हो। जोखिम को कम करने के लिए हमेशा एक निम्नतम स्वीकार्य उदभासन का स्तर रखा गया है। यह खाद्य पदार्थों में निम्नतम स्वीकार्य स्तर के रूप में परिलक्षित है।

vo'k"k dh vf/kdre lhek

योह ने अवशेष की अधिकतम सीमा को निम्न प्रकार से व्यक्त किया है, पीड़कनाशी की वह अधिकतम सीमा जो कृषि की उन्नत विधियों के द्वारा प्राप्त की गयी हो, जो खाद्य पदार्थों में कानूनी रूप से स्वीकृत हो और मि.ग्रा./कि.ग्रा. में व्यक्त की गयी हो, वह मात्रा अवशेष की अधिकतम सीमा कहलाती है। वर्तमान समय में विश्व में लगभग 800 पीड़कनाशी बाजार में बिक्री के लिए उपलब्ध हैं। इनमें से बहुतों के खिलाफ कानूनी कार्यवाही प्रारम्भ की गयी है जो सुनिश्चित की गयी अवशेष की मात्रा से अधिक अवशेष पाये जाने पर कार्यवाही करती है। यूरोपियन यूनियन ने 150 पादपों और इनके उत्पादों के लिए अवशेष की सीमा निर्धारित की गयी।

यूरोपियन यूनियन/कोडेक्स/विश्व स्वास्थ्य संगठन/खाद्य एवं कृषि संगठन/संयुक्त राष्ट्र से मिलकर खाद्य पदार्थों के मानक और एक समान अवशेष की अधिकतम सीमा को निर्धारित करने के लिए सुनियोजित प्रयास किये हैं। भारत सरकार ने 2005 में एक संयुक्त संसदीय समिति का गठन किया है जो उपभोक्ता के लिए खाद्य पदार्थों में अवशेषों के सुरक्षित स्तर के लिए रूप रेखा तैयार करती है। समिति ने यह आवश्यकता महसूस की है कि खाद्य पदार्थों में पीड़कनाशियों के अवशेषों का विनियमन होना चाहिए। समिति ने सरकार को सिफारिश की है कि पीड़कनाशियों के संवर्धित नियामक प्राधिकरणों में पंजीकरण से पहले अवशेष की अधिकतम सीमा का निर्धारण आवश्यक होना चाहिए। वही इसी ओर पीड़कनाशी की प्रतिदिन स्वीकार्य सीमा का निर्धारण भी लगातार नियमित समय अंतराल पर होते रहने चाहिए। अवशेष की अधिकतम सीमा सुरक्षित सीमा नही है। वह पीड़कनाशी की वह अधिकतम सीमा है, जो निकाय ने अवशेष की अधिकतम सीमा के रूप में निर्धारित करने और कृषि की उन्नत विधियों को प्रयोग करते समय कटाई के उपरांत फसल उत्पाद में पायी जाती है। जब एक बार अवशेष की सीमा का निर्धारण कर दिया जाए तो इसका मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव का मूल्यांकन भी निरन्तर होते रहना चाहिए। इसलिए यदि कोई खाद्य पदार्थ अवशेष की सीमा से अधिक अवशेष रखता है तो इसका तात्पर्य यह नही है कि वह खाने के लिए सुरक्षित नही है। एक अवशेष जो अवशेष की अधिकतम सीमा से अधिक है तो इससे पता चलता है कि किसान ने कृषि की उन्नत विधियों का उचित प्रयोग नही किया है। प्रत्येक पीड़कनाशी का एक रोकथाम अवधि, प्रतिक्षा अवधि, अंतराल समय और पूर्व कटाई मध्यांतर होता है। पूर्व कटाई मध्यांतर दिनों की संख्या में वह समय है जो पीड़कनाशी के अंतिम प्रयोग और कटाई तक के बीच या अन्य अवधि जब तक कि पीड़कनाशी की अवरोध की सीमा

सहन स्तर के निम्नतम स्तर तक नही पहुँच जाती है वह समय पूर्व कटाई मध्यांतर कहलाता है। पूर्व कटाई मध्यांतर पीड़नाशी से पीड़कनाशी और फसल से फसल पर निर्भर करता है। खाद्य पदार्थ तभी सुरक्षित किया जा सकता है जब पीड़कनाशी के अवरोध की सीमा के अंतराल को कम किया जाए। समय के साथ–साथ पीड़कनाशियों के अवशेषों का क्षय हो जाता है। तथापि पीड़कनाशी की दृढ़ता और क्षय विशेषकर पीड़कनाशी की प्रकृति, फसल, कृषि विधियां और अन्य पर्यावरणीय दशायें जिनमें फसल उगाई गयी है या उपचारित सामग्री का भंडारण किया गया है, इत्यादि पर निर्भर करती है। पीड़कनाशी प्राकृतिक रूप से विषैले होते हैं। खाद्य पदार्थो में इनका सूक्ष्म रूप से लम्बे समय तक प्रयोग करने से शरीर में एकत्रित हो जाते है जो मानव के स्वास्थ्य और पर्यावरण पर गंभीर घातक प्रभाव डालते हैं। पीड़कों से खाद्य पदार्थो को होने वाली हानि को ध्यान में रखते हुए, पीड़कनाशियों के पूरी तरह से निषेध करना ठीक नही होगा। तथापि पीड़कनाशियों के प्रयोग को नियमित किया जा सकता है जिससे खाद्य पदार्थों में कम से कम अवशेष रहे, और वह खाद्य पदार्थ उपयोग और पर्यावरण के लिए सुरक्षित रहे। वर्तमान समय में आर्गेनोफास्फेट, आर्गेनो क्लोरीन, संश्लेषित पायरेथ्रोइडस प्रयोग किये जा रहे हैं। आर्गेनोक्लोरीनस पर आधारित पीड़कनाशियों को प्रतिबंधित किया गया है। इन जीवों में अधिक स्थाई और पर्यावरण में एकत्रित होने की अधिक क्रियाशीलता होती है। सिंथेटिक पारथ्रोइडस पर आधारित पीड़कनाशी की विशिष्टता है कि ये आरगैनो क्लीरीन की तुलना में पर्यावरण में कम स्थाई होते हैं। पीड़कनाशी का रोकने का समय बहुत ही महत्वपूर्ण है, चाहे पीड़कनाशी कम स्थाई क्यों न हो। जैसा कि बहुत से फल और सब्जी पीड़कनाशी के प्रयोग के बाद शीघ्र ही काट या तोड़ लिए जाते हैं। खाद्य पदार्थों के संदूषण की समस्या सब जगह है, इसलिए बहुत से देशों में निरन्तर निगरानी कार्यक्रम स्थापित किये हैं। निगरानी कार्यक्रम खाद्य पदार्थों में पीड़कनाशियों के अवशेष के स्तर को निर्धारित करते हैं और उस अवसर की पहचान करते हैं जिसके द्वारा पीड़कनाशी अवशेष, गलत कृषि विधियों के द्वारा, खाद्य पदार्थों में अवशेष की सीमा से अधिक पहुँच जातें है। पीड़कनाशियों का गलत प्रयोग एक वैश्विक और राष्ट्रीय समस्या है। पीड़कनाशी के अवशेष की सान्द्रंता, बिना समय, गलत विधि से और आवश्यकता से अधिक प्रयोग करने पर निर्भर करती है। अवशेषों की खाद्य पदार्थों में उपस्थित, खाद्य पदार्थो के मानवीय उपयोग और निर्यात के लिए अनुपयुक्त बनाती है जिससे पर्यावरण भी दूषित होता है।

[kk| inkFkk e ihMdukf'k;k d vo'k"k% खाद्य पदार्थों में पीड़नाशियों के अवशेष के निम्न कारण हैः

1. पीड़कनाशियों का संगत और अविवेकपूर्ण प्रयोग।
2. पीड़कनाशी के प्रयोग और कटाई के मध्य उचित समयांतराल न होना।
3. अनुशंसित की गई मात्रा से अधिक और बार–बार प्रयोग करना।
4. अस्वीकृत पीड़कनाशियों का बार–बार प्रयोग।
5. निम्न गुणवत्ता वाले पीड़कनाशियों का प्रयोग।

ihMdukf'k;k d fo'ys"k.k dh fof/k;k

पीड़कनाशियों के विश्लेषण की विधियाँ इतनी सटीक होनी चाहिए जो पदार्थ को अति सूक्ष्म स्तर

तक पहचानने में सक्षम हो। यदि कोई विधि पदार्थ के उस स्तर तक पहचानने में सक्षम नही जिस स्तर पर वह जोखिम से जुड़ा है उन विधियों को प्रयोग में नही लाना चाहिए। पीड़कनाशियों का विश्लेषण सामान्यतः गैस क्रोमैटोग्राफी, हाई प्रफोरमेंस लिक्विड क्रोमैटोग्राफी से किया जाता है। आजकल बहुत ही संवेदनशील जीसीएमएस–एमएस और एलसीएमएस का प्रयोग किया जाता है जो अवशेष को बहुत ही निम्न स्तर तक पीपीबी/पीपीएम के स्तर पर पहचान कर सकता है। इस प्रकार से ही सही समय पर सही पीड़कनाशी सही मात्रा में प्रयोग करके और सही प्रतीक्षा समय का पालन करने पर पीड़कनाशियों की अवशेष की समस्या से बचा जा सकता है और भोजन को पीड़कनाशी अवशेष मुक्त बनाया जा सकता है।

धान-गेहूं फसल चक्र में जड़-गाँठ सूत्रकृमि रोग: एक गंभीर समस्या

पंकज[1], हरेन्द्र कुमार एवं नज्म अख़तर शकील[2]
[1]सूत्रकृमि विज्ञान संभाग, [2]कृषि रसायन संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

सूत्रकृमि, धागे की तरह के पादप परजीवी सूक्ष्मजीव होते हैं जो फसलों की जड़ों पर परजीवी के रूप में रहकर पौधों के भोजन पर ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं। सूत्रकृमि पौधों की जड़ों में घाव उत्पन्न करके नई प्रकार की कोशिकायें बनाते हैं जिससे पौधों में खाद्य पदार्थ, पानी व लवण सोखने व उनका वितरण प्रभावित होता है। धान व गेहूँ की फसलों में जड़–गाँठ रोग, *मिलाइडोगायनी ग्रेमिनीकोला* सूत्रकृमि से होता है। यह सूत्रकृमि ऊपरी क्षेत्र व कम वर्षा के पूर्वी इलाकों के धान उगाने वाले क्षेत्रों में ज्यादा सक्रिय होता है। यह सूत्रकृमि दोमट व बलूई दोमट मिट्टी में धान की फसल को ज्यादा क्षति पहुंचाता है व देश को प्रति वर्ष लगभग 100 करोड़ रूपयों की आर्थिक हानि होती है ।

l=Ñfe dk thou pØ

संक्रमित जड़ों का विच्छेदन करके सूक्ष्मदर्शी में देखने पर अक्सर गुच्छे के रूप में छोटे–2 सफेद, कुछ गोलाकार 0.5–1.0 मिमी. की श्लेष्मी अंडे युक्त मादायें जड़ के कार्टेक्स की अन्तःकोशिकाओं में घुसे रहते हैं। धान, गेहूँ व अन्य पौधों की महीन जड़ों से बाहर की ओर उभरी हुई अंडखोल (गाँठे) देखी जा सकती हैं। श्लेष्मी अँड मैट्रिक्स में 1–2 मिमी. लंबे धागे सदृश्य कई नर और मादा पाये जाते हैं। जड़ों को 0.1 प्रतिशत के एसिड फ्यूकसिन लैक्टोफीनॉल घोल में स्टेन करने पर लाल रंग की पूर्ण विकसित मादायें, नर, लार्वी व कई छोटे–2 अंडे दिखाई देते हैं। एक पूर्ण विकसित मादा में अंडों की कुल संख्या 200–700 तक हो सकती है। जड़–गाँठ सूत्रकृमि पूरे वर्ष अपना जीवन चक्र किसी न किसी पौधे पर बनाये रखते हैं। यह सूत्रकृमि 30 दिन में अपना जीवन चक्र पूरा कर लेते हैं। सूत्रकृमि जड़ों में अंदर घुसकर पौधे पर परजीवी रहकर भोजन चूसते रहते हैं और जड़ों की कोशिकाओं को क्षति पहुँचाकर व प्रजनन करके एक मादा सूत्रकृमि जड़ों के अंदर जिलेटीन जैली में अण्डे देकर अपना जीवन चक्र पूरा करती है, जिससे पौधे की जड़ों के छोर पर मोटी–मोटी गाँठे बन जाती है। इन जड़ गाँठों से सूत्रकृमि निकलकर नई जड़ों में घुसकर फसल को हानि पहुंचाते हैं। यह सूत्रकृमि एक फसल काल में 1–3 जीवन चक्र पूरा करते हैं।

jkx dh y{k.k

सामान्यतः संक्रमित धान के पौधे कमजोर व इनकी पत्तियॉ पीली व मुरझा जाती हैं। पत्तियों में क्लोरोफिल की मात्रा कम हो जाती है। बृहद व सूक्ष्म पोषक तत्वों के स्तर में कमी आ जाती है जबकि सूत्रकृमि संक्रमण के कारण तनों में कैल्शियम व जड़ों में पोटेशियम की मात्रा में वृद्धि तथा नत्रजन की कमी हो जाती है। शर्करा व प्रोटीन की मात्रा बढ़ जाती है जो सूत्रकृमि के प्रति प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया

प्रदान करता है। जडों पर सर्पिल या घोड़े की नाल जैसी सदृश्य गाँठ इसका मुख्य लक्षण है। इस प्रकार की गाँठे धान व गेहूँ के लगभग सभी खरपतवारों में भी देखे गए हैं। सूत्रकृमि लार्वा के संक्रमण, गमन व स्राव के कारण जडों की कार्टिकल कोशिकाओं में विघटन व अतिवृद्धि हो जाती है। धान व गेहूँ की फसलें कमजोर हो जाती है तथा पौधों की संख्या में कमी आ जाती है, धान में बालियॉ छोटी व कमजोर दाने की बनती हैं जिससे पैदावार में कमी आ जाती है। गहरे पानी वाले धान में सूत्रकृमि संक्रमित पौधे पानी से ऊपर तक वृद्धि करने में अक्षम होने के कारण बौने रह जाते हैं तथा लगातार डूबे रहने के कारण पौधे पीले होकर नष्ट हो जाते हैं।

जड़–गांठ सूत्रकृमि रोग से ग्रसित धान की फसल

ic/ku

uljh cM dk mipkj

- धान की नर्सरी को सूत्रकृमि रहित क्षेत्र में लगायें, धान की नर्सरी लगाने वाली जगह को पोलीथीन से ढक कर 3 सप्ताह तक सूर्यतपन करें। इससे मिट्टी की ऊपरी सतह के सूत्रकृमि, सूर्यतपन से मर जाते हैं। ऐसी क्यारी में लगाई नर्सरी पूर्णरूप से स्वस्थ होगी व खेत में पौध रोपाई के बाद फसल की अच्छी पैदावार होगी।
- *स्यूडोमोनास फ्लूरोसेन्स* (8x 10^8 cfu) को धान के पौधों को क्रमांगत रूप से गीला व सुखाकर 200 मि.लि./750 मि.लि. पानी की दर से उपयोग करने पर नियंत्रण व अन्य उपचारित समिश्रणों से अधिक प्रभावशाली पाया गया है।
- नर्सरी की क्यारियों में कार्बोफ्यूरान–3जी, (3.5 ग्राम/वर्गमीटर) की दर से उपचार करें।
- धान की रूपाई से पहले खेत में हरी खाद के लिए सनई (*क्रोटेलेरिया जुनसिया*) को 1–2 माह तक उगायें व बाद में जुताई करके खेत में मिला दें। इससे सूत्रकृमि की संख्या 30–40% कम होती है और हरी खाद मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बढ़ाती है।

e[; [kr dk mipkj

- धान की पौध रोपाई से पहले खेत में पानी भरकर अच्छी तरह पडलिंग करें। रोगी धान के खेत में 8–10 दिन तक पानी भरकर रखने से जड़–गाँठ सूत्रकृमि रोग कम हो जायेगा।

- गर्मियों (अप्रैल–मई) में हल्की सिंचाई के बाद खेत की 8–10 दिन के अंतराल पर 2–3 बार गहरी जुताई करने से सूत्रकृमि सूर्यतपन से मर जाते हैं।
- गेहूँ–धान के खेत में जहाँ रोग हो, वहाँ पर कार्बोफ्यूरान–3जी, 33 कि.ग्रा. (1 किग्रा. सक्रिय तत्व) प्रति हैक्टर के हिसाब से डालकर सूत्रकृमि का नियंत्रण कर सकते हैं।
- धान–गेहूँ खेत के फसल चक्र में मक्का, मूंगफली, घीया, तोरई, मूंग, लोबिया, लहसुन, मिर्च व बैंगन आदि को खेत में लगाने से धान जड–गाँठ सूत्रकृमि का नियंत्रण होता है।
- धान के खेत में खरपतवार की रोकथाम के लिये पेंडीमेथलिन 1–1.5 किलोग्राम प्रति हैक्टर छिड़काव करने के तत्पश्चात बीसपाइरीबेक/सोडियम 20–25 ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से बुवाई के 25-30 दिन के बाद छिड़काव करें और, गेहूँ के खेत में खरपतवार की रोकथाम के लिये क्लोडिनाफोप 60 ग्राम तथा मैटसलफ्यूरान मिथाईल 5 ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से मिलाकर छिड़काव करें।

Lkefdr ic/ku

- उपरोक्त 2–3 विधियों को अपनाकर, सूत्रकृमि की संख्या को नियमित करना, समाजिक, आर्थिक व पर्यावरण की दृष्टि से लाभदायक रहेगा व फसल उत्पादन में बचत/हानि का अनुपात भी सही रहेगा।

फलों में जड़-गांठ रोग एवं उनका प्रबंधन

पंकज एवं नज्म अख़तर शकील[1]
सूत्रकृमिविज्ञान संभाग, [1]कृषि रसायन संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

सूत्रकृमि (निमेटोड), पादप परजीवी सूक्ष्मजीव होते हैं जो फलों की जड़ों पर परजीवी के रूप में रहकर पौधों के भोजन पर ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं। सूत्रकृमि पौधों की जड़ों में घाव उत्पन्न करके नई प्रकार की कोशिकायें बनाते हैं जिससे पौधों में खाद्य पदार्थ, पानी व लवण सोखना व उनका वितरण प्रभावित होता है।

इसी कारण फसल में खाद्य पदार्थ की कमी के लक्षण उत्पन्न होते हैं और दिन के समय में पौधे मुरझाये से नजर आते हैं। जड़–गांठ सूत्रकृमि (*मिलाइडोगायनी*) फलों, सब्जियों, दालें व फूलों की फसलों में जड़–गांठ रोग फैलाकर उपज में अधिक हानि करते हैं।

l=Ñfe;k }kjk Qyk e gkfu

सूत्रकृमि प्रति वर्ष पूरे संसार के फसल उत्पादन में 10 प्रतिशत की हानि करते हैं, परन्तु अमरुद, अनार व अन्य फलों में सूत्रकृमि का ज्यादा प्रकोप होने से फल उत्पादन में 20 स 50 प्रतिशत की हानि होती है। हाल ही में हरियाणा के रेवाड़ी जिले में अमरुद व अनार के बगीचे में जड़–गांठ सूत्रकृमि का प्रकोप सर्वाधिक नजर आया। सभी प्रकार की फसलों का उत्पादन ठीक रखने व आर्थिक नुकसान कम करने के लिए पादप परजीवी सूत्रकृमि का उचित प्रबंधन करना अति आवश्यक है।

अधिकांश फलवृक्षों की आयु लम्बी होती है। इसके कारण हानिकारक सूत्रकृमि पौधों पर परजीवी रहकर अपनी संख्या बढ़ाते रहते है और इनका प्रकोप पूरे बाग में फैल जाता है इसी कारण से पौधे धीरे–धीरे सूखने लगते हैं और फल उत्पादन में हर साल हानि बढ़ती जाती है। किसान परेशान होकर बगीचे के सभी वृक्षों को काट देते हैं।

dgk ik;k tkrk g\

भारत में यह सूत्रकृमि अधिकांश राज्यों में पाया जाता है तथा इसके द्वारा छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश के कुछ भागों महाराष्ट्र व कर्नाटक आदि राज्यों में गंभीर क्षति होती है। इसके अतिरिक्त उत्तर भारतीय मैदानों सहित हरियाणा, दिल्ली व उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में भी काफी अधिक संक्रमण देखा गया।

कुछ सूत्रकृमि जड़ों की ऊपरी सतह पर रहकर भोजन करते है तो कुछ जड़ों में आधे अंदर और आधे बाहर रहकर तथा कुछ जड़ों में पूरे अंदर घुसकर अपना जीवन निर्वाह करते है। पौधों की जड़ों में अंदर घुसकर, जीवन निर्वाह करने वाले सूत्रकृमि फसल को सबसे ज्यादा हानि पहुंचाते हैं। फसल कटने पर ये सभी सूत्रकृमि जड़ों के साथ मिट्टी में रह जाते हैं और कुछ खरपतवारों के पौधे पर अपना जीवन शुरू कर देते हैं और अपनी संख्या को बढ़ाते रहते हैं। फलों पर अनेक प्रकार सूत्रकृमि 2 से 3 महीने में 25 से 30°C तापमान पर 3 से 4 जीवन चक्र पूरे कर लेता है। सूत्रकृमि प्रजनन द्वारा 40 से 600 अण्डे देकर अपनी संख्या को बढ़ाते हैं।

jkx d; y{k.k% सूत्रकृमि मुख्यतः निम्नलिखित लक्षण उत्पन्न करता है%

- पौधों में ज्यादा रोग बढ़ने से जड़ें सूखने लगती है इसी कारण से पौधों की टहनियां भी धीरे–धीरे सूखने लगती है। जड़ें गुच्छेदार, पतली व छोटी रहना और जड़ों का फूलकर मोटी हो जाना प्रमुख लक्षण है।
- इस सूत्रकृमि से फलवृक्ष की पत्तियां पीली व छोटी हो जाती है।
- फल कम व छोटे आकार के आते है। कुछ फल पकने से पहले ही सूखकर जमीन पर गिर जाते हैं। यह रोग 3 से 4 साल पुराने अमरुद व अनार के बगीचे में देखा जा सकता है।
- इस रोग में फलवृक्ष की मृत्यु हो सकती है जिससे रोगी फलवृक्ष को कटाना पड़ सकता है।
- जड़–गांठ रोगी पौधों की जड़ों पर मिट्टी की फफूंद आक्रमण कर जड़ों को गला–सड़ा देती है। जिससे पौधे सूखकर मर जाते हैं।

लक्षण फसल में खाद व पानी डालकर भी ठीक नहीं किये जा सकते है। इस प्रकार सूत्रकृमि पौधों में रोग उत्पन्न करके फसल को भारी क्षति पहुंचाते है और पैदावार भी कम हो जाती है।

l=Ñfe;k dk ic/ku

सूत्रकृमि का नियंत्रण व प्रबंधन निम्न प्रकार से किया जा सकता हैः

- मिलवा खेती/अंतः फसलीय द्वारा :– जड़–गांठ सूत्रकृमि रोग ग्रस्त बगीचो में जाफरी गेंदा को 1:1 व 1:2 के अनुपात में और प्याज, लहसुन, गोभी और मिर्च की मिलवा खेती करने से मुख्य फसल को सूत्रकृमि के प्रकोप से बचाया जा सकता है। ये फसलें सूत्रकृमि की संख्या कम करती है व किसान की आमदनी भी बढाती है।
- बगीचे में अमरुद व अनार लगाने से पहले कार्बोफ्यूरान 66 कि. प्रति हैक्टयर व फोरेट 20 किग्रा. (सक्रिय तत्व) प्रति हैक्टर की मात्रा में एक व दो बार बाट कर आवश्यकता अनुसार डालकर सूत्रकृमि का नियंत्रण कर सकते हैं।
- बगीचे में फसल बुआई के 10 दिन पहले तेल युक्त नीम की खली मिट्टी में मिलाने से सूत्रकृमि का प्रकोप कम होता है।
- प्रकृति जीव–जन्तुओं की संख्या में एक संतुलन कायम रखती है। वह किसी एक जन्तु की संख्या को एक सीमा से आगे नहीं बढ़ने देती है, जिससे प्रकृति का संतुलन कायम रहता है। जैविक प्रणाली में आंतरिक परजीवी कुछ कवक जैसेः– *परप्यूरियोसिलियम लाईलेसिनम,* एवं *ट्राइकोडरमा विरिडी* आदि को फलों की जड़ों में डाल कर सूत्रकृमियों को नष्ट करके फसल उत्पादन बढ़ाकर आर्थिक नुकसान से बचा जा सकता है।

  1 *स्यूडोमोनस फ्लोरिसेन्स* 1% WP --- बीज उपचार : 10ग्रा / किग्रा बीज
  नर्सरी उपचार : 50ग्रा / m^2

- अमरुद व अनार का सूत्रकृमि रोगी पौधों द्वारा ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलता है इसलिए प्रमाणित नर्सरी से स्वस्थ पौधें खरीदकर खेत में रोपाई करें। मई–जून में पौध वाली

फसल की नर्सरी लगाने से पहले, नर्सरी की क्यारी को पॉलीथिन चादर से 3–4 हफ्ते तक ढ़ककर, सूर्यतपन करने के बाद क्यारी में नर्सरी लगाये।

- रोगी बगीचे को कटवाने के बाद गर्मियों में बगीचे से सभी पुराने रोगी जड़ों को खोदकर निकाल ले व नष्ट कर दें। इसके बाद 2–3 गहरी जुताई 10–15 दिन के अंतराल पर करें। सूत्रकृमि सतह पर आकर सूर्यतपन से नष्ट हो जायेंगे, परन्तु कुछ सूत्रकृमि मिट्टी में निष्क्रिय रहकर अधिक तापमान में भी जीवित बचे रहे जाते हैं। इस समस्या के समाधान के लिए खेत की 1 या 2 हल्की सिंचाई करनी चाहिए। इससे सूत्रकृमि निष्क्रिय अवस्था से सक्रिय अवस्था में आ जाते है इसके बाद खेत की गहरी जुताई करने से छिपे हुए सूत्रकृमि तेज धूप से नष्ट हो जाते हैं।
- बगीचे में हरी खाद के लिए सनई (*क्रोटोलेरिया*) को 1–2 महीने तक उगाने के बाद खेत में ही जुताई करके अच्छी तरह मिट्टी में मिला दें। इससे हरी खाद भी मिलेगी व सूत्रकृमि की रोगथाम भी होगी।

किसान उपरोक्त विधियों में से 2–3 विधियां अपनी आवश्यकता के अनुसार अपनाकर समेकित प्रबंधन करे। सूत्रकृमि नाशक दवा का प्रयोग खेत में कम करना चाहिये जिससे पर्यावरण को नुकसान न हो।

जड़–गांठ रोग से ग्रस्त अमरुद का पौधा

अमरुद की जड़ों में जड़–गांठ रोग के लक्षण

गेहूँ की फसल में मोल्या रोग के लक्षण व उसका प्रबंधन

पंकज एवं हरेन्द्र कुमार
सूत्रकृमिविज्ञान संभाग,
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

पादप परजीवी सूत्रकृमि मिट्टी में रहने वाले धागे के आकार के रंगहीन व रेंगकर चलने वाले बहुकोशीय अकशेरुकीय सूक्ष्म प्राणी हैं। ये ग्रीष्म व शरद ऋतु में सर्वाधिक संख्या में पाये जाते हैं। इन्हीं पादप परजीवी सूत्रकृमियों में से एक अहम धान्य पुट्टी सूत्रकृमि (*हैटेरोडेरा ऐवीनी*) है जो गेहूँ व जौ में मोल्या रोग उत्पन्न करता है और इसका आक्रमण प्रायः वर्षा आधारित शुष्क क्षेत्रों व रेतीली भूमि में देखा गया है। गेहूं व जौ की फसल में मोल्या रोग का प्रभाव मुख्य रूप से राजस्थान, हरियाणा में तथा इसके अतिरिक्त पंजाब, दिल्ली, जम्मू–कश्मीर, कांगड़ा (हिमाचल प्रदेश), कानपुर, अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) और टीकमगढ़ (मध्य प्रदेश) आदि क्षेत्रों में पाया जाता है। इस रोग से राजस्थान के हनुमानगढ़, जयपुर, अलवर, सीकर व झुंझुनू आदि सहित 18 जिले और हरियाणा के 6–7 जिले, रेतीली मिट्टी होने तथा सिंचाई, व उर्वरक का अभाव होने की वजह से प्रभावित हैं, जिससे काफी मात्रा में गेहूँ व जौ का उत्पादन प्रभावित होता है। यह सूत्रकृमि एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में मिट्टी के स्थानांतरण से फैलता है। यह स्थानांतरण आंधी, रेतीले टिब्बे के कारण अधिक फैलता है।

Qly mRiknu e{kfr

हमारे देश में मोल्या रोग से गेहूं व जौ की फसल को औसतन 15 से 20 प्रतिशत तक की हानि होती है, जिससे किसान को काफी आर्थिक नुकसान सहना पड़ता है। सामान्यतः फसल उत्पादन में प्रतिवर्ष 5000 करोड़ रूपयों की हानि सूत्रकृमि के प्रकोप के कारण होती है।

jkx d Yk{k.k

गेहूँ की बुआई के एक महीने बाद जनवरी–फरवरी में रोग के प्रथम लक्षण फसल में दिखाई देने लगते हैं। फसल में इस रोग के आने से पौधे भिन्न–भिन्न समूहों में कहीं बौने, छोटे पीले रंग के व कहीं पर बड़े पौधे दिखाई देते है। पौधे पीले व बौने रह जाते हैं। पौधों में फुटाव कम होता है। रोगी बालियों में दाने कम, पतले व छोटे सिकुड़े हुए बनते हैं। रोगी पौधों में बालियां छोटी व स्वस्थ पौधों से पहले ही आ जाती हैं। रोगी पौधे की जड़ें पतली, छोटी व गुच्छेदार हो जाती है। फरवरी माह में रोगी पौधे की जड़ों को मिट्टी से सावधानीपूर्वक उखाड़ करके साफ पानी से धोकर ध्यान से देखने पर गोलाकार सफेद या भूरे रंग की यूरिया के दाने जैसे मादायें पौधों की जड़ों पर चिपकी हुई दिखाई देती है जिन्हें किसान आसानी से देख सकते हैं।

मोल्या रोग के लक्षण

l=Ñfe dk thou pØ

धान्य पुट्टी सूत्रकृमि (सी.सी.एन.) अपना जीवन चक्र गेहूँ व जौ की फसल पर अधिक से अधिक 120 दिन में पूरा कर लेता है व फसल में एक ही जीवनचक्र पूरा करता है। यह सूत्रकृमि शूकिका के माध्यम से जड़ों के अंदर घुस जाता है व अपने जीवन चक्र की चार अवस्थाओं को पूरी करके, मादा अपने शरीर में 200 से 500 तक अण्डे पैदा करती है, इसके उपरांत यह मादा सूत्रकृमि मरकर भूरे काले रंग की पुट्टी बन जाती है। सूत्रकृमि जड़ में घुसकर पौधे का भोजन चूसकर जड़ की कोशिकाओं को हानि पहुंचाकर व परभोजी रहकर अपना जीवन चक्र पूरा करते है। गेहूँ की फसल के उपरांत यह पुट्टी सूत्रकृमि मिट्टी में निष्क्रिय अवस्था में पड़े रहते है। अगले वर्ष गेहूं की फसल जब दोबारा लगाई जाती है तब यह फिर से अनुकूल तापमान, आद्रता व जड़ों से रिसाव प्राप्त होने पर सक्रिय होकर फसल को पहले से ज्यादा हानि पहुंचाते हैं।

l=Ñfe dk icU/ku

- खेत की हल्की सिंचाई करने के बाद मई–जून के महीने में 2–3 गहरी जुताई 10–15 दिन के अंतराल पर करने से सूत्रकृमि सूर्यतपन से मर जाते हैं।
- रबी के मौसम में फसल चक्र अपनाते हुए सरसों, मटर, चना, अलसी, सौफ व गाजर की फसल उगा सकते हैं। यह फसल चक्र 2–3 साल तक अपनायें।
- खेत में रोगरोधी किस्में लगातार सूत्रकृमि को नियंत्रण कर सकते हैं। जैसे– गेहूँ की राज एम. आर–1 व जौ राज 2035, राज–2052, व बी एच 393 इत्यादि।
- खेत में खरीफ की फसल से पहले हरी खाद के लिए सनई (*क्रोटोलेरिया जून्सिया*) 1–2 माह तक उगायें व बाद में जुताई करके खेत में मिला दें इससे सूत्रकृमि बायोफ्यूमिगेशन के कारण मर जाते हैं व खरीफ और रबी की फसलों को खाद भी मिलती है।
- गेहूं की पछेती बुआई दिसम्बर के दूसरे सप्ताह में की जाए तो सूत्रकृमि का फसल पर प्रकोप कम हो जायेगा।
- मिट्टी की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिए उचित मात्रा में खाद डालें जिससे पौधों में रोग सहने की शक्ति बढ़ जायेगी।
- गेहूं बोने से पहले कार्बोस्लफान–25 एच.डी., 100 किग्रा. बीज में 1 किग्रा. (सक्रिय तत्व) से बीजोपचार करें।
- खेत में गेहूँ की बुआई के साथ कार्बोफ्यूरान–3जी (फ्यूराडान) 33 किग्रा. प्रति हैक्टर (1 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर) की मात्रा में डालकर सूत्रकृमि का नियंत्रण कर सकते हैं। कार्बोफ्यूरॉन का उपयोग फसल बोने से 25 दिन पश्चात् भी करके सूत्रकृमियों का नाशकर सकते हैं ।

समेकित प्रबंधन में 2–3 विधियों को अपनाकर सूत्रकृमि की संख्या को नियमित करके, सामाजिक, आर्थिक व पर्यावरण की दृष्टि से लाभदायक रहेगा व फसल उत्पादन में बचत/हानि का अनुपात भी

सही रहेगा। सूत्रकृमिनाशक दवा का प्रयोग खेत में कम करना चाहिये क्योंकि इसका प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है।

हरियाणा के धान्य पुटटी सूत्रकृमि से प्रभावित कुछ क्षेत्रों में इस बीमारी को समझने में काफी अंधविश्वास है और जो कृषि अधिकारी खेती–बाड़ी की बिधा में लगे हुए हैं वे प्रायः इस पुटटी सूत्रकृमि के प्रभाव को दर किनार करके इसे जिंक या आयरन की कमी का प्रभाव मानते हैं और इसके लिए भारी मात्रा में आयरन व जिंक सल्फेट की सब्सिडी के लिए उत्प्रेरक का कार्य कर इन उर्वरकों को उपलब्ध करा रहे हैं। इस भ्रान्ति को किसानों, विकास कार्य में लगे हुए लोगों, प्रचार प्रसार में व्यस्त कर्मियों तथा राज्य कृषि विभागों के अधिकारियों के संवेदनशील करने की जरूरत है जिससे सही इलाज हो सके और मोल्या रोग के द्वारा पैदा की गई चुनौती को अच्छी तरह से स्वीकार करके, सही निदान करके उत्तम उपचार व बचाव हो सके।

सब्जियों में पादप परजीवी सूत्रकृमि तथा उनका प्रबंधन

पंकज, हरेन्द्र कुमार, खजान सिंह एवं नज्म अख़्तर शकील[1]
सूत्रकृमिविज्ञान संभाग] [1]कृषि रसायन संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

सब्जियों में जड़–गांठ रोग, *मेलाइडोगाइनी* सूत्रकृमि की कई जातियां फैलाती है। यह सूत्रकृमि आर्थिक महत्व की अनेक फसलों, दालों व सब्जियों को हानि पहुंचाती है। सब्जियों का जड़ गांठ रोग पूरे भारत के सब्जी उत्पादन क्षेत्रों में पाया जाता है यह रोग सूत्रकृमि के कम व ज्यादा प्रकोप के अनुसार हानि पहुंचाता है। इस सूत्रकृमि से सब्जियों की उपज में 20–50 प्रतिशत तक हानि देखी गई है, जिससे किसान को आर्थिक नुकसान होता है।

ikS/kksa esa jksx ds y{k.k

- सब्जियां, नगदी फसल होने की वजह से किसान खेत में पूरे साल लगातार सब्जियां उगाते हैं, जिससे फसल में सूत्रकृमि रोग लग जाता है।
- सूत्रकृमि पौधों की जड़ों में छोटी–बड़ी गांठे बनाते हैं।
- रोगी पौधे में जड़ों की कोशिकाएं क्षतिग्रस्त होने से उनकी जमीन से पोषक तत्व व पानी सोखने की क्षमता कम हो जाती है जिससे पौधे पीले व छोटे रह जाते हैं।
- खेत में रोगी पौधों की पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती हैं, पौधे मुरझाये से रहते हैं और फल व फूल कम व छोटे आते हैं।
- जड़–गांठ रोगी पौधों की जड़ों पर मिट्टी की फफूंद आक्रमण कर जड़ों को गला–सड़ा देती है, जिससे पौधे सूखकर मर जाते हैं।

'kkdh; Qlyksa esa lw=d`fe;ksa dk izca/ku

jksi.k djus okyh lfCt;ksa ds fy, ¼VekVj] cSaxu] QwyxksHkh½

VekVj

jksx ds y{k.k

tM+&xkaB jksx] *esykbMksxkbuh* lw=Ñfe

- सूत्रकृमि पौधों की जड़ों में छोटी–बड़ी गांठे बनाते हैं।
- रोगी पौधे में जड़ों की कोशिकाएं क्षतिग्रस्त होने से उनकी जमीन से पोषक तत्व व पानी सोखने की क्षमता कम हो जाती है जिससे पौधे पीले व छोटे रह जाते हैं।
- खेत में रोगी पौधों की पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती हैं पौधे मुरझाये से रहते हैं और फल व फूल कम व छोटे आते हैं।

- जड़–गांठ रोगी पौधों की जड़ों पर मिट्टी की फफूंद आक्रमण कर जड़ों को गला–सड़ा देती है, जिससे पौधे सूखकर मर जाते हैं।

juhQke l=Ñfe

- पौधे छोटे रह जाते हैं।
- ग्रसित पौधों की पत्तियां सूख जाती हैं, उपरी तना झुलस जाता हैं तथा पत्तियां झड़ जाती हैं।

ic/ku

tM&xkB jkx] *e/ykbMkxkbuh* l=Ñfe

ik/k D;kfj;k d fy,

- ik/k D;kfj;k dk mipkj% पौध क्यारियों को अच्छी तरह तैयार करके कार्बोफ्यूरान (फ्यूराडान–3जी) 10 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से क्यारी में बीज बोने से पहले या बीज के साथ बोने पर स्वस्थ पौधे तैयार होंगे जो पादप सूत्रकृमि रहित होंगे। ऐसी पौध का खेतों में रोपण करने से सूत्रकृमि द्वारा कम हानि होगी तथा पैदावार बढ़ेगी।
- tM mipkj% पौध की जड़ को ट्राइजोफास (40 ई.सी.) के 2.5 मि.लि. प्रति लि. की दर से पानी के घोल में 6 घंटे तक डुबोये रखने के बाद सायं काल के समय खेत में रोपण करने से सूत्रकृमियों का प्रकोप नहीं होता तथा पैदावार में वृद्धि होती है।
- m"ek;u% गर्मियों में मुख्यतः मई–जून के माह में मानसून आने से पूर्व पौध उगाने से पहले क्यारियों को अच्छी तरह तैयार करके प्लास्टिक की चादर (60–100 मि.मी.) से ढक दें और प्लास्टिक की चादर को चारों तरफ मिट्टी से दबाकर तीन सप्ताह तक ढका रहने दें। ऐसा करने से मिट्टी में सूर्य के तपन से गर्मी अधिक होती है जिसके द्वारा मिट्टी के हानिकारक सूत्रकृमि मर जाते हैं।

£r d fy,

- सूत्रकृमि ग्रसित खेतों में सूत्रकृमि की अवरोधक फसलें दो–तीन साल उगाने से पादप सूत्रकृमियों से बचाव होता है। जिन खेतों में लगातार सब्जियॉं तथा दलहनी फसलें उगाई जा रही हैं तथा जड़–गांठ सूत्रकृमि पनप गया है, उन खेतों में रबी में गेहूॅं, जई, सरसों, जौ और जाफरी गेंदा तथा खरीफ में ज्वार, बाजरा और मक्का की खेती दो–तीन साल करने से जड़–गांठ सूत्रकृमियों की संख्या बहुत कम हो जाती है ।
- सूत्रकृमि ग्रसित खेतों की गर्मियों में मई–जून के माह में 15 दिन के अंतराल पर 2–3 गहरी जुताइयां मिट्टी पलटने वाले हल से करने पर हानिकारक पादप परजीवी सूत्रकृमि कम हो जाते हैं।
- खेत में सनई की फसल 1–2 माह तक उगाएं। सनई की फसल को जुताई करके मिट्टी में मिला दें। इससे फसल को खाद मिलेगी और हानिकारक सूत्रकृमियों की संख्या भी कम होगी।

- सूत्रकृमि प्रतिरोधी जातियॉ जैसे टमाटर की निमा मुक्त (एस.एल.–120), हिसार ललित और पी.एन.आर.–7, मंगला व रोमा जातियों को सूत्रकृमि ग्रसित खेतों में उगाने से पैदावार में वृद्धि होती है। इन पर सूत्रकृमि नहीं पनपते।

  c\xu% विजय हाईब्रिड, ब्लेक ब्यूटी, ब्लैकराउन्ड, जोनपूरी लम्बा और के एस–224, fep% पूसा ज्वाला।

- खेत में कार्बोफ्यूरान या फोरेट 1.2 किग्रा. (सक्रिय तत्व) प्रति है. की मात्रा में एक व दो बार बाट कर आवश्यकता अनुसार लाइन में डालें।

juhQkel l=Ñfe

ik/k D;kfj;k dk fy,

- गर्मियों में मुख्यतः मई–जून के माह में मानसून आने से पूर्व पौध उगाने से पहले क्यारियों को अच्छी तरह तैयार करके प्लास्टिक की चादर (60–100 मि.मी.) से ढक दें और प्लास्टिक की चादर को चारों तरफ मिट्टी से दबाकर तीन सप्ताह तक ढका रहने दें। अधिक संक्रमित क्षेत्रों में कार्बोफ्यूरॉन (फ्यूरॉडान 3–जी) 33 कि.ग्रा./है. या फोरेट–10 जी 10 कि.ग्रा./है. की दर से पौध क्यारियों में बीज बोने से पूर्व या साथ डालने से हानिकारक पादप परजीवी सूत्रकृमि का प्रकोप और भी कम हो जाता है ।

£r dk fy,

- सूत्रकृमि ग्रसित खेतों में सूत्रकृमि की अवरोधक फसलें दो–तीन साल उगाने से पादप सूत्रकृमियों से बचाव होता है।
- सूत्रकृमि ग्रसित खेतों की गर्मियों में मई–जून के माह में 15 दिन के अंतराल पर 2–3 गहरी जुताइयॉ मिट्टी पलटने वाले हल से करने पर हानिकारक पादप परजीवी सूत्रकृमि कम हो जाते हैं।

यदि सूत्रकृमि की संख्या, प्रस्तावित संख्या से अधिक हो तो निम्न उपाय करें :

nygy vkj fryguh Qlyk es uhe dk chtk dk pw.k }kjk fu;=.k% बीज बोने से 10–15 दिन पहले खेत में सिंचाई (पलेवा) के समय स्वयं तैयार किए गए नीम के बीजों का चूर्ण 30 कि.ग्रा./है. की दर से डालें तथा बाद में बीज बोयें। इससे पौधों पर सूत्रकृमियों का प्रकोप कम होता है तथा पैदावार में बढ़ोतरी होती है।

xh"e es tqrkbZ% सूत्रकृमि ग्रसित खेतों की गर्मियों में मई–जून के माह में जब तापमान 38–45^{0} से. हो, उस समय 15 दिन के अंतराल पर 2–3 गहरी जुताइयॉ मिट्टी पलटने वाले हल से करने पर हानिकारक पादप परजीवी सूत्रकृमि 50–70 प्रतिशत कम हो जाते हैं। इसके बाद खेतों में अच्छी फसल उगायी जा सकती है।

m"ek;u% गर्मियों में मुख्यतः मई–जून के माह में मानसून आने से पूर्व पौध उगाने से पहले क्यारियों को अच्छी तरह तैयार करके प्लास्टिक की चादर (60–100 माइक्रो मी.) से ढक दें और प्लास्टिक की

चादर को चारों तरफ मिट्टी से दबाकर तीन सप्ताह तक ढका रहने दें। ऐसा करने से मिट्टी में सूर्य के तपन से गर्मी अधिक होती है जिसके द्वारा मिट्टी के हानिकारक सूत्रकृमि मर जाते हैं। साथ में खरपतवार और फफूंदी से भी बचाव होता है। ऐसी क्यारियों में पौध उगाने से पौधे स्वस्थ तथा सूत्रकृमि रहित होते हैं तथा अच्छे पनपते हैं, जिनका खेतों में रोपण करने पर पैदावार में बढ़ोतरी होती है।

इसके अतिरिक्त अधिक संक्रमित क्षेत्रों में कार्बोफ्यूरॉन (फ्यूरॉडान 3–जी) 33 कि.ग्रा./है. या फोरेट–10 जी 10 कि.ग्रा./है. की दर से पौध क्यारियों में बीज बोने से पूर्व या साथ डालने से हानिकारक पादप परजीवी सूत्रकृमि का प्रकोप और भी कम हो जाता है। ऐसे पौधों के रोपण से सब्जियों तथा धान के खेतों में पैदावार अधिक मिलती है।

mipkfjr cht ckuk: भिंडी, करेला, लौकी आदि बेलवाली फसलों के बीजों को बोने से पूर्व मार्शल 25 एस.टी. (कार्बोसल्फान) 120 ग्राम या 50 ग्रा. निंबोली का चूर्ण प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें (बीजों को ड्रम में डालें, थोड़ा गोंद लगाएं और रसायन या निंबोली चूर्ण डालकर अच्छी तरह हिलायें) और उपचारित बीजों की बुआई ग्रसित खेतों में करने पर पौधे अच्छे तथा स्वस्थ पनपते हैं जिनमें सूत्रकृमियों का प्रभाव कम होता है तथा पैदावार भी बढ़ती है । रसायन, रैलिस इंडिया लिमिटेड, प्लाट नं. 21 और 22, द्वितीय, थीनिया फैक्टरी क्षेत्र पी.वी. 3613, बंगलौर–560058 से प्राप्त किया जा सकता है।

धान्य फसलों के रोगों की पहचान एवं समेकित प्रबंधन

वैभव कुमार सिंह, राम चरण मथुरिया, रोबिन गोगोई, बिष्णु माया बस्याल एंव रश्मि अग्रवाल
पादप रोगविज्ञान संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

xg¡ d¡ jkx

1- jr¦vk

गेहूं की फसल में तीन प्रकार के रतुआ लगते हैं ये तीनों ही भारत में पाये जाते हैं:

i. ihyk vFkok /kkjhnkj jr¦vk

y{k.k% रोग के लक्षण पीले रंग की धारियों के रूप में पत्तियों पर दिखाई देते हैं, जिनमें से पिसी हुई हल्दी जैसा पीला चूर्ण निकलता है। ये धारियाँ वास्तव में यूरिडिया होती हैं। पत्तियों पर यह यूरिडिया धारियों में बनते हैं। मुख्यतः ये धारियाँ पत्तियों पर ही पायी जाती हैं, परन्तु रोग की व्यापक दशा में पत्तियों के आवरण, तनों एवं बालियों पर भी देखी जा सकती हैं। रोग से प्रभावित पत्तियाँ शीघ्र पककर सूख जाती हैं। पत्तियों की निचली सतह पर मंद काले रंग के टेल्यूटोस्पॉट बनते हैं। इस रतुआ का प्रकोप अधिक ठंड, बदली और नमी वाले मौसम में बहुत ही संक्रामक होता है। पीला रतुआ गेहूँ में बालियाँ लगने से पहले ही प्रकट होता है, अतः नुकसान अधिक होता है। रोगी पौधों की बालियों में लगे दाने हल्के एवं सिकुड़े हुए होते हैं। रोगी पौधों की जड़ों की बढ़वार कम होती है, जिससे उपज घट जाती है।

jkx tud% यह रोग *पक्सीनिया स्ट्राइफॉर्मिस* नामक कवक से होता है।

ii- Hkjk jr¦vk

y{k.k% इस रतुआ का भी अधिक प्रकोप पत्तियों पर ही होता है। पत्तियों पर चमकीले नारंगी रंग के स्फोट दिखाई देते हैं जो पंक्तियों में न होकर सतह पर बिखरे रहते हैं तथा आपस में एक दूसरे से मिले हुए नहीं होते। नारंगी रंग के स्फोट इस रतुआ के यूरिडिया हैं जो गोल वृत्ताकार होते हैं। पत्ती के जिस स्थान पर यूरिडो पुंज बनते हैं वहाँ का हरा रंग हल्का पड़ जाता है। इस रोग में स्फोटों का आकार पीले रतुआ के स्फोटों की अपेक्षा कुछ बड़ा होता है। भूरा रतुआ के स्फोट शीघ्र फट जाते हैं एवं असंख्य यूरीडो बीजाणु बाहर निकलते हैं।

jkx tud% यह रोग *पक्सीनिया ट्रिटिसीना* नामक कवक से होता है।

iii- dkyk jr¦vk

y{k.k% यह रोग संक्रमित पौधों की जड़ों को छोड़कर शेष सभी भागों जैसे तना, पत्तियाँ, पर्णच्छदों तथा बालियों पर होता है जहाँ पर स्फोट दिखाई पड़ते हैं। प्रारंभ में यह स्फोट बहुत छोटे होते हैं, परन्तु बाद में धीरे–धीरे बड़े तथा एक दूसरे से मिले हुए प्रतीत होते हैं। शुरू में स्फोट गहरे भूरे रंग के होते

हैं जो कि शुरू में एक महीन झिल्ली के अंदर रहते हैं, परन्तु जैसे–जैसे इनका परिमाण बढ़ता जाता है झिल्ली फट जाती है और भूरे रंग के यूरिडो बीजाणु बाहर निकल आते हैं। एक स्फोट में असंख्य यूरिडो बीजाणु उपस्थित रहते हैं। इसके बाद यह गहरे भूरे रंग के धब्बे काले रंग में परिवर्तित हो जाते हैं, जो कि इस रोग की टेल्यूटो अवस्था है। रोग की उग्र अवस्था में पौधों का आकार घट जाता है तथा बालियों में दाने सिकुड़े हुए एवं हल्के उत्पन्न होते हैं तथा कभी–कभी तो बालियों में बिल्कुल ही दाने नहीं बनते। रोगग्रस्त पौधों का भूसा बहुत अधिक सूखकर भंगुर हो जाता है।

jkxtud% यह रोग *पक्सीनिया ग्रेमिनिस ट्रिटिसाइ* नामक कवक से होता है।

ic/ku% बुआई के लिए अनुमोदित रतुआ निरोधक किस्मों का चुनाव करें। रतुआरोधी किस्में 4–5 वर्ष के बाद रोगग्राही बन जाती हैं। ऐसी स्थिति रतुआ कवकों में परिवर्तन होने पर आती है इसलिए नवीनतम सहनशील किस्मों को प्रयोग में लाना चाहिए। देर से बोई गई या देर से पकने वाली गेहूँ की किस्मों पर भूरा एवं काला रतुआ से अधिक हानि होती है। अतः फसल समय पर बोनी चाहिए। गेहूँ के पीले रतुए के प्रबंधनार्थ रोगरोधी प्रजातियों की खेती करना, सर्वोत्तम उपाय है। गेहूँ के जीन प्रारूपों, जिनमें रोगरोधी जीनें वाईआर 18, वाईआर 5, वाईआर 10 एवं वाईआर 15 विद्यमान हैं, का उपयोग इस रोग के दीर्घावधि नियंत्रण हेतु किया जा सकता है। बुआई के लिए क्षेत्र में अनुमोदित पीला रतुआ निरोधक प्रजातियों का ही प्रयोग करे तथा दूसरे क्षेत्रों के लिए अनुमोदित प्रजातियों को न लगायें। उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र के लिए एचडी 3043, एचडी 3059, एचडी 3086, एचडी 2967, डीपीडब्ल्यू 621–50, पीबीडब्ल्यू 644, पीबीडब्ल्यू 550, पीबीडब्ल्यू 502, डब्ल्यूएच 542, डब्ल्यूएच 896, एचडब्ल्यू 1012, इत्यादि तथा उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र के लिए वीएल 829, वीएल 832, वीएल 907, एचएस 490, एचएस 365, एचएस 560, एच पी डब्ल्यू 155, इत्यादि का चुनाव करें। उपरोक्त प्रजातियों की बुआई समय पर करें। नाइट्रोजन प्रधान उर्वरकों की अत्यधिक मात्रा रतुआ रोगों को बढ़ाने में सहायक होती है इसलिए उर्वरकों के संतुलित अनुपात में पोटाश की उचित मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। आवश्यकता से अधिक सिंचाई भी रोग बढ़ाने में सहायक हो सकती है, इसलिए रेाग नियंत्रण की दृष्टि से सिंचाई यथावश्यक मात्रा में करनी चाहिए। फसल पर रतुआ रोगों के पहले लक्षण दिखाई पड़ते ही कवकनाशी का छिड़काव करें। छिड़काव के लिए प्रॉपीकोनेज़ोल 25 ईसी (टिल्ट 25 ईसी) या टेबूकोनेजोल 25 ईसी (फोलिकर 250 ईसी) या ट्राईडिमिफोन 25 डब्ल्यूपी (बेलिटॉन 25 डब्ल्यूपी) का 0.1 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करें। एक एकड़ खेत के लिए 200 मि.लि. दवा 200 लिटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। पानी की उचित मात्रा का प्रयोग करें। फसल की छोटी अवस्था में पानी की मात्रा 100–120 लिटर प्रति एकड़ रखी जा सकती है। रोग के प्रकोप तथा फैलाव को देखते हुए दूसरा छिड़काव 15–20 दिन के अंतराल पर करें। रोग–लक्षणों के प्रकटन की पहचान के लिए सतत रूप से निगरानी एवं सर्वेक्षण करना अत्यावश्यक हैं। खेतों का निरीक्षण शुरू से ही बड़े ध्यान से करना चाहिए, विशेषकर वृक्षों के आसपास या पापुलर वृक्षों के बीच उगाई गई फसल पर अधिक ध्यान देना चाहिए।

2- vuko'r dM

y{k.k% सामान्यतः बालियाँ निकलने के पहले रोगी एवं स्वस्थ पौधों में कोई अंतर प्रकट नहीं होता, परन्तु रोगी पौधों में बालियाँ प्रायः स्वस्थ पौधों की अपेक्षा कुछ पहले निकलती हैं। गेहूँ की सोनालिका

नामक किस्म में बालियाँ निकलने से पहले ध्वज पर्ण के पीले पड़ने से रोगी पौधे पहचाने जा सकते हैं। रोगी पौधों की सभी बालियाँ काले चूर्ण का रूप ले लेती हैं और उनमें दाने नहीं बनते हैं। बाद में काला चूर्ण हवा से उड़ जाता है और केवल डंडी रह जाती है। कभी कभी ऐसी बालियाँ भी बनती हैं, जो केवल आंशिक रूप से काले चूर्ण में बदल जाती हैं।

jkx tud% यह रोग *अस्टिलैगो सेजिटम ट्रिटिसाइ* नामक कवक से होता है।

icU/ku% रोग रहित बीज बोएं। बीजोत्पादन वाले खेतों को बालियाँ निकलने के समय लगातार निरीक्षण करते रहना चाहिए और जैसे ही रोगी बालियाँ दिखाई दें, उन्हें कागज के लिफाफे से ढककर तोड़ना चाहिए। इसके बाद या तो उन्हे भूमि में दबा देना चाहिए या जला देना चाहिए। ऐसा करने से अगली फसल में संक्रमण नहीं आयेगा। मैदानी क्षेत्रों में मई–जून के महीने में कड़ी धूप वाले दिन बीज को 4 घण्टे पानी में भिगो कर (प्रातः 6 से 10 बजे तक) छान लें तथा बीज को पक्के फर्श पर अच्छी तरह सुखाकर अगले वर्ष बोने हेतु भण्डारित कर लेना चाहिए। बुवाई से पहले बीज का उपचार फफूँदनाशक रसायन जैसे वाइटावैक्स अथवा कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्रा. अथवा रेक्सील 1 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से करके बोना चाहिए।

3- igkMh cV ;k nxU/k;Dr d.Mok

y{k.k% पहाड़ी बंट दो तरह के होते हैं। नीचा कंड इसमें रोगी पौधे स्वस्थ पौधों की तुलना में छोटे रह जाते हैं। ऊँचा कंड से प्रभावित पौधे स्वस्थ पौधों के बराबर ही ऊँचे होते हैं। बालियाँ निकलने पर यह रोग आसानी से पहचाना जा सकता है। रोगी बालियाँ जो देखने में खुली–खुली लगती हैं, स्वस्थ बालियों की अपेक्षा अधिक हरी होती हैं और अधिक समय तक हरी रहती हैं। जब गेहूँ दुग्धावस्था में हो, इस कंड़ की उपस्थिति की जाँच दाने को हस्त से दबाकर की जा सकती है। रोगी होने पर दाने से काला चिपचिपा लेई सा पदार्थ निकलता है। दाने पकने पर यह काला पदार्थ चूर्ण में बदल जाता है। रोगी खेतों तथा रोगी दानों से प्रायः सड़ी मछली जैसी दुर्गन्ध आती है।

jkx tud% यह रोग *टिलेशिया कैरीज* एवं *टिलेशिया फीटिडा* नामक कवकों से होता है।

icU/ku% बुवाई के लिए सही कंड निरोधक किस्म का चुनाव करें। मृदोढ़ फफूँद कम करने के लिए खेत में निकले रोगी पौधों को उखाड़कर एवं रोगी फसल अवशेषों को एकत्र करके जला दें। एक ही खेत में लगातार गेहूँ की फसल न लेने से भी इस रोग के संक्रमण को कम करने में सहायता मिलती है। बीज को थीरम 2.5 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से शोधित करके बोएं। वाइटावैक्स अथवा कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से भी शोधन किया जा सकता है। इससे अनावृत कण्डुआ और करनाल बन्ट रोगों की भी रोकथाम की जा सकती है।

4- djuky cV

y{k.k% इस रोग के लक्षण दुर्गंधी–कंड से बिल्कुल भिन्न हैं। रोग उस समय दिखाई पड़ता है जब दाने बन जाते हैं किसी विशेष बाली के कुछ दाने अंशतः काले चूर्ण का रूप धारण कर लेते हैं, जो शुरू में दाने की भित्ति से ढका रहता है। पौधे की सभी बालियों में यह रोग नहीं पाया जाता है और एक बाली में कुछ ही दाने रोगी होते हैं। रोगी दाने बाली पर अनियमित रूप से बिखरे होते हैं, जिससे

पता लगता है कि संक्रमण वातोढ़ और स्थानगत होता है। प्रायः रोगी दाने अंशतः ही कंड–बीजाणुधानी पुंज में बदलते हैं। बालियाँ पकते समय बाहरी तुष पर फैल जाते हैं एवं भीतरी तुषों का भी विस्तार हो जाता है। काला चूर्ण शुरू में फलभित्ती से ढका रहता है, बाद में फलभित्ति के फटने पर वातावरण में फैल जाता है। इस कंड में भी सड़ी मछली के समान दुर्गन्ध आती है।

jkx tud% यह रोग *टिलेशिया इंडिका* नामक कवक से होता है।

ic/ku% स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग करें। बुआई के समय करनाल बंट निरोधक किस्मों का चुनाव करें। बीज का उपचार फफूंदीनाशक रसायन जैसे वाइटावैक्स अथवा कार्बेन्डाजिम के 2.5 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से करें। खड़ी फसल में बालियाँ निकलते समय टिल्ट 25 ई.सी. के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव दस दिन बाद करें।

5- /ot dM

y{k.k% यह गेहूँ के तने एवं पत्तियों का रोग है। पत्तियों एवं पर्णच्छदों पर इसका प्रकोप अधिक होता है। नियमतः पौधे का प्रत्येक भाग प्रभावित होता है। पत्तियाँ ऐंठ जाती हैं और ध्वज पत्ती काली होकर मुरझा जाती है। ऐसी पत्तियाँ शीघ्र ही गिर जाती हैं एवं पूरा पौधा ही मर जाता है। प्रायः रोगग्रस्त पौधों की बालियों में दाने नहीं बनते। यदि बनते भी हैं तो सिकुड़े एवं बेकार होते हैं। रोगजनक कवक तब प्रकट होता है जब पुरानी पत्तियों एवं पर्णच्छदों पर भूरे या भूरे काले थोड़े फूले हुए स्पॉट; बन जाते हैं, जो शिराओं के समान्तर पतली पट्टियाँ बनाते हैं। इन काली पट्टियों में कंड–जीवाणु होते हैं। बाद में पट्टियाँ फट जाती हैं एवं काले चूर्ण के समान बीजाणु बाहर आ जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *यूरोसिस्टिस ट्रिटिसाइ* नामक कवक से होता है।

ic/ku% फसल के बोने के लिए बीज ऐसी स्वस्थ फसल से लें जिसमें इस रोग का प्रकोप न हो। जिस खेत में यह रोग लग गया हो उसमें दो या तीन वर्ष के लिए जौ तथा जई बोई जानी चाहिए। इन फसलों में इस रोग का प्रभाव नहीं होता। जल्दी बुवाई करने से भी इस रोग का प्रकोप कम होते देखा गया है। बुआई के समय खेत में अच्छी नमी होना, फसल के अवशेषों का जला देना एवं गर्मी की जुताई ध्वज कंड के प्रकोप को कम करते हैं। इस रोग के नियंत्रण की सबसे अच्छी विधि रोगरोधी किस्मों एवं बीजोपचार का संयुक्त प्रयोग ही है। बीज को वाइटावैक्स अथवा कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करके बोना चाहिए।

6- pf.ky vkfl rk

y{k.k% सर्वप्रथम रोग के लक्षण पौधे की पत्तियों पर दिखाई देते हैं। पत्ती की ऊपरी सतह इस रोग के कारण अधिक प्रभावित होती है। फरवरी माह के शुरू में पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद तथा भूरे रंग की फफूँद दिखाई पड़ती है। पहले इस कवक के धब्बे छोटी–छोटी रंगहीन चित्तियों के रूप में बनते हैं, परन्तु अंत में इनके चारों ओर सफेद या चूर्णी समूह फैल जाता है। जब रोग तेजी से बढ़ता है तब यह चूर्णी समूह पत्तियों के निचले भाग पर भी छा जाता है। अनुकूल अवस्था में इस प्रकार का चूर्णी समूह तने और बालियों पर भी दिखाई पड़ता है। यह सफेद चूर्ण समूह धीरे–धीरे भूरे और लाल कत्थई रंग में परिवर्तित हो जाता है। मौसम के अंत में इन धब्बों के बीच काले या कत्थई रंग

के क्लीस्टोथीसियम दिखाई देने लगते हैं। रोगी पौधों की बढ़वार रुक जाती है अर्थात पौधे बोने रह जाते हैं, इसलिए इस रोग को बुकनी रोग भी कहते हैं। इस रोग से पौधे कमजोर और पत्तियाँ सूख जाती हैं, जिससे उपज घट जाती है। बालियों में दूध पड़ते समय रोग के कारण दाने सूखने और सिकुड़ने लगते हैं।

jksx tud% यह रोग *एरीसाइफी ग्रैमिनिस ट्रिटिसाइ* नामक कवक से होता है।

iczU/ku% कटाई के बाद रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को एकत्र करके खेत में जला दें। रोगरोधी या रोग सहिष्णु किस्में बोनी चाहिए। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश की सही मात्रा खेतों में डालें। पौध ों पर बारीक गंधक के चूर्ण का भुरकाव करना चाहिए। इसके अलावा फफूँदनाशी जैसे कैराथेन (0.05 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (0.05 प्रतिशत) या टिल्ट (0.1 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

7- iRrh vxekjh ;k >qylk jksx

y{k.k% सर्वप्रथम रोग के लक्षण पौधे की पत्तियों पर छोटे–छोटे पीले कत्थई रंग के अंडाकार धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं, जैसे–जैसे धब्बे बड़े होते जाते हैं उनका कोई विशेष आकार नहीं रह जाता। सबसे पहले रोग का प्रभाव निचली पत्तियों पर और बाद में ऊपर की ओर होता है। धब्बों के चारों ओर का सामान्य हरा रंग धुंधला हो जाने से एक संकीर्ण पीला चमकदार क्षेत्र बन जाता है। जैसे–जैसे रोग बढ़ता है बहुत सारे धब्बे मिलकर पत्तों के लगभग सारे भाग को घेर लेते हैं, फलस्वरूप पत्ती झुलसी हुई प्रतीत होती है। इस रोग की विशेषता यह है कि यह रोग बीजांकुरों पर दिखाई नहीं देता तथा इसके लक्षण पत्तियों पर 7–8 सप्ताह के बाद ही दिखाई देते हैं। रोग के लक्षण केवल पत्तियों तक ही सीमित नहीं रहते हैं, बल्कि व्यापक अवस्था में ये बालियों तथा तने के अन्य विभिन्न भागों पर भी धब्बों के रूप में दिखाई देने लगते हैं। यदि वातावरण में पर्याप्त नमी हो तो इन धब्बों पर काले रंग का चूर्ण दिखाई देता है। इस चूर्ण में रोगजनक कवक के कोनिडियम होते हैं, जो वायु द्वारा उड़कर दूसरी पत्तियों या पौधों पर पहुँच जाते हैं एवं उस पर रोग उत्पन्न करते हैं। इस रोग के कारण दाने या तो भरते ही नहीं या बहुत सिकुड़े एवं हल्के हो जाते हैं जिससे गेहूँ की उपज में भारी कमी आ जाती है।

jksx tud% यह रोग *आल्टरनेरिया ट्रिटिसिना* नामक कवक से होता है ।

iczU/ku% कटाई के बाद फसल अवशेषों को जला दें। नाइट्रोजन की पर्याप्त मात्रा देनी चाहिए, जिससे पौधों की बढ़वार समुचित हो। गेहूँ की रोगरोधी किस्में बोएं। एक फसल–एक किस्म खेती करने का तरीका बहुत दोषपूर्ण है इससे उत्पादन में जितनी जल्दी वृद्धि होती है, उतनी ही जल्दी गिरावट भी आती है। अर्थात् किस्मों एवं फसलों की विविधता होना अति आवश्यक है। कृषि उत्पादन में टिकाऊ उपज वृद्धि लाने का यही एकमात्र ठोस तरीका है। वाइटावैक्स या कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्रा. प्रति कि. ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए। खड़ी फसल में मैन्कोजेब के 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव समयानुसार करना चाहिए।

8- lgq ;k xqxyk jksx

y{k.k% यह रोग उत्तर प्रदेश, पंजाब एवं बिहार के पश्चिमी भाग में पाया जाता है। यह प्रायः *रेथिबैक्टर ट्रिटिसाई* नामक जीवाणु द्वारा उत्पन्न गेहूं की पीली बाली विगलन रोग के साथ–साथ पाया जाता है।

यह रोग जड़ को छोड़कर पौधे के सभी भागों को प्रभावित करता है। इस रोग से बीमार पौधों की पत्तियाँ व बालियाँ मुड़ तथा सिकुड़ जाती है, प्रभावित या संक्रमित पौधे बौने रह जाते हैं तथा उनमें पौधों की अपेक्षा अधिक शाखायें निकलती हैं। रोगग्रस्त बालियाँ छोटी एवं फैली हुई होती हैं और इनमें अनाज की जगह भूरे या काले रंग की गोल गाँठे बन जाती हैं जिनमें सूत्रकृमि रहते हैं।

jkx tud% यह रोग *ऐंग्विना ट्रिटिसाइ* सूत्रकृमि एवं *रेथिबैक्टर ट्रिटिसाई* नामक जीवाणु से होता है।

izca/ku% ईयर कॉकल गाँठे रहित बीज के प्रयोग से इस रोग की रोकथाम आसानी से हो जाती है। प्रमाणित बीज का प्रयोग करें। यदि बीज में गाँठे उपस्थित हों तो उन्हें छलनी से अलग किया जा सकता है। ईयर कॉकल गाँठ मिश्रित बीज को कुछ समय के लिए 2 प्रतिशत नमक के घोल में डुबायें (यह घोल 200 ग्रा. नमक को 10 लिटर पानी में घोलने से बनता है) ताकि सूत्रकृमि ग्रसित काली गाँठे हल्की होने के कारण घोल के ऊपर तैरने लगें। ऐसी गाँठों को आसानी से निकाल कर नष्ट कर दें। नमक के घोल में डुबाने के बाद बीज को साफ पानी से 2–3 बार घोलकर सुखा लेने के पश्चात ही बोने के काम में लाना चाहिए। खेत में पाई जाने वाली रोगी बालियों को तोड़कर जला दें। उन खेतों में, जहाँ सेहूँ रोग एक बार हो गया है, 2–3 वर्ष तक गेहूँ न उगाना ठीक रहता है। जौ, जई तथा धान्येतर फसलों पर यह रोग आक्रमण नहीं करता है, इसलिए उन्हें ऐसे खेतों में उगाया जा सकता है। नेमाफास (दानेदार) द्वारा 10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर के हिसाब से जमीन का उपचार प्रभावशाली पाया गया है। अगेती बोई गई फसल में यह रोग कम लगता है।

[k- /kku d! jkx

1- vkPNn >qylk

Yk{k.k% इस रोग का संक्रमण नर्सरी से ही दिखाई देना आरम्भ कर देता है, जिससे पौधे नीचे से सड़ने लगते हैं। मुख्य खेत मे यह लक्षण कल्ले बनने की अंतिम अवस्था मे प्रकट होते हैं। पत्राच्छद पर जल सतह के उपर से धब्बे बनने शुरु होते हैं। इन धब्बों की आकृति अनियमित (वृताकार से दीर्घ वृताकार एंव आयताकार) तथा किनारा गहरा भूरा व बीच का भाग हल्के रंग का होता है। पत्तियो पर घेरेदार धब्बे बनते हैं। बीमारी के फैलाव के लिये सापेक्ष आर्द्रता, वर्षा तथा तापमान मुख्य भूमिका निभाते हैं।

आच्छद झुलसा रोग के लक्षण

jkx tud% यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* नामक कवक से होता है।

izca/ku% धान के बीज को *स्यूडोमोनास फ्लारेसेन्स* की 10 ग्राम अथवा *ट्राइकोडर्मा* 4 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बुआई करे। फसल अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए। फसल को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। साथ ही साथ मेड़ो की सफाई अवश्य करें। संतुलित उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन उर्वरकों को दो या तीन बार में देना चाहिए। धान की रोगरोधी प्रजातियों का चयन करें। शुद्ध एवं असंक्रमित बीजों का ही प्रयोग करें। आवश्यकतानुसार खेतों से जल निकासी का प्रबंध करें। खेत में रोग के लक्षण दिखाई देने पर नाइट्रोजन उर्वरक का

प्रयोग रोक दें। रोग के लक्षण खड़ी फसल मे दिखाई देने पर निम्न में से किसी एक रसायन का प्रयोग करें। इनका 10 से 15 दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए। 2.5 मि.लि./लि. पानी की दर से वैलिडामाइसिन (3 प्रतिशत लि.) या 2 ग्रा./लि. पानी की दर से हैक्साकोनाज़ोल (5 प्रतिशत ईसी) का छिड़काव करना चाहिए।

2- >kdk jkx ¼CykLV½

Yk{k.k% इस रोग के लक्षण पौधे के सभी वायवीय भागों पर दिखाई देतें हैं, प्रारम्भिक लक्षण नर्सरी में पौध की पत्तियों पर नाव जैसे अथवा आंख जैसे धब्बे के रूप में प्रकट होतें हैं। धब्बों के किनारे भूरे लाल रंग के तथा मध्य वाला भाग श्वेत धूसर अथवा राख जैसे रंग का होता है। पौधे की रोपाई के पश्चात लक्षण खेत में पौधों पर कई स्थानों पर दिखाई देते हैं और कल्ले फूटने के साथ सम्पूर्ण फसल पर फैल जाते हैं। बाद में धब्बे आपस में मिलकर पौधे के समस्त हरे भागों को ढ़क लेते हैं जिससे कि फसल जली हुई प्रतीत होती है। रोग के लक्षण स्तम्भ संधि स्तम्भ नोड और गर्दन पर भी दिखाई देते हैं। बाली के बाहर निकलने पर कुछ पुष्पगुच्छ ग्रीवा में संक्रमण होता है और ग्रीवा का रोगी भाग सिकुड़कर काला हो जाता है तथा इस भाग को धूसर कवक जाल ढ़क लेता है यह अवस्था ग्रीवा संक्रमण अथवा ग्रीवा विगलन के नाम से जाना जाता है।

झोंका रोग के लक्षण

jkx tud% यह एक फंफूद जनित रोग है जिसका कारक *मैग्नापोर्थे ओरायजी* है।

ic/ku% बीज का चयन रोग रहित फसल से करना चाहिए। फसल की कटाई के बाद खेत में रोगी पौध अवशेषों को एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए। उपचारित बीज ही बोना चाहिए इसके लिए थीरम 75% की 2.5 ग्रा. अथवा कार्बेन्डाजिम 50% डब्ल्यूपी की 2.0 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करना चाहिए। इस बीमाारी के नियंत्रण के लिए निम्न में से किसी एक रसायन को प्रति है. 500–550 लिटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। 1 ग्रा./लि. पानी की दर से कार्बेन्डाजिम (50% घुलनशील पाउडर) या ट्राइसायक्लेजोल फफूंदनाशी का छिड़काव या टेबुकोनाज़ोल 50 प्रतिशत + ट्राइफ्लोक्सिाट्रोबिन 25 प्रतिशत (75 डब्ल्यूपी) का 0.8 ग्रा./लि. पानी की दर से छिड़काव करें।

3- cdku jkx

y{k.k% बकाने रोग के प्ररूपी लक्षणों में प्राथमिक पत्तियों का दुर्बल हरिमाहीन तथा असमान्य रूप से लम्बा होना है। हालाँकि इस रोग से संक्रमित सभी पौधे इस प्रकार के लक्षण नही दर्शाते हैं क्योंकि संक्रमित कुछ पौधों में क्राउन विगलन भी देखा गया है जिसके परिणामस्वरूप धान के पौधे छोटे (बौने) रह जाते हैं। फसल के परिपक्वता के समीप होने के समय संक्रमित पौधे, फसल के सामान्य स्तर से काफी ऊपर निकले हुए हल्के हरे रंग के ध्वज–पत्र युक्त लम्बी दौजियाँ (टिलर्स) दर्शाते हैं। संक्रमित पौधों में दौजियों की संख्या प्रायः कम होती है और कुछ सप्ताह के भीतर ही नीचे से ऊपर की ओर एक के बाद दूसरी, सभी पत्तियाँ सूख जाती हैं। कभी–कभी संक्रमित पौधे परिपक्व होने तक जीवित

रहते हैं किन्तु उनकी बालियाँ खाली रह जाती हैं। संक्रमित पौधों के निचले भागों पर, सफेद या गुलाबी कवक जाल वृद्धि भी देखी जा सकती है।

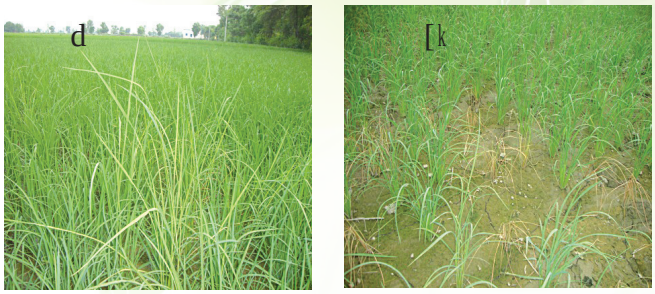

बकाने रोग के लक्षणः क- असमान्य रूप से लम्बा पौधा, ख- सूखे पौध

प्रायः यह देखा गया है कि कम तापमान में बकाने रोग प्रभावित पौधे बहुत कम होते हैं अथवा बिल्कुल दिखाई नहीं पड़ते। कवक की वृद्धि हेतु इष्टतम तापमान 27–30°से. है और बकाने रोग के लिए 35° से. है। इस प्रकार से, 30 से 35° से. तक की सीमा में तापमान होना इस रोग के लिए अनुकूल है। मृदा में नाइट्रोजन का अनुप्रयोग करने से रोग का विकास अधिक तेजी से होता है। नम मृदा अवस्था पौधों की सामान्य से अधिक लम्बाई वाले लक्षणों के लिए अनुकूल है, जबकि शुष्क मृदा अवस्था में पौधे बौने रह जाते हैं।

jkx tud% बकाने रोग के लिए *फ्यूज़ेरियम फ्यूज़ीकुरोई* कवक उत्तरदायी है।

ic/ku% इस रोग के प्रबंधन के लिए रोगरोधी किस्मों का चयन करना चाहिए । रोग में कमी लाने के लिए साफ–सुथरे रोगमुक्त बीजों का प्रयोग करना चाहिए, जिन्हें विश्वसनीय बीज–उत्पादकों या अन्य विश्वसनीय स्रोतों से खरीदा जाना चाहिए। बोए जाने वाले बीजों से भार में हलके एवं संक्रमित बीजों को अलग करने के लिए नमकीन पानी का प्रयोग किया जा सकता है, ताकि बीजजन्य निवेश द्रव्य को कम किया जा सके। गर्म जल से बीजोपचार प्रभावी है। इसके लिए पहले बीजों को 3 घंटे तक सामान्य जल में भिगो दें और तत्पश्चात बीजों में विद्यमान कवक को नष्ट करने के लिए उन्हें 50–57° सें तापमान पर गर्म जल से 15 मिनट तक भिगोकर उपचारित करें। कवकनाशियों के साथ बीजोपचार की संस्तुति की जाती है। इसके लिए 0.2 प्रतिशत कार्बेन्डेज़ीम के घोल में बीजो को 12 घंटे तक भिगो कर रखते हैं। इस प्रकार से बीजोपचार के बाद, बुआई के पहले इन बीजों को 24 घंटे तक सामान्य जल में भिगो कर रखें। रोपाई से पहले पौध को 0.1 प्रतिशत कार्बेंडेज़ीम के घोल में 12 घंटे तक उपचार भी प्रभावी पाया गया है। खेत को साफ–सुथरा रखें और कटाई के पश्चात धान के अवशेषों एवं खरपतवार को खेत में न रहने दें। बकाने रोग से ग्रस्त पौधों को देखते ही तुरंत खेत से निकाल कर नष्ट कर दें ताकि अन्य स्वस्थ पौधे संक्रमित न हो सकें।

4- feF;k dM+vk ¼vkHkkl h dM½

Yk{k.k: इस रोग के लक्षण पौधों की बालियों में केवल दानों पर ही दिखाई देते हैं। रोग जनक के फलनकायों के विकसित हो जाने के कारण बाली में कहीं–कहीं बिखरे हुए दाने बड़े मखमल के समान

चिकने हरे समूह में बदल जाते हैं। यह हरे समूह वास्तव में कवक के स्क्लेरोशिपमी पिंड होते हैं जो अनियमित रूप में गोल अण्डाकार होते हैं, कभी–कभी इसका व्यास सामान्य से दुगुने से भी अधिक हो जाता है। इनका रंग बाहरी ओर नारंगी पीला एवं मध्य में लगभग सफेद होता है बाली में कुछ ही दानें प्रभावित होते है, जो बाद में गहरे हरे रंग के हो जाते हैं।

मिथ्या कंडुआ रोग के लक्षण

jkx tud% यह रोग *आस्टिलेजीनोइडिया वायरेंस* नामक कवक से होता है।

ic/ku% इस रोग के नियंत्रण के लिए प्रोपीकोनाजोल 1 मिली/लिटर पानी अथवा टेबुकोनाजोल 50 प्रतिशत + ट्राइफ्लोक्सिस्ट्रोबिन 25 प्रतिशत (डब्ल्यूपी) का 0.5 ग्राम/लिटर पानी की दर से 50% बालियां निकलने की अवस्था पर छिड़काव करना चाहिए।

5- thok.k i.k vxekjh

Yk{k.k% जीवाणु झुलसा के लक्षण धान के पौधे में दो अवस्थाओं में दिखाई देते हैं। पर्ण झुलसा एवं क्रेसेक अवस्था जिसमें पर्ण झुलसा अधिक व्यापक है। इस अवस्था में ग्रसित पौधों की पत्तियां सिकुड़कर मुड़ जाती हैं जिसके फलस्वरूप पूरी पत्ती मुरझा जाती हैं। इस रोग में पत्ती के एक अथवा दोनों किनारों पर एवं मध्य शिरा के साथ जलशक्ति पारभासक धब्बे बनने आरंभ होतें हैं। धीरे–धीरे ये धब्बे बढ़कर धारियों का रूप ले लेते हैं, जो पीले से सफेद रंग के दिखाई देतें हैं। इन धारियों का किनारा लहरदार होता है।

जीवाणु पर्ण अंगमारी रोग के लक्षण

jkx tud% यह रोग *जैन्थोमोनास ओराइजी* पैथोवार *ओराइजी* नामक जीवाणु के द्वारा होता है।

ic/ku% धान के जीवाणु जनित रोगों की रोकथाम के लिए बीजों को 12 घंटे तक 0.25 प्रतिशत एग्रीमाइसीन के जलीय घोल में एवं 0.05 प्रतिशत सेरेसान के घोल से उपचारित करके फिर बीजों को 30 मिनट के लिए 52–54^0 सें. तापमान वाले जल में रखने से सभी जीवाणु मर जाते हैं। बीजों को 8 घंटे तक स्ट्रप्टोसायक्लीन (0.3 ग्रा.) के 2.5 लिटर जल से उपचारित करना चाहिये। बीजों को जैविक पदार्थों जैसे –*स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स* 10 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बुआई करनी चाहिए। रोपाई से पूर्व एक कि.ग्रा. *स्यूडोमोनस फ्लोरेसेन्स* को आवश्यकतानुसार पानी के घोल मे एक एकड़ के लिए पौधे की जड़ को एक घंटे तक डुबोकर (उपचारित) लगाएं अथवा एक कि.ग्रा. *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स* को 50 कि.ग्रा. रेत या गोबर की खाद में मिलाकर एक एकड़ खेत मे रोपाई से पूर्व फैला दे। पौधों को रोपाई के पूर्व 0.5 प्रतिशत ब्लाइटाक्स 50 के घोल से उपचारित करके रोपाई करना चाहिए। खेत में रोग दिखाई देने पर *स्ट्रेप्टोसायक्लीन* 15 ग्राम + 500 ग्राम कापर आक्सीक्लोराइड को 500 लिटर पानी मे घोलकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए । आवश्यकतानुसार दूसरा छिड़काव 10–15 दिन बाद करें।

6- [kjk jkx

Yk{k.k% यह रोग जिंक की कमी के कारण होता है। इस रोग में पत्तियां पीली पड़ जाती हैं जिस पर बाद में कत्थई रंग के धब्बे बन जाते हैं।

ic/ku% इसके नियंत्रण के लिए जिंक सल्फेट 20–25 किग्रा. प्रति है. की दर से बुवाई/रोपाई से पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला कर देने से खैरा रोग का प्रकोप नही होता है। खड़ी फसल में लक्षण दिखाई पड़ने पर 5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट को 20 कि.ग्रा. यूरिया अथवा 2.50 कि.ग्रा. बुझे हुए चूने को प्रति है. 1000 लिटर पानी में घोलकर छिड़काव करके खैरा बीमारी को नियंत्रित करते हैं।

x- eDdk d s jkx

1- efMl i.kZ vxekjh

y{k.k% इस रोग में पत्तिया की शिराओं के मध्य 2–6 x 3–22 मिमी. लम्बे, अण्डाकार, भूरे या कत्थई रंग के धब्बे उत्पन्न हो जाते हैं। प्रायः इनके किनारे भूरा रंग लिए होते हैं। रोग की उग्रावस्था में धब्बे आपस में मिलकर पत्तियों को झुलसा देते हैं।

मेडिस पर्ण अंगमारी के लक्षण

jkx tud% यह रोग *बाईपोलेरिस मेडिस* नामक कवक से होता है।

ic/ku: रोगग्रस्त पौधों के अवशेष को जलाकर नष्ट कर देने से बीमारी के प्रारम्भिक निवेश–द्रव्य की मात्रा कम हो जाती है। प्रतिरोधी किस्में : एचएम 10, पीएयू 352, मालवीय संकर मक्का 2,पीईएमएच 1, एचक्यूपीएम 7, एचक्यूपीएम 5, एचक्यूपीएम 1, शक्तिमान 3, शक्तिमान 4, पीईएमएच 5, एचक्यूपीएम 4 एवं एचएससी 1 का प्रयोग करें। रोग की प्रारम्भिक अवस्था में मैंकोजेब (डाइथेन एम 45) या जीनेब (डाइथेन जेड 78) का 2–2.5 ग्रा./लि. पानी का छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर 2–3 बार करना चाहिए।

2- /kkjhnkj i.kZ ,o i.kkPNn vxekjh

y{k.k% बीमारी के लक्षण सर्वप्रथम नीचे के पत्तों एवं पर्णाच्छद के उपर अनियमित आकार के जलसिक्त धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जो शीघ्र ही भूसे के रंग के होकर उत्तिक्षयी हो जाते हैं तथा इनके

ऊपर संकरी बैंगनी–भूरी पट्टी बन जाती है। विकसित भुट्टा पूरी तरह नष्ट हो जाता है और इसके उपर छोटे गोलाकार, काले रंग के स्कलेरोशिया बन जाते हैं।

धारीदार पर्ण एवं पर्णाच्छद अंगमारी रोग के लक्षण

jkxtud% यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनाइ* उपजाति *ससाकी* नामक कवक से होता है ।

ic/ku: बीमारी के प्रारम्भ में भूमि से ऊपर की 2–3 पत्तियों को पर्णच्छद सहित काटकर अलग कर देने से बीमारी से क्षति कम होती है। प्रतिरोध ी किस्में प्रताप कंचन 2, प्रताप मक्का 3, प्रताप मक्का 5, शक्तिमान 1 एवं शक्तिमान का प्रयोग करें। जैविक नियंत्रण : *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस* द्वारा बीजोपचार, पीट आधारित फार्मूलेशन 16 ग्रा./किग्रा. या मृदा उपचार 3 किग्रा/है. या दो बार 7 ग्रा./लि. पानी की दर से छिड़काव उपयोगी है।

3- ruk foxyu

y{k.k% तना विगलन पुष्पन से पहले शुरू होता है। विगलन सामान्यतया मृदा की सतह के ऊपर वाली एक पर्व (पोरी) का घेर लेता है, रोगग्रस्त क्षेत्र भूरा, जलसिक्त तथा मुलायम हो जाता है और उसी पोरी से ऐंठ कर गिर जाता है।

पीथियम तना विगलन रोग के लक्षण

jkxtud% यह रोग *पीथियम एफेनीडर्मेटम* नामक कवक से होता है।

ic/ku% प्रतिरोधी किस्में पीईएमएच 1 x 1280 एवं एचक्यूपीएम 4 का प्रयोग करें। उत्तरी भारत में बीज की बुवाई 10 से 20 जुलाई के बीच कर देनी चाहिए। जल–भराव से बचने के लिए जल–निकासी का उचित प्रबंध होना चाहिए। बुवाई के 5–7 सप्ताह बाद नीचे वाली पोरी के पास मृदा को कैप्टान 1.5 ग्रा./लि. पानी की दर से सराबोर कर देना चाहिए। जैविक नियंत्रणः *ट्राइकोडर्मा हार्जियानम* और *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस* क्रमशः 4.5 ग्रा./किग्रा. एवं 4.5 ग्रा./मी. की दर से बीज एवं मृदा को उपचारित करने पर बीमारी से बचाव हो सकता है।

4- pkjdky foxyu

y{k.k: यह रोग तने को प्रभावित करता है और पुष्पन अविध के 1–2 सप्ताह के उपरांत मृदा में नमी की कमी के कारण दिखाई देता हैं प्रभावित पोरी बुरी तरह से विघटित हो जाती है और इनके छाल पर काले बिन्दु जैसे स्क्लेरोशिया दिखाई देते हैं जो बीमारी की पहचान का विशेष लक्षण है। प्रभावित पौधा अपरिपक्व अवस्था में सूख जाता है।

चारकोल विगलन रोग के लक्षण

jkxtud% यह रोग *मैक्रोफोमिना फेसिओलिना* नामक कवक से होता है।

ic/ku: प्रतिरोधी किस्में जेएचएमएच 1701, जेएच 6805, एवं बायो 9639

का बुवाई के लिए प्रयोग करें। खेत की गहरी जुताई, सफाई एवं पहले वाली फसल के अवशेषों को निकाल देना चाहिए। पुष्पन के समय पानी की कमी से बचाना चाहिए। जैविक नियंत्रणः *ट्राइकोडर्मा फार्मूलेशन* को गोबर की खाद के साथ 10 ग्रा./किग्रा., 1 किग्रा/100 किग्रा प्रति एकड़ की दर से मिलाकर 10 दिन के लिए गीली बोरी से ढ़क कर छोड़ देना चाहिए और मिश्रण को बीज की बुवाई से पहले कूड़ में डालना चाहिए।

?k- ckt jk d jkx

1- enjkfey vkfl rk ;k gjh ckyh jkx

y{k.k% पत्तियाँ अंशतः या पूर्णतः पीली या सफेद हो जाती हैं। साधारणतः पत्तियों पर पीली धारियाँ बन जाती हैं, जो निचले भाग से शुरू होकर या तो पत्तियों के बीच में समाप्त हो जाती हैं या सिरे तक पहुँच जाती हैं। ऐसी पत्तियाँ जल्दी ही भूरी हो जाती हैं। नम वातावरण में रोग ग्रस्त पत्तियों की निचली सतह पर आसिता की सफेद वृद्धि देखी जा सकती है। बालियाँ अंशतः या पूर्णतः हरे रंग की पत्तियों की तरह के गुच्छों के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। इसी कारण इस रोग को हरी बाली रोग कहा जाता है।

jkx tud% यह रोग *स्क्लेरोस्पोरा ग्रैमिनीकोला* नामक कवक से होता है।

ic/ku% साफ और प्रमाणित बीजों को बोएं। रोगरोधी हाइब्रिड जैसे एचएचबी 146, जीएचबी 558, पी.बी. 112, नन्दी 35 और उन्नत रोग रोधी प्रजातियाँ पूसा कम्पोसिट 383, जेबीवी 2, एचसी 4 और जीआईसी के.वी. 96752 उगाएं। बीज को मेटालेक्सिल (एप्रान 35 एसडी) से 2 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें तत्पश्चात रिडोमिल 25 डब्लूपी का 1 ग्रा. प्रति लिटर पानी के हिसाब से 20 दिन बाद छिड़काव करें।

2- vxV

y{k.k% यह रोग सर्वप्रथम छोटी–छोटी गुलाबी या शहद जैसे द्रव पदार्थ की बूँदों के रूप में बालियों पर दिखाई पड़ता है, जो बाद में भूरे रंग के चिपचिपे रूप में परिवर्तित हो जाता है। रोग की अंतिम अवस्था में गहरे भूरे रंग के स्क्लेरोशियम तुषों के बीच से निकलते हैं। बालियों में बीज कम बनते हैं या बिल्कुल नही बनते।

jkx tud% यह रोग *क्लैविसेप्स फ्यूजीफार्मिस* नामक कवक से होता है।

ic/ku% स्वस्थ और स्क्लेरोशियम रहित प्रमाणित बीज बोना चाहिए। यदि बीज रोगजनक (स्क्लेरोशियम) रहित नहीं है तो बीज को 2 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोकर ऊपर तैरते हुए स्क्लेरोशियमों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। नीचे बैठे बीजों को धोकर सुखा लेना चाहिए। देर से बोई फसल में अर्गट रोग अधिक लगता है। अतः बाजरे की बुवाई जुलाई प्रथम सप्ताह तक अवश्य कर देनी चाहिए। कॉपर आक्सीक्लोराइड तथा जिनेब के मिश्रण (1:2 के अनुपात में) के घोल के छिड़काव से रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। प्रथम छिड़काव फूल आने के तुरंत पहले तथा अन्य 2 छिड़काव 10 दिन के अन्तर पर कर सकते हैं।

3- jr|vk

y{k.k% कवक के यूरीडियम पत्तियों के दोनों सतहों पर पाए जाते हैं, पर ऊपरी सतह पर अधिक होते हैं। कभी–कभी इनके चारों तरफ ऊतकक्षयी धब्बे भी पाए जाते हैं। संक्रमित पत्तियाँ समय से पूर्व ही सूख जाती हैं। कवक के टीलियम देर से पत्तियों, पर्णच्छदों तथा तनों पर बनते है। ये काले रंग के होते हैं तथा वाह्य त्वचा से काफी समय तक ढके रहते हैं।

jkx tud% यह रोग *पक्सीनिया पेनिसेटी* नामक कवक से होता है।

i|c/ku% फसल पर गंधक के चूर्ण का बुरकाव 30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से करें।

4- dM

y{k.k% रोग के कारण दाने आरम्भ में गहरे हरे या भूरे होते हैं, जो परिपक्व अवस्था में गहरे काले रंग के हो जाते हैं। आरंभिक हरा रंग परपोषी के तंतुओं की झिल्ली के कारण होता है, जो बीजाणुधानी पुँज व तने को ढके रहती है। इसके अंदर कवक के काले रंग के बीजाणु होते हैं।

jkx tud% यह रोग *टोलीपोस्पोरियम पेनिसिलेरी* नामक कवक से होता है।

i|c/ku% स्वस्थ, प्रमाणित एवं अच्छे बीज बोएं। ग्रीष्म ऋतु में कम से कम एक गहरी जुताई करने से कवक के बीजाणु नीचे चले जाते हैं और रोग कम लगता है। एक ही खेत में बाजरे की खेती हर वर्ष नहीं करनी चाहिए। रोगरोधी किस्में उगाएं।

5- i.k i/o l jkx

y{k.k% पौधों की निचली पत्तियों पर हल्के या गहरे रंग के लगभग 1 सें.मी. व्यास तक के गोलाकार धब्बे बनते हैं। कभी–कभी ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े धब्बों के रूप में दिखाई पड़ते हैं। धब्बों में 2–7 तक संकेन्द्री वलय बन जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *पाइरीकुलेरिया पेनिसेटी* नामक कवक से होता है।

i|c/ku% फसल पर 0.1 प्रतिशत कार्बेन्डाजिम या 0.2 प्रतिशत जिनेब का छिड़काव करें।

p- Tokj d jkx

';keo.k

y{k.k% पौधों की पत्तियों पर फसल की किस्म के अनुसार छोटे–छोटे लाल, बैगनी अथवा भूरे हरे रंग के धब्बे बनते हैं। पुराने धब्बों में काले रंग के बिन्दु दिखाई पड़ते हैं, जो कवक के एसरवुलस के कारण होते हैं। संक्रमित तनों पर रंगीन धारियाँ दिखाई पड़ती हैं। अनुकूल परिस्थितियों मे यह रोग बहुत तेजी से फैलता है।

jkx tud% यह रोग *कालेटोट्राइकम ग्रैमिनीकोला* नामक कवक से होता है।

i|c/ku% खेत में तथा आसपास के खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए। संक्रमित पौधों के मलबे को जला कर नष्ट कर देना चाहिए। एक ही खेत में लगातार ज्वार की खेती नहीं करनी चाहिए। नत्रजन, फास्फोरस तथा जिंक का उचित मात्रा में प्रयोग इन रोगों को नियंत्रित करता है तथा उपज वृद्धि में

सहायक होता है। जैव अभिकर्ता जैसे *ट्राइकोडर्मा विरिडे, ट्राइकोडर्मा हरजियानम* एवं *स्यूडोमोनास फ्लोरीसेंस* का 10 ग्रा./कि.ग्रा. बीज के हिसाब से बीजोपचार न केवल रोगों को नियंत्रित करता है बल्कि पौध वृद्धि में भी सहायक होता है। रासायनिक विधि द्वारा बीज को थीरम 2.5 ग्रा. अथवा कैप्टान 2 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से शोधित करके बोएं। खड़ी फसल में मैन्कोजेब के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करके इन रोगों को नियंत्रित किया जा सकता है। रोग सहिष्णु किस्में – अनाज के ज्वार के लिए सीएसवी 10, सीएसवी 15, एसपीवी 462, सीएसवी 4 तथा चारे के ज्वार के लिए यूटीएफएस 43, पंत चरी 5 और पंत चरी 6 को बोना चाहिए।

2- eMyh; i.k fpRrh

y{k.k% पत्तियों पर अर्धगोलाकार मंडलीय धब्बे बनते हैं, जिसमें एकान्तर से गहरे तथा हल्के रंग के गोले दिखाई पड़ते हैं। आरम्भ में धब्बे छोटे तथा रंग में लाल या भूरे होते हैं। बाद में धब्बे बड़े होकर पत्ती के काफी भाग को ढक लेते हैं। कभी–कभी बहुत से धब्बे एक में मिल जाते हैं। बड़े धब्बों में मंडलीकरण अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

jksx tud% यह रोग *ग्लिओसर्कोस्पोरा सोर्घाई* नामक कवक से होता है।

ic/ku% श्यामव्रण रोग के समान है।

3- i.k vxekjh

y{k.k% पत्तियों पर रोग पैदा करने के अतिरिक्त इस रोग का कारक बीजों में विगलन तथा पौधों में भी अंगमारी पैदा करता है। संक्रमित पौधे मर जाते हैं या बहुत छोटे एवं कमजोर रह जाते हैं। पत्तियों पर लाली लिए हुए भूरे रंग अथवा पीलापन लिए हुए चर्म वर्ण के लम्बे, अंडाकार धब्बे दिखाई पड़ते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में ये धब्बे बढ़कर एक में मिलकर कभी–कभी पूरी पत्ती को मृत बना देते हैं। आर्द्र मौसम में यह रोग कम अवस्था के पौधों में लगकर काफी नुकसान पहुँचा सकता है।

jksx tud% यह रोग *एक्सेरोहाईलम टर्सिकम* नामक कवक से होता है।

icU/k% श्यामव्रण रोग के समान है।

4- nkuk QQn

y{k.k% ज्वार में बालियों के निकलने के समय तथा दाना पड़ते समय बरसात हो जाने से दानों पर कई प्रकार के फफूँद पाए जाते हैं जिससे दाने सफेद, गुलाबी या काले दिखाई पड़ते हैं। बीज अंकुरण को कम करने तथा रोग फैलाने के साथ–साथ ये कवक विषैले पदार्थ पैदा करके पशुओं तथा मनुष्यों के स्वास्थ्य को हानि पहुँचाते हैं।

jksx tud% यह रोग *कर्वुलेरिया, हेल्मिन्थोस्पोरियमए फोमा, ऐस्परजिलस, पेनिसिलियम* तथा *फ्यूजेरियम* नामक कवकों से होता है।

ic/ku% दाना फफूँद की रोकथाम कैप्टान, थीरम या कार्बेन्डाजिम के 0.2 प्रतिशत घोल के छिड़काव से की जा सकती है। दाने पड़ते समय बरसात होने पर इसके तुरंत बाद छिड़काव करना चाहिए। दाने पक जाने के बाद उन्हें अधिक समय तक खेत में नहीं रखना चाहए।

5- e'n|jkfey vkflrk

y{k.k% इस रोग में पौधों पर सर्व दैहिक संक्रमण होता है तथा रोग पौध अवस्था में ही लग जाता है। प्रायः रोगी पौधों की पहली पत्ती पर पीले रंग की धारियाँ नजर आती हैं, जो बाद में अन्य पत्तियों पर भी फैल जाती हैं। पत्तियों की निचली सतह पर रोग कारक फफूँद की वृद्धि दिखाई पड़ती है। ये धारियाँ बाद में भूरी–लाल पड़ जाती हैं। पत्तियाँ सिरों से जुड़ी रहती हैं लेकिन पर्ण का भाग फटकर लटक जाता है जो इस रोग का विशेष लक्षण है। ऐसी पत्तियों में रोगकारी फफूँद के अनेक अंडबीजाणु बनते हैं जो फसल के अवषेश के साथ मृदा में जीवित रहते हैं तथा अगली फसल में पुनः रोग उत्पन्न करते हैं।

jkx tud% यह रोग पेरोनोस्क्लेरोस्पोरा सोर्घाई नामक कवक से होता है।

icU/ku% बीज को मेटालेक्सिल (एप्रान 35 एस डी) से 6 ग्रा./कि. ग्रा. बीज के हिसाब से उपचारित करके बुआई करें। फसल में वायुजन्य संक्रमण को रोकने के लिए मैन्कोजेब या रिडोमिल का 2 ग्रा./ली0 की दर से छिड़काव करें।

6- vxV ;k 'kdjh; jkx

y{k.k% इस रोग में दानों के बाहरी भाग पर गाढ़ा, रंगहीन अथवा हल्का गुलाबी, चिपचिपा स्त्राव बूंदों के रूप में जमा होता है। ये बूँदे हवा से सूखकर कुछ कठोर हो जाती हैं। कभी–कभी इन पर मृतजीवी कवक, जैसे सेरेबेला पाये जाते हैं, जिससे इनका रंग काला हो जाता है। यह स्त्राव मीठा होने के कारण मक्खियों तथा चीटियों को आकृष्ट करता है। बाद में इनमें सफेद स्लेटी रंग की लम्बी, शंकुनुमा संरचनाएं बनती हैं जिन्हें स्क्लेरोशिया कहते हैं। ये 0.5 से.मी. से 1.5 सें.मी. तक लम्बी हो सकती हैं।

jkx tud% यह रोग *स्फेसेलिया सोर्घाई* नामक कवक से होता है।

icU/ku% बुआई ऐसे समय पर करनी चाहिए, जब बालियों के आने के समय मौसम आर्द्र न रहने की सम्भावना हो। स्वस्थ और स्क्लेरोशियम रहित प्रमाणित बीज ही बोना चाहिए। रोग के लक्षण दिखते ही कार्बेन्डाजिम (0.2 प्रतिशत) घोल का छिड़काव करना चाहिए।

7- dM jkx

i. vko`r dM ;k nkus dk dM

y{k.k% रोग के लक्षण बालियों के निकलने के समय दिखाई पड़ते हैं। दाने के स्थान पर कवक की छोटी 0.5 से 1.0 से.मी. तक की शंकुनुमा गाँठे बन जाती हैं जिस पर एक सुदृढ़ झिल्ली चढ़ी रहती है जिससे कवक के बीजाणु इधर–उधर शीघ्र विखरते नही हैं। इनमें काले रंग के चूर्ण के रूप में कवक के क्लैमिडो बीजाणु भरे रहते हैं।

jkx tud% यह रोग *स्पोरीसोरियम सोर्घाई* नामक कवक से होता है।

ii. vuko`r dM

y{k.k: इसमें भी दाने के स्थान पर कवक की छोटी, शंकुनुमा गाँठें बनती हैं। इन गाँठों पर हल्की सफेद रंग की पर्त होती है जो शीघ्र ही टूट जाती है एवं काला महीन चूर्ण हवा में फैल जाता है। अंत में हर दाने की जगह काले वृन्त ही दिखाई पड़ते हैं।

jkx tud% यह रोग *स्पोरीसोरियम क्रुएन्टा* नामक कवक से होता है।

iii. yEck dM

y{k.k% यह रोग बालियों के कुछ ही बीजों पर होता है। इसमें दानों की जगह 4 से.मी. तक लम्बी बेलनाकार सफेद या मटमैले सफेद रंग की संरचनाए बनती हैं। बाहरी झिल्ली के फट जाने पर काला महीन चूर्ण प्रकट हो जाता है।

jkx tud% यह रोग *सोरोस्पोरियम एरेनबर्गाई* नामक कवक से होता है।

iv- 'kh"k dM

y{k.k% इस रोग में पूरी बाली ही एक गाँठ के रूप में बदल जाती है। इस गाँठ पर एक मटमैली सफेद झिल्ली नुमा पर्त होती है जो शीघ्र ही फट जाती है व गाँठ में से गहरे काले रंग का बीजाणु चूर्ण झड़कर मृदा में गिरने लगता है और बाल में रेशे सदृश संरचनाएं रह जाती हैं।

jkx tud% यह रोग *स्पोरीसोरियम रेलियाना* नामक कवक से होता है ।

ic/ku% विभिन्न कंड रोगों के बीजाणु हवा द्वारा स्वस्थ बालों पर फैलते हैं। अतः खेत में रोग ग्रस्त बालें दिखाई देते ही उन्हें कागज अथवा कपड़े की थैलियों से ढक कर काट लें तथा जलाकर नष्ट कर दें। बुआई से पहले बीजों को थीरम (4 ग्रा./कि.ग्रा. बीज) अथवा वाइटावैक्स (0.1 ग्रा./कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करें। रोगरोधी किस्मों की ही बुआई करें।

दलहनी फसलों के रोग एवं उनका प्रबंधन

बिरेन्द्र सिंह और एन. श्रीनिवासा
पादप रोगविज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110012

d- puk d; jkx

इस फसल को नुकसान पहुंचाने वाले रोगों में उकठा, शुष्क मूल विगलन, आर्द्र मूल विगलन, झुलसा, धूसर मोल्ड और स्तम्भन (स्टंट) प्रमुख हैं।

1- mdBk

Yk{k.k% उकठा (म्लानि) रोग ग्रस्त चने के पौधों की शीर्ष, ऊपरी टहनियाँ और पत्तियाँ झुक जाती हैं तथा धीरे–धीरे पूरा पौधा मुरझाकर सूख जाता है। पत्तियों का रंग भद्दा हरा हो जाता है तथा ग्रीवा (कॉलर) क्षेत्र असमान रूप से सिकुड़ने लगता है। म्लानि रोग के प्रारंभिक लक्षण, फसल बुआई के 25 दिनों के भीतर और पछेती, पुष्पावस्था के दौरान दिखाई देते हैं। संक्रमित पौधे की जड़ बाहर से पूर्णतः स्वस्थ दिखती हैं, लेकिन जब कॉलर क्षेत्र में अनुप्रस्थ काट या लम्बवत् दो भागों में विभाजित किया जाता है तो पिथ एवं दारू बड़ल (जायलम) कोशिकायें भूरे से काले रंग की दिखाई देती हैं।

उकठा रोग ग्रसित पौधे

संक्रमित जड़ का जायलम (दारू बड़ल) भाग भूरा

आर्द्र मूल विगलन रोग से ग्रसित पौधे व जड़ें

jkx tud% यह रोग *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* उपजाति *साइसेरीस* नामक कवक से होता है।

2- 'k"d e;y foxyu

Yk{k.k% रोग ग्रसित पौधों की पत्तियों और तनों का रंग भूसे के समान पीला पड़ जाता है। मूसला जड़ से लगी द्वितीयक जड़ें विगलित तथा सूखी हुई दिखाई देती हैं। संक्रमित जड़ की छाल फट जाती है और छोटे–छोटे कंठ कवक छाल के अंदर एवं पिथ भाग में देखे जा सकते हैं। असिंचित क्षेत्रों में चने में फूल आने की अवस्था के दौरान यदि दिन का तापमान 30 डिग्री से. से अधिक हो तो यह रोग अधिक उग्र रूप में दिखाई देता है।

झुलसा रोग से संक्रमित पौधे, पत्तियाँ, तना व फलियां

बोट्राइटिस धूसर मोल्ड

चने का स्तम्भन विषाणु (देशी किस्म)

jkx tud% यह रोग *राइजोक्टोनिया बटाटिकोला* नामक कवक से होता है।

3- vkn| e|y foxyu

Yk{k.k% देश के उत्तरी व उत्तर पूर्वी प्रान्तों में धान, मक्का व बाजरा के उपरांत चने की बुआई के 25 से 45 दिनों के अंदर मृदा में अधिक नमी और अध सड़े कार्बनिक पदार्थो की उपस्थिति में यह रोग ज्यादा नुकसान पहुंचाते देखा गया है। संक्रमित पौधे का रंग पीला, जड़ें रंगहीन व नम होती हैं। ग्रीवा के ऊपर तने पर गहरे भूरे से काले रंग के क्षति स्थल बन जाते हैं और मूसला जड़ से लगी सहयोगी जड़ें सड़ जाती हैं।

jkx tud: यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* नामक कवक से होता है।

4- ,Ldkdkb Vk >|ylk

Yk{k.k% देश के उत्तरी, पहाड़ी व तराई वाले क्षेत्रों में संक्रमित बीजों और वायु द्वारा फैलने वाला यह अति घातक फफूँद जनक रोग है। पौधों में फूल व फलियाँ बनने के समय अनुकूल वातावरण में तनों, पत्तियों व शाखाओं पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। पत्तियों तथा फलियों पर ये धब्बे गोलाकार व तनों तथा शाखाओं पर लम्बाकार होते हैं। धब्बे आपस में मिलकर पूरे पौधे को झुलसा देते हैं। संक्रमित फलियों का बीज छोटा और सिकुड़ा हुआ तथा बीज का खोल हल्के भूरे रंग का हो जाता है।

jkx tud% यह रोग *अस्कोकाइटा रेबीआई* नामक कवक से होता है।

5- ckVkbfVl /klj ekYM

Yk{k.k% गंगा के तराई क्षेत्रों और उत्तरी प्रान्तों में कम तापमान और अधिक आर्द्रता की वातावरण में तेजी से फैलने वाला चने का यह एक प्रमुख रोग है। पौधे के तनों, पत्तियों, पुष्पगुच्छ और फलियों पर धूसर रंग के विक्षत बनते हैं। कोमल शाखाओं, पत्तियों और फलियों में धूसर रोग विगलन पैदा करता है तथा संक्रमित तने पर 10–30 मि.लि. लम्बी चित्तियाँ बन जाती हैं जो रोगी स्थान को गोलाई में घेर लेती हैं। खेत में चने का पौधा पत्ती विहीन, डंठल के रूप में दिखाई देता है। संक्रमित फलियों के बीज छोटा और टेड़े–मेढ़े हो जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *बोटराइटिस साइनेरिया* नामक कवक से होता है।

6- LrHku

Yk{k.k% देश के उत्तर पश्चिमी और मध्य प्रान्तों मुख्यतः गुजरात, राजस्थान, हरियाणा और मध्य प्रदेश में स्तंभन (स्टॅन्ट) विषाणु 15–35 प्रतिशत तक पैदावार में क्षति पहुँचाता देखा गया है। स्तंभन विषाणु रोग से संक्रमित पौधे छोटे (बौने), रोगी पौधे का पर्ण समूह पीले, नांरगी या भूरे रंग के देखे जा सकते हैं। पौधे में बौनापन का मुख्य कारण तने के पोरों का छोटा होना है। पर्णक (लीफ लेट) छोटा, मोटा और सख्त हो जाता है। पर्णक के शीर्ष और किनारों में हरिमाहीनता के लक्षण प्रकट होते हैं जो बाद में भूरे रंग में बदल जाता है। विषाणु संक्रमित देशी प्रजातियों के पौधे प्रायः भूरे–लाल रंग की और काबुली किस्म के पौधे हल्के पीले रंग की दिखाई देती हैं। पोषवाहक ऊतक (फ्लोअम) का रंग भूरा हो जाता है, जिसे क्षैतिज या अनुलम्ब चीरा लगाकर देखा जा सकता है। अल्पवयस्क अथवा प्रारम्भिक काल में संक्रमित, पौधों की बढ़वार रुक जाती है और ऐसे पौधे फूल व फलियाँ विहीन असमय ही सूख जाते हैं।

jkx tud% यह रोग ल्यूटियोवीरिडी कुल के दो विषाणु– *बीट वेस्टर्न ऐलोस* वाइरस और *चिकपी स्टॅन्ट डीसिज एसोसिएटेड* वाइरस एवं जिमिनी वीरिडी कुल के *चिकपी क्लोरोटिक ड्वार्फ* वाइरस से होता है।

pu ds jkxk dk lefdr ÁcU/ku

पिछले 4 दशकों में चने की 180 उन्नतशील किस्में विकसित की जा चुकी हैं। किस्म जे.जी. 11 आज आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में सबसे प्रचलित, जबकि डी.सी.पी. 92–3, जी. पी.एफ. 2 और जे.जी. 16 ज्यादा लागत (उर्वरक और सिंचाई) तथा उपजाऊ मृदा में अनुकूल परिणाम देने वाली प्रजातियाँ हैं। अनुसंधान तथा प्रक्षेत्र प्रदर्शन का परिणाम दर्शाता है कि अकेले उन्नत किस्मों को अपनाने से 25–30 प्रतिशत उपज में वृद्धि प्राप्त की जा सकती है।

¼v½ jkx Áfrjk/kh mUur'khy fdLe

- mdBk vkj ey foxyu% पूसा शुभ्रा, पूसा 372, पूसा 547, पूसा 2024, बी.जी. 3022, जे.पी. एफ. 2, जवाहर चना 6, जवाहर चना 11, जवाहर चना 16, हरियाणा चना 1, हरियाणा चना 5, पी.के.वी. काबुली 4, जी.एन.जी. 1581
- >qylk% पी.बी.जी. 5, जी.एन.जी. 1581, जी.पी.एफ. 2, हिमाचल चना 1, हिमाचल चना 2, सी. एस.जे. 515, डी.के.जी. 964
- /kl j ekYM% अभिलाषा, पी.के.वी. काबुली 4, उज्वल, आधार, अर्पिता, स्वेता
- LrEHku fo'kk.kq% सी.एस.जे.के. 72, गुजरात जूनागढ़ चना 0809, संगम, गौरी, पंत चना 10
- iNrh cvkÃ d fy, (धान कटाई के उपरांत): पूसा 372, पंत जी 114, पंत जी 186, हरियाणा चना 1, पी.बी.जी. 1, सम्राट, जी.एन.जी. 1581

¼c½ cht mipkj% वाबिस्टीन + थिरम (1:1) 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. या वीटावैक्स पावर (कार्बोक्सिन+थिरम) 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. + *ट्राइकोडर्मा* का उत्पाद 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज उपचारित करें।

¼l½ jklk;fud nokvksa dk i.khZ; fNM+dko

1. झुलसा (अंगमारी) रोग से बचाव हेतु फसल के पुष्पन की अवस्था में कार्बेन्डाजिम+मैन्कोजेब (मेकजिम, केयर, फ्रिडम, साफ) या क्लोरोथेलोनिल (कवच) 2 ग्राम प्रति लिटर पानी, 10–12 दिनों के अंतराल पर आवश्यकतानुसार करें।
2. धूसर मोल्ड के एकमुस्त एकीकृत प्रबंधन पर एक अध्ययन में देखा गया कि बुआई हेतु सहनशील प्रजाति का चयन जैसे–अवरोधी, डाई अमोनियम फास्फेट उर्वरक की अनुशंसित मात्रा (125 कि.ग्रा. प्रति हैं.), 45 से. मी. पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर बुआई, कार्बेन्डाजिम + थिरम (2.5 ग्राम प्रति कि. ग्रा.) से बीज उपचार और आवश्यकतानुसार कार्बेन्डाजिम फफूंदनाशी (0.1 %) के पर्णीय छिड़काव से उपज में संतोषजनक वृद्धि और धूसर मोल्ड रोग में भारी कमी देखी गयी।
3. स्तम्भन विषाणु रोग, एफिड और फूँदका नामक कीटों द्वारा स्वस्थ पौधों में फैलता है अतः फसल को विषाणु रोग से बचाव हेतु कीटनाशी का पर्णीय छिड़काव की शिफारिस की जाती है। काबुली प्रजातियों के अपेक्षाकृत देशी किस्में इस विषाणु रोग से कम संवेदनशील हैं अतः क्षेत्रीय स्तर पर किस्मों का चयन करें।

¼n½ lL; fØ;k;s

चने का उकठा, झुलसा एवं धूसर मोल्ड एक बीजोढ़ (सीडबार्न) रोग हैं जो प्रायः रोगी बीज द्वारा एक से दूसरे स्थान पर स्थानांतरित होते हैं। अतः फसल बुआई हेतु स्वस्थ व प्रमाणित बीज ही प्रयोग करें।

- उत्तरी भारत में चने की बुआई का सर्वोत्तम समय, नवम्बर का पहला पखवाड़ा है और 8–10 से.मी. की गहराई पर बोई गयी फसल में म्लानि रोग का आपतन कम होता है।
- उकठा तथा स्तंभन विषाणु रोगी पौधों को उखाड़कर गहरा गड्ढा खोदकर दबा दें।
- उकठा की रोकथाम के लिए अलसी की सह–फसली खेती करें।
- कम्पोस्ट या गोबर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग प्रतिवर्ष फसल की बुआई से 2–3 सप्ताह पहले करें।
- चार कि.ग्रा. कवक परजीवी *ट्राइकोडर्मा* प्रति हैक्टर की दर से, सड़ी हुई 4 बोरी गोबर की खाद में विधिवत मिलाकर छाये में पानी से भीगी जूट की बोरी से तीन दिन के लिए अच्छी तरह से ढ़क दे, ताकि ट्राइकोडर्मा के बीजाणु व कवकजाल गोबर की खाद में पूरी तरह से सक्रिय हो जाये तत्पश्चात् अन्तिम जुताई के समय बुरकाव करके मिट्टी में मिला दें। अच्छे परिणाम हेतु मृदा में पर्याप्त नमी का होना अति आवश्यक है। प्रतिवर्ष इस विधि के प्रयोग से मृदा जनित रोगों के प्रभाव में कमी आती है।

[k- eVj dk jksx

1- pw.khZ vkflrk

y{k.k% रोग के प्रथम लक्षण शुरूआत में सबसे निचली पत्तियों के ऊपरी सतह पर आटे के जैसे सफेद धब्बों के रूप में प्रकट होता है। रोग की तीव्रता की स्थिति में सफेद धब्बे पत्तियों, तनों, प्रतानों और

फलियों पर भी दिखाई देता है। ये सफेद चूर्ण जैसे धब्बे बाद में बदरंग से भूरे रंग के हो जाते हैं। अधपकी (कच्ची) फलियाँ चूर्णिल आसिता संक्रमण के प्रति ज्यादा ग्रहणशील होती हैं। रोगी फलियाँ छोटी, सिकुड़ी और हल्के भूरें रंग से क्षतिग्रस्त दिखाई देती हैं। फलियों पर तीव्र संक्रमण की स्थिति में पैदावार में 50 प्रतिशत तक की क्षति आंकी गयी है।

चूर्णिल आसिता रोग सें ग्रसित पौधे

रतुआ रोग से प्रभावित पत्तियाँ और प्रतान

उकठा रोग ग्रसित पौधे

jkxtud: यह रोग *एरीसाइफी पालीगोनी* नामक कवक से होता है।

2- jrqvk

y{k.k% सर्वप्रथम छोटे, गोलाकार, पीले से नारंगी रंग के फफोले (धब्बे) पत्तियों की निचली सतह पर प्रकट होते हैं। संक्रमण की तीव्रता की स्थिति में पत्तियों की दोनों सतहों पर भूरे रंग के पाऊडरी यूरीडो स्पॉट तथा तनों और पर्णवृंतों पर गहरे भूरे से काले रंग के टिलियो स्पॉट बनते हैं। संक्रमित पत्तियाँ सिकुड़ और सूख कर झड़ जाती हैं।

jkxtud% यह रोग *यूरोमाइसीज फेवी* नामक कवक से होता है।

3- mdBk

y{k.k% संक्रमित पौधे फलियाँ विहिन असमय ही सूख जाते हैं। रोगग्रस्त पौधे के निचली पत्तियों का रंग पीला और पौधे में बौनापन इस रोग के मुख्य लक्षण हैं। पर्णवृन्त के किनारे और अनुपर्ण (स्टिपयूल) नीचे की ओर मुड़ जाते हैं। भूमि की सतह पर तने में मोटापन तथा भंगुरता (ब्रिटल) प्रायः देखे जा सकते हैं। संक्रमित पौधे मृदा में नमी की तुलना में कम नमी के वातावरण में तेजी से सूखते हैं। पुष्पावस्था में संक्रमण की स्थिति में फलियों में दाने सिकुड़े हुये और कम बनते हैं।

jkxtud% यह रोग *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* उपजाति *पाइसाई* नामक कवक से होता है।

4- LDyjkfVfu;k ekYM

y{k.k% रोग के लक्षण फसल के नवोदभिद् अवस्था पर प्रायः कम, लेकिन पुष्पावस्था में ज्यादा, जब फूल की पंखुड़ियाँ जमीन पर गिरती हैं और उन पर कवक का बिजाणु बड़ी तेजी से संक्रमण कर रोग के प्रसार में सहायक है। पौधे के तने और शाखायें जो कवक जाल के सम्पर्क में आती हैं उन पर बड़ी तेजी से सफेद रंग की रूई के समान कवकजाल का मैट बन जाता है। भूरे से काले रंग के गोल से

लम्बवत् आकार के कंठकवक, कवकजाल में देखे जा सकते हैं। तने और शाखाओं पर क्षति स्थल का उपरी भाग पीला पड़ कर सूख जाता है। रोग की तीव्र स्थिति में फलियों पर सफेद कवकजाल देखे जा सकते है जो संक्रमण स्थल पर विगलन पैदा करता है। फलियों में सिकुड़े हुये बदरंग और कम दाने बनते हैं।

स्क्लेरोटिनिया मोल्ड से संक्रमित पौधे

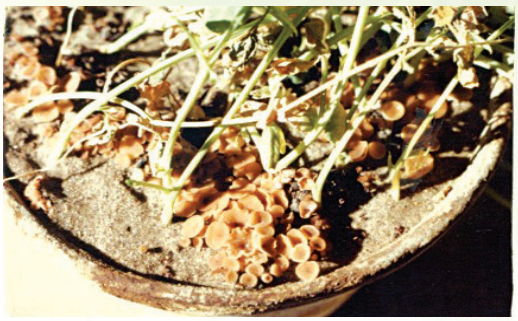

स्क्लेरोटिनिया का ऐपोथिसिया

jksx tud% यह रोग *स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोशियोरम* नामक कवक से होता है।

5- eVj ds jksxksa dk lefdr izca/ku

¼v½ jksx izfrjks/kh mUur'khy fdLesa

1. pw.khZy vkflrk ,oa jrqvk % पूसा प्रभात, पूसा पन्ना, स्वाति, मालवीय मटर 15, इन्दिरा (के.पी.एम.आर. 400), जय, विकास, प्रकाश, पंत मटर 14, पंत मटर 25, पंत मटर 42, अमन (आई.पी.एफ.5–19), स्वर्णतृप्ति
2. mdBk % एच.एफ.पी 9426, विवेक मटर 10, बी. एल मटर 47
3. LDysjksfVfu;k eksYM % विवेक मटर 10, गोमती

¼c½ lefdr izca/ku

मटर की फसल से भरपूर पैदावार में बाधक कारकों पर किये गये समेकित फसल प्रबन्धन व्यवहार का प्रक्षेत्र परिणाम दर्शाता है कि उर्वरक की अनुसंशित मात्रा (20–17–16–20 कि.ग्रा. प्रति है. नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश और सल्फर) + 20 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट; बीज उपचार कार्बेन्डाजिम + थिरम (1:1) 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज; खरपतवारनाशी का छिड़काव पेन्डिमेथेलीन (30 ई.सी.) 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति है. कि दर से बुआई के बाद लेकिन उगने से पहले प्रयोग और फसल में पुष्पावस्था के दौरान मोनोक्रोटोफास या डायमिथोएट (2 मि.लि.) + कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम) या प्रोपीकोनाजोल (1 मि.लि.) प्रति लिटर पानी की दर से छिड़काव अतिलाभकारी है।

¼l½ lL; fØ;k;s

- अक्टूबर माह के दूसरे पखवाड़े में बीज उपचारित मटर की बुआई करने से उकठा और मूल विगलन रोगों से क्षति कम तथा चूर्णिल आसिता एवं रतुआ रोगों में इस माह की बुआई से

भारी कमी देखी गयी है।

- रोग्रस्त फसल अवशेष को कटाई उपरांत मिट्टी में दबा दें।
- कम्पोस्ट या गोबर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग कवक परजीवी ट्राइकोडर्मा के साथ उकठा, स्क्लेरोटिनिया मोल्ड और मृदा जनित रोगों की रोकथाम हेतु चने में वर्णित विधि की भाँति करें।

x- elj d jkx

1-mdBk

y{k.k% मसूर का उकठा (म्लानि) एक मृदा जनित रोग है जो फसल बुआई के शुरूआत काल (30–45 दिनों के अंदर) और फसल में फूल आने की अवस्था में ज्यादा देखने को मिलता है। संक्रमित पौधों की पत्तियाँ पीली, ऊपर को मुड़ी हुई और बौनी दिखती है जो प्रायः सूखने से पहले ही झड़ जाती हैं। रोगी पौधों की जड़ें अविकसित और पीले से हल्के भूरे रंग की होती हैं। ऐसे पौधों में राइजोबियम गाठें कम बनती हैं। मृदा तापमान 20–30 डिग्री से. और कम नमी (मात्र 25 प्रतिशत) की वातावरणीय उपस्थिति इस रोग की उग्रता में सहायक हैं।

उकठा रोग से ग्रसित मसूर के पौधे

jkx tud% यह रोग *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* उपजाति *लेन्टिस* नामक कवक से होता है।

2- ey foxyu

y{k.k% फसल के नवोदभिद् अवस्था में मृदा में अधिक नमी, 28 से 30 डिग्री से. तापमान और अध सड़े कार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति ग्रीवा और आर्द्र मूल विगलन रोगों की उग्रता में सहायक हैं। संक्रमित पौधे की पत्तियों और तने का रंग पीला पड़कर भूसे के समान हो जाता है। मृदा की सतह पर तने (ग्रीवा) और मूसला जड़ के ऊपरी भाग में विगलन पैदा हो जाता है तथा संक्रमण स्थल के आस–पास सफेद रूईदार कवकजाल को देखा जा सकता है। शुष्क मूल विगलन का प्रकोप फसल के पुष्पावस्था से दानें बनने की अवधि में ज्यादा दिखाई देता है। रोग ग्रसित पौधे की मूसला जड़ से लगी द्वितीयक जड़ें विगलित तथा सूखी हुई दिखाई देती हैं। संक्रमित पौधे की पत्तियाँ नीचे से पीली पड़कर भूसे के समान हो जाती है और खेत में जगह–जगह सूखे पौधों का प्रक्षेत्र (पैचेज) बन जाता है।

jkx tud% यह रोग *स्क्लेरोषियम रोल्फसाई* (ग्रीवा विगलन), *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* (आर्द्र मूल विगलन) तथा राइजोक्टोनिया बटाटिकोला (शुष्क मूल विगलन) नामक कवकों से होता है।

3- jr|vk

y{k.k% रतुआ रोग से मसूर के सभी वायवीय अंग प्रभावित होते हैं। पत्तियों और फलियों पर छोटे, गोल व अंडाकार हल्के पीले रंग के स्पॉट (धब्बे) बनते हैं। ये धब्बे बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं। शाखाओं और तनों पर गहरे भूरे से काले रंग के लम्बाकार स्पॉट (टिलिया) प्रायः फसल पकने की अवस्था में बनते हैं। रोगी पौधों में दानें बहुत कम बनते हैं और पत्तियाँ सूख कर गिर जाती हैं। इस रोग का प्रकोप यदि फसल के प्रारम्भिक अवस्था में हो जाय तो पैदावार में 60 से 65 प्रतिशत की कमी हो जाती है।

jkx tud% यह रोग *यूरोमाइसीज फेवी* नामक कवक से होता है।

4- vLdkdkbVk vixekjh

y{k.k% पौधे के सभी वायवीय अंग इस रोग से प्रभावित होते हैं। पत्तियों और फलियों पर भूरे रंग के गोलाकार धब्बे (चित्तियाँ) बनती हैं। तने और शाखाओं पर ये धब्बे लम्बाकार होते हैं जो गोलाई में तने को घेर लेते हैं और तने का ऊपरी भाग हल्की हवा के झोकों से टूट जाता है। संक्रमित फलियों में बीज छोटे और सिकुड़े हुये तथा बीज पर प्रायः सफेद कवक जाल व भूरे रंग के पिक्निडिया देखे जा सकते हैं।

jkx tud% यह रोग *अस्कोकाइटा लेन्टिस* नामक कवक से होता है।

lefdr ic/ku

¼v½ jkx ifrjk/kh mUur'khy fdLe

1. mdBk vkj jr|vk% पूसा वैभव, पूसा मसूर 5, गरिमा, शेरी (डी.पी.एल. 62), मालवीय विश्वनाथ (एच यू एल 57), अंगूरी (आई.पी.एल. 406), शेखर मसूर 2, शेखर मसूर 3, पंत मसूर 6, पंत मसूर 7, पंत मसूर 8, जवाहर मसूर 1, जवाहर मसूर 3, आर.वी.एल. 31
2. e|y foxyu% हरियाणा मसूर 1, वी. एल. मसूर 129, वी. एल. मसूर 133, वी. एल. मसूर 514, कृष (के.एल.एस. 09–3)
3. vLdkdkbVk vixekjh% पंत मसूर 6, गरिमा, हरियाणा मसूर 1, एल 4802, एल 4806, शालीमार मसूर 2

¼c½ cht mipkj

वाबिस्टीन + थिरम (1:1) 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. या वीटावैक्स पावर (कार्बोक्सिन + थिरम) 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज उपचारित करें।

¼l½ jklk;fud nokvk dk i.kh; fNMdko

1. अस्कोकाइटा अंगमारी से बचाव हेतु फसल में पुष्पावस्था के दौरान कवकनाशी क्लोरोथेलोनिल या केप्टाफाल 2 ग्राम प्रति लिटर पानी 10–12 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।
2. रतुआ रोग दिखाई देने के तत्काल बाद मैन्कोजेब (डायथेन एम 45) 2.5 ग्राम या हेक्साकोनाजोल (कोनटॉफ) 1 ग्राम प्रति लिटर पानी की दर से 15 के दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

¼n½ lL; fØ;k;s

उकठा तथा अस्कोकाइटा अंगमारी एक बीजोड़ रोग है अतः बुआई हेतु स्वस्थ व प्रमाणित बीज का चयन करें।

- उत्तरी प्रान्तों में मसूर की बुआई में अक्टूबर के दूसरे पखवाड़े में करने से रतुआ और अस्कोकाइटा अंगमारी रोगों से नुकसान की संभावना कम रहती है।
- असली के साथ सह–फसली खेती उकठा रोग प्रबंधन में सहायक है।
- मूल विगलन रोगों से बचाव हेतु पोटाश उर्वरक 60 कि.ग्रा. प्रति है. की दर से प्रयोग लाभकारी है।
- रतुआ, अस्कोकाइटा अंगमारी तथा उकठा रोगी फसल अवशेष को गड्ढा खोदकर मिट्टी में दबा दें।
- कम्पोस्ट या गोबर की खाद का प्रयोग कवक परजीवी *ट्राइकोडर्मा* के साथ उकठा एवं मूल विगलन रोगों के रोकथाम हेतु चने में वर्णित विधि की भाँति करें।

?k- vjgj d: jkx

1- mdBk

y{k.k% रोगग्रस्त पौधे की निचली पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं तथा मुख्य टहनी व शाखाओं का ऊपरी भाग, झुक एवं मुरझा जाता है। रोगी तनों पर पतली, भूरे रंग की लम्बवत् धारी दिखाई देती है। संक्रमित जड़ को लम्बवत दो भागों में फाड़कर देखे तो इनकी संवाहिनी बण्डलों का रंग काला और कवक के कवकतन्तु से भरे रहते हैं जिसके फलस्वरूप जल व खनिज पदार्थो का आवागमन अवरूद्ध हो जाता है। रोगी पौधे पूर्णतः अथवा आंशिक रूप से सूखे दिखाई देते हैं।

jkx tud: यह रोग *फ्यूजेरियम ऊडम* नामक कवक से होता है।

2- QkbVk¶FkkSjk vxekjh

y{k.k% रोग के प्रथम लक्षण पत्तियों पर भूरे रंग के अनियमित आकार के धब्बों का बनना है। इसके उपरांत तने पर जमीन की सतह या 1 से 2 फुट की ऊचाई पर चित्तियाँ बनती हैं, जो तने को चारों तरफ से गोलाई में घेर लेती हैं और क्षति–स्थल का ऊपरी भाग सूख जाता है।

उकठा रोग से ग्रसित पौधे

फाइटोफ्थोरा अंगमारी रोग से संक्रमित पौधे व तने

jkx tud% यह रोग *फाइटोफ्थोरा ड्रेचस्लेरी* उपजाति कैजनी नामक कवक से होता है।

3- Ckk> jkx

y{k.k% रोग से ग्रसित पौधे की पत्तियाँ छोटी, हल्के हरे रंग की तथा पौधा बौना व झाड़ीदार होता है। रोगी पौधों में फूलों की संख्या बहुत कम या पूर्णतः बिना फूल के दिखाई देते हैं। इस रोग का प्रसार *एसेरिया कैजनी* नामक किट (माइट) से होता है।

jkx tud% यह रोग बंध्य मोजैक विषाणु से होता है।

lefdr ÁcU/ku

¼v½ jkx ifrjks/kh mUur'khy fdLe% पूसा 9, पूसा 992, पूसा 2002, मालवीय चमत्कार (एम.ए.एल. 13), मालवीय अरहर 6, आजाद (के 91–25), लक्ष्मी, वैशाली (वी.एस.एम.आर. 853), अमोल (बी.डी.एन. 708), बी.डी.एन. 711, पंत अरहर 3, पंत अरहर 291, सूर्या, शरद (डी.ए. 11), बहार, नरेन्द्र अरहर 2, जवाहर अरहर 4

¼c½ cht mipkj% बोने से पूर्व बीज को बाविस्टीन (2 ग्राम) या रिडोमील एम जेड –72 (3 ग्राम) या बीटावैक्स पावर (2.5 ग्राम) + ट्राइकोडर्मा के उत्पाद (4 ग्राम) प्रति कि. ग्रा. की दर से उपचारित करें।

¼l½ lL; fØ;k;s

- अरहर की बुआई समुचित जल निकासी की व्यवस्था वाले खेत में मेड़ो (रिज) पर करें।
- उकठा रोग से बचाव के लिए ज्वार की सह–फसली खेती करें।
- पोटाश उर्वरक 50 कि. ग्रा. प्रति है. के प्रयोग से फाइटोफ्थोरा अंगमारी रोग के प्रभाव में कमी आती है।
- बंध्य मोजैक रोग से बचाव हेतु अरहर के पुराने या स्वयं उगे हुए पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।
- कम्पोस्ट या गोबर की खाद का प्रयोग कवक परजीवी ट्राइकोडर्मा के साथ उकठा व अन्य मृदा जनित रोगों के रोकथाम हेतु चने में वर्णित विधि की भाँति करें।

p- eax vkj mMn d; jkx

1- ihyk fprdjh

y{k.k% रोग के लक्षण फसल के प्रारंभिक अवस्था (15–20 दिन के अंदर) में ही दिखाई देने लगता है। पत्तियों पर छोटे, गोलाकार पीले रंग के धब्बे के शुरूआत के साथ ही, ये तेजी से फैलते हैं और पूरा पर्णवृंत चितकबरा–पीला हो जाता है। रोगग्रस्त पौधों में फूल व फलियाँ कम तथा रोगी फलियों का बीज सिकुड़ा हुआ और छोटा होता है। सफेद मक्खी (ह्वाइट फ्लाई) इस रोग के निवेश द्रव्य का प्रमुख स्रोत और संवाहक है।

jkx tud% यह रोग मूंगबीन *एलो मोजेक* वाइरस से होता है

2- i.k ldpu

y{k.k% रोगी पत्तियों का रंग गहरा हरा, पर्णवृन्त छोटा, मोटा और झुरीदार होता है। पुष्पवृन्त पर फूल कम तथा वह हरा, मोटा और झाड़ू के आकार का नजर आता है। पर्ण संकुचन (लीफ क्रिन्कल) विषाणु के उग्र संक्रमण में संक्रमित पौधे पर फालियां कम या नहीं बनती हैं।

पर्ण चित्ती रोग से संक्रमित पौधे

पर्ण संकुचन रोग से संक्रमित पौधा

jkxtud% यह रोग पर्ण संकुचन विषाणु से होता है।

3- *ljdkLikjk* i.k fpÙkh

y{k.k% पत्तियों पर भूरे से बैंगनी–लाल रंग के गोल से अनियमित आकार की चित्तियाँ बनती हैं। रोग की उग्र अवस्था में ये आपस में मिलकर पत्ती का अधिकांश भाग ढक लेते हैं, जिससे पत्ती झुलस जाती है। संक्रमित फलियों का रंग काला हो जाता है और अंदर बीज सिकुड़ कर भूरे से काले पड़ जाते हैं।

jkxtud% यह रोग *सरकोस्पोरा कैनेसेन्स* एवं *सुडोसरकोस्पोरा क्रुएन्टा* नामक कवक से होता है।

4- vknz ey foxyu o tkyhnkj vxekjh

y{k.k% फसल के नवोदभिद् अवस्था में तने के निचले भाग व जड़ में विगलन (सड़न) पैदा हो जाता है। संक्रमित पौधे का रंग पीला, जड़ें रंगहीन और नम होती हैं। जालीदार अंगमारी में पत्तियों, तनों और फलियों पर शुरू में अनियमित आकार के जलयुक्त धब्बे, हल्के हरे से गहरे रंग के बनते हैं। ये धब्बे

पर्ण चित्ती रोग से संक्रमित पौधे

जालीदार अंगमारी रोग से संक्रमित पौधे

अनुकूल वातावरण में बड़ी तेजी से फैलते हैं और पूरा पर्णवृन्त कवक के कवकजाल से ढक जाता है। संक्रमित पौधों की पत्तियाँ सिकुड़ कर सूख जाती हैं। मटमैले रंग के कवकजाल में भूरें रंग के गोल से अनियमित आकार के कंठ–कवक (स्क्लेरोशियम) भी दिखाई देता है।

jkx tud% यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* नामक कवक से होता है।

lefdr ÁcU/ku

¼v½ jkx ifrjks/kh mUur'khy fdLesa

ewx : पूसा विशाल, पूसा 672, सम्राट, मेहा, आई.पी.एम. 2–3, स्वाति (के.एम. 2195), पंत मूंग 4, मालवीय मूंग 1, मालवीय मूंग 12, मालवीय मूंग 16, सत्या (एम.एच. 2–15), बसन्ती, एस.एम.एल. 668, जवाहर मूंग 721, नरेन्द्र मूंग 1, गंगा 8, मुस्कान (एम.एच. 96–1)

mM+n % उत्तरा, पंता उड़द 31, पंता उड़द 40, नरेन्द्र उड़द 1, शेखर 2 (के.यू. 300), शेखर 3 (के.यू. 309), आजाद उड़द 2 (के.यू. 91), आजाद उड़द 3 (के.यू. 96–3), विस्वास (एन.यू.एल. 7), आई.पी. यू. 02–43

¼c½ cht mipkj ,oa i.khZ; fNM+dko

बुआई से पूर्व मूंग और उड़द के बीज को कीटनाशी–इमिडाक्लोप्रिड 48% एफ.एस. (गऊचो) 5 मि. लि. तथा फफूंदनाशी कार्बेन्डाजिम + थिरम (1:1) के अनुपात में 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करें और बुआई के 21 दिन उपरांत इमिडाक्लोप्रिड 17.8% एस.एल. (कन्फीडोर) 0.05% (250 मि.ली दवा 500 लिटर पानी) या डायमिथोएट 30% ई.सी. (रोगोर) 1.5 मि.लि. + कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. (बाविस्टीन) 0.05% (250 ग्राम दवा 500 लिटर पानी) के मिश्रण का छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार दूसरा छिड़काव बुआई के 35 दिनों बाद स्पिनोसेड 45% एस.सी. (स्पिन्टॉर) 0.04% (200 मि.लि. दवा

उपचारित (बीज उपचार + पर्णीय छिड़काव)   अनुपचारित

500 लिटर पानी प्रति है.) का प्रयोग अतिलाभकारी है। इस उपचार से इन फसलों की उपरोक्त चारों बीमारियों से बचाव अथवा उनमें संतोषजनक कमी आती है।

¼l½ lL; fØ;k;

- खरीफ फसल की बुआई, जुलाई के दूसरे पखवाड़े में करें।
- पीला चितेरी और पर्ण सकुंचन विषाणु रोगों से संक्रमित पौधों को उखाड़कर (शुरूआत में ही) मिट्टी में दबा दें।
- मृदा जनित कवक रोग, आर्द्र मूल विगलन से बचाव हेतु चार बोरी सड़ी हुई गोबर की खाद में 4 कि.ग्रा. कवक परजीवी *ट्राइकोडर्मा* को विधिवत मिलाकर प्रति है. की दर से अन्तिम जुताई के समय बुरकाव करके मिट्टी में मिला दें। जैव उत्पाद को मृदा में मिलाते समय पर्याप्त नमी का होना अति आवश्यक है।

तिलहनी फसलों के रोग व उनका प्रबंधन

लक्ष्मन प्रसाद
पादप रोगविज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110012

d- e¡xQyh dk jkx

1- fdê

Yk{k.k% सबसे पहले रोग के लक्षण पत्तियों की निचली सतह पर ऊतकक्षयी स्पॉट के रूप में प्रकट होते हैं, जो बाद में पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीछे धब्बे के रूप में दिखाई देता है। पत्तियों की बाह्य त्वचा को विदीर्ण कर स्पॉट सतह पर निकलते हैं रोगग्रस्त पत्तियाँ शीघ्र ही झुलसी हुई दिखाई देने लगती हैं और समय से पूर्व ही झड़ने लगती है। रोग के कारण फलियाँ जल्दी पक जाती है, जिससे बीज चिपटे, हल्के व विकृत आकार के प्राप्त होते हैं।

jkx tud% यह रोग *पक्सीनिया ऐराकिडिस* नामक कवक से होता है।

izc/ku% इस रोग की रोकथाम के लिए स्वस्थ तथा रोगरहित फसल से प्राप्त बीजों का प्रयोग करना चाहिए। बीज को ऑक्सीकार्बोक्सिन (प्लांटवैक्स) या कार्बोक्सिन (वाइटावैक्स) से 0.1 प्रतिशत की दर से उपचारित करें। रोगग्रस्त फसल के अवशेषों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। गेहूं किट्ट की तरह, जिनेब (0.25 प्रतिशत) 0.1 प्रतिशत सेण्डीवीट स्टिकर के साथ मिलाकर 3–4 छिड़काव करने से रोग नियंत्रित किया जा सकता है।

2- fVDdk

y{k.k% सर्वप्रथम रोग के लक्षण पत्तियों की ऊपरी सतह पर हल्के भूरे दाग के रूप में दिखाई देते हैं, जो धीरे–धीरे गहरे रंग के हो जाते हैं। पौधे के प्रत्येक वायुवीय भाग पर इस रोग के लक्षण पाए जाते है। यह दाग पत्तियों से फैलकर पर्णवृंत तथा तनों पर स्पष्ट दिखाई देते हैं। कवक की दो जातियाँ विभिन्न समय में आक्रमण करती हैं रोग की आरंभिक स्थिति में इन दो प्रकार की पर्ण–चित्तियों को पहचानना कठिन होता है। अगेती पर्णचित्ती में *सर्कोस्पोरा ऐराकिडिकोला* द्वारा बने धब्बे वृत्ताकार एवं पीले वृत्ताकार परिवेष के अंदर होते हैं। ये धब्बे विभिन्न आकार के होते हैं तथा 1–10 मि मी व्यास के होते हैं, जो बाद में एक दूसरे से मिलकर बड़ा विक्षत बनाते हैं। सतह पर ऊतकक्षयी भाग लाल–भूरे से काले होते हैं तथा निचली सहत पर इनका रंग हल्का भूरा होता है। निचली सतह पर पीले घेरे अस्पष्ट या अनुपस्थित होते हैं। पछेती पर्ण चित्ती रोग 1–6 मि.मी. व्यास और गहरे भूरे अथवा काले रंग के होते हैं। आरंभिक स्थिति में ये भूरे धब्बे पीले, घेरे के अंदर नहीं होते, लेकिन जब धब्बे परिपक्व हो जाते हैं, तो ऊपरी सतह पर इनके चारों तरफ पीले घेरे बन जाते हैं। धब्बों की निचली सतह का रंग काला होता है। *सर्कोस्पोरा ऐराकिडिकोले* का आक्रमण *सर्कोस्पोरा परसोनेटा* से पहले होता है। सर्कोस्पोरा परसोनेटा के कारण पौधों में निष्पत्रण होने से पौधे जल्दी पक जाते हैं, जिससे फलियाँ आकार में छोटी तथा निम्न कोटि की हो जाती हैं।

jkx tud% यह रोग दो रोगजनकों *सर्कोस्पोरा ऐराचिड़ीकोला* व *सर्कोस्पोरा परसोनेटा* नामक कवकों द्वारा होता है।

jkx ic/ku% अगेती बुवाई मई से जून के प्रथम सप्ताह तक करनी चाहिए। रोगग्रस्त अवशेषों को जलाकर खेत की सफाई करनी चाहिए। बीजों को थायरम 2.5 ग्रा. प्रति बीज की दर से उपचारित करके बोयें । फसल पर रोग के लक्षण दिखते ही कवकनाशी जैसे मैन्कोजेब (0.25 प्रतिशत) के 3–4 छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर घोल बनाकर 2–3 छिड़काव 20 दिन के अन्तर पर करें। रोगरोधी किस्मे उगायें।

3- i.kZ vxekjh

y{k.k% पत्तियों की निचली सतह पर जलासम्क्ति धब्बे के रूप में दिखाई देता है जो कि बढ़कर गोल नुकीले बिन्दु के समान पीली रंग की परिधि के साथ होता है। रोग वृद्धि के साथ यह धब्बे भूरे हो जाते है तथाा अन्त में इनके मध्य भाग का काठ भूरा हो जाता है। धीरे–धीरे यह रोग पर्णवृंत एवं शाखाओं की तरफ बढ़ता है, जिससे पूरा पौधा झुलस जाता है। झुलसे हुए पौधे के भाग पर काले रंग के एसरबुलस बहुत अधिक संख्या में बनते है। एसरबुलस की उपस्थिति तथा धब्बों के किनारे चेस्टनट भूरे होने के कारण यह रोग आसानी से पहचाना जा सकता है।

jkx tud% यह रोग *कोलेटोट्राईकम डिमेशियम* नामक फफूँदी द्वारा उत्पन्न होता है।

ic/ku% रोगग्रस्त फसल के अवशेषों को जलाकर खेत की सफाई करनी चाहिए। स्वस्थ व स्वच्छ बीजों को ही बुवाई में प्रयोग करें। बोने से पूर्व बीज को 2.5 ग्राम प्रति कि. ग्रा. की दर से थायरम से उपचारित करें। धान, मक्का व गेहूँ आधारित कम से कम दो वर्षीय फसल चक्र अपनाये। रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करें।

4- LDysjksf'k;e vxekjh o ey foxyu

y{k.k% इस रोग के तीन विभिन्न प्रकार के लक्षण पौधों के अलग–अलग भाग में दिखाई देते है जैसे मूल व शिखा विगलन जो पौधे की वृद्धि तथा पकने के समय होता है, दूसरा मूल का मृदा विगलन जो पौधे के पकने के समय होता है। तीसरा नीला क्षय जो पौधे की मृत्यु के समय स्पष्ट होता है। इन तीनों स्थितियों में रोग का मुख्य लक्षण भूमि की सतह पर तनों के चारों तरफ तथा तनों का कवकजाल का फैला होना है। बाद में उन्ही संक्रमित स्थानों पर लाल भूरे रंग के छोटे–छोटे, गोल, कवक के स्क्लेरोशियम दिखाई देते है। रोग ग्रस्त पौधे पीले तथा छोटे हो जाते है तथा उनमें केवल एक या दो फलियाँ लग पाती है। रोगी पौधे का भाग या पूरा पौधा मर जाता है।

jkx tud% यह रोग *स्क्लेरोशियम रोल्फसाई* द्वारा उत्पन्न होता है।

ic/ku% रोगग्रस्त फसल के अवशेषों को खेत से निकालकर नष्ट करना चाहिए। गेहूँ–धान–मक्का आदि फसलों के साथ बिना मूंगफली वाला 3 वर्ष का फसल चक्र अपनाये। उर्वरक की संस्तुति मात्रा ही प्रयोग करें व नाइट्रोजन को अमोनियम के रूप में डालने से रोग का प्रकोप का होता है। स्वच्छ, रोग रहित व प्रमाणित बीज बोयें। कुइनटोजिन (ब्रासिकॉल) विलेस चूर्ण 15 किलोग्राम को (लगभग 3–4 हजार लिटर पानी में) प्रति हैक्टर की दर से जुलाई में रोग लगने से एक माह पूर्व पौधों की जड़ों में डालें।

5- 'k"d foxyu

Yk{k.k% प्रारम्भ में रोग के लक्षण पौध की जड़ पर हरे रंग के आर्द्र–ऊतकक्षयी भाग का बनना है जो बाद में हल्का, सूखा एवं भूरे रंग का हो जाता है। रोगग्रसित पौधे के भागों पर कवक के अलग–अलग कई स्क्लेरोशियम दिखाई पड़ते हैं। कभी–कभी रोग ग्रस्त पौधे छोटे रह जाते हैं और मुरझारकर अन्त में मर जाते हैं। राइजोक्टोनिया द्वारा उत्पन्न रोग में हल्की पीली धारियाँ भूमि की सतह के निकट तने पर दिखाई देती है, जो बाद में बढ़कर तनों को चारों तरफ से घेर लेती है जिससे पौध का ऊपरी भाग मुरझाने लगता है।

jksx tud% यह रोग दों कवकों, *स्क्लोरोशियम बटाटीकोला* व *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* द्वारा उत्पन्न होता है।

ic/ku% स्वच्छ व रोगरहित फसल से ही बीज प्राप्त करें। बिना मूंगफली के तीन वर्ष का फसल चक्र अपनाए जिसमें धान, मक्का, गेहूँ आदि फसलें हैं। रोगग्रस्त फसल के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए। *ट्राइकोडर्मा हारजियेनम* को गोबर की खाद में निवेशित करके बुवाई से पूर्व खेत मे मिलाना चाहिए। रोग लगने से एक महीना पूर्व कुइनटोजिन (ब्रासिकाल) 15 किलोग्राम प्रति हैक्टर की दर से 3000–4000 लिटर पानी में घोलकर पौधों की जड़ों में डालें। रोग रोधी किस्में उगाये

6- ik/k vxekjh

y{k.k% रोग लक्षण बुवाई के लगभग 20 दिन से 40 दिन के अंदर दिखाई देने लगते है। अगर रोग का प्रकोप अंकुरण के कुछ दिन बाद होता है तो बीजपत्रधर मर जाता है तथा काला उतकक्षय बीजपत्रो व प्रांकुर पर दिखाई देता हैं। प्रारम्भिक लक्षण पौधे का मुख्य अक्ष मुरझा जाता है तथा ऊतकक्षय नीचे की तरफ मुख्य जड़ पर फैलने लगते है। जिसके कारण बीजपत्रों के नीचे अपस्थानिक जड़ें बन जाती है।

jksx tud% यह फफूँदी जनित रोग है। यह *ऐस्पर्जिलस नाइजर, ऐस्पर्जिलस फ्लैक्स* व *मैक्राफोमिना फैजिओलाई* द्वारा होता है।

ic/ku% रोगग्रसित फसल के अवशेषों को नष्ट करना चाहिए। स्वस्थ तथा रोगरहित बीजों का संग्रह करना चाहिए व टूटे हुए बीजों को छाटकर निकाल देना चाहिए। दो–तीन वर्ष का फसल–चक्र अपनाना चाहिए। मृदा को कुइनटोजिन का 10–15 कि.ग्रा प्रति हैक्टर की दर से उपचारित करना लाभकारी होता है। बोने से पहले बीजो को कवकनाशी से उपचारित करकें बोयें।

7- i.kdpu ;k jkstV

y{k.k % रोगी पौधे की वृद्धि रुक जाती है। वे छोटे हो जाते है। मूल ग्रंथिकाओं की संख्या में कमी हो जाती है। नई पत्तियों हरिमाहीन तथा कर्वुरित हो जाती है। पत्तियों का रंग हल्का पीला व सिरा गहरे हरे रंग का होता है। पौधे की छोटी अवस्था में रोग लगने से अवृंत फूल बनते है न तो बाद में खिलते है और न उनमें बीज बन पाते है।

jksx tud% यह रोग विषाणु द्वारा उत्पन्न होता है। तथा वायरस का संचरण रोपण तथा रोगवाहक माहू (*एफिल लेगुमिनोसी*) द्वारा होता है।

ic/ku% रोगग्रस्त फसल से बुवाई के लिए बीज प्राप्त न करें। अगेती बुवाई जून के अंत तक कर देनी चाहिए। स्वच्छ तथा प्रमाणित बीज का प्रयोग बोने के लिए करें। रोग वाहक माहू के नियंत्रण के लिए मेटासिस्टौक्स (0.1 प्रतिशत) घोल का 2–3 छिड़काव 10–15 दिन के अंतर पर करें।

[k- vylh d jksx

1- Eykfu jksx

Yk{k.k% यह रोग फसल की किसी भी अवस्था में संक्रमित कर सकता है। पौध अवस्था में संक्रमण वृद्धि को प्रभावित करता है। रोगग्रसित पत्तियाँ पीली या भूरी हो जाती है और वे मुरझाकर ऐंठ जाती है। फिर समूचा पौधा सूख जाता और पत्तियाँ झड़ जाती है। अधिक देर व कम संक्रमण की दशा में पौधे अगेती (समय से पहले) पक जाते है जबकि इस दशा में रोग के लक्षण अधिक स्पष्ट नही होते है। रोगी पौधों के बदरंग या भूरे रंग के संवहन–ऊतकों में कवक–जाल पाया जाता है। जिससे पौधे की जड़ें कमजोर व भूरी हो जाती है।

jksx tud% यह रोग *फ्यूजेकरयम आक्सीस्पोरम फा. स्पि. लाइनाई* नामक फफूँद द्वारा होता है।

ic/ku% रोगग्रसित खेतों में 2–3 वर्ष बिना अलसी का फसल–चक्र अपनायें। रोगरोधी किस्मों जैसे– किरन, हिमअलसी–1, हीरा, हिमअलसी–2, हिमालिनी, जीवन, जानकी को उगाना चाहिए। थायरम 75% डब्ल्यू पी या कैप्टान 75% डब्ल्यू 3 ग्रा. प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बोएं। *ट्राइकोडर्मा हारजेनियम* का चूर्ण 5 ग्राम प्रति कि. ग्रा की दर से बीज उपचारित कर बोयें व इसी जैविक नियंत्रक को गोबर की खाद में निवेशित कर खेत की आखिरी तैयारी के समय मिट्टी में मिलायें।

2- jrvk

Yk{k.k% इस रोग के मुख्य लक्षण पौधे के सभी पर्णीय अंगों पर यूरीडियम लगे होने (स्फोट) से नारंगी रंग का दिखाई देना है। यह स्फोट पत्तियों की दोनो सतहों पर पाए जा सकते हैं। पत्तियों पर स्फोटों का आकार गोल एवं छोटा तथा तनों पर लम्बा होता है। यह छोटा स्फोट हारिमा हीन मेखला से घिरा होता है। रोगग्रसित पत्तियाँ समय से पहले सूख जाती है ऐसी पत्तियाँ गिर जाती है जिससे टीलियम बहुत कम बनते है। बाद में हुए संक्रमण की स्थिति में पत्तियों के यूरीडोस्पॉट का स्थान लाल भूरे से काले रंग के टीलियमी स्फोट ले लेते हैं। रोग के व्यापक होने पर पौधों मे सिकुड़े हुए बहुत कम बीज बनते है और कभी–कभी पौधे सूख जाते है। रोगग्रस्त पौधों के रेशे कमजोर एवं रंगीन हो जाते है जिससे इसकी गुणवत्ता व मूल्य घट जाते हैं।

jksx tud% यह रोग *मेलेम्पसोरा लाइनाइ* नामक कवक से होता है।

ic/ku% रोगरोधी किस्में उगानी चाहिए जैसेः सुरभि, नगरकोट, किरन, जीवन, हिमालिनी आदि। खेत में पड़े रोगग्रस्त अवशेषों को नष्ट करे व ग्रीष्म ऋतु में स्वयं उगे के पौधों व अन्य जंगली परपोषियों को नष्ट करके रोग को कम किया जा सकता है। कवकनाशियों का प्रयोग करें – जैसे जिनेब का 0.2% का घोल बनाकर 3 छिड़काव करे। पहला छिड़काव रोग के दिखाई देते ही व बाकी दोनों छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करें।

3- pf.kZy vkflrk

y{k.k % यह रोग पौधों के सभी ऊपरी अंगों जैसे समूची पत्तियाँ, तना, टहनियाँ व फलियों को मटमैले सफेद चूर्ण से ढक लेता है। इस मटमैले चूर्ण में गहरे भूरे या काले रंग के फलनकाय भी दिखाई देते है। रोगग्राही किस्मों में कभी–कभी रोग की उग्रता से पूरा पौधा सूख जाता है। व रोगग्रस्त पौधों के बीज सिकुड़कर छोटे हो जाते है व रेशे की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है।

jksx tud% *ऑइडियम लाइनाई* नामक फफूँद रोग उत्पन्न करता है।

izca/ku% रोग की बहुलता वाले क्षेत्रों में 2–3 वर्ष का फसल चक्र लाभदायक है। अगेती बुवाई करना भी लाभदायक होता है। गंधक चूर्ण का 20 कि. ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से बुरकाव करना चाहिए। रोग रोधी किस्में जैसेः जीवन, नगरकोट, सुरभि आदि को उगाएं।

4- i.kZ fpÙkh

y{k.k% सर्वप्रथम निचली पत्तियों में संक्रमण प्राय किनारो से होता है। व बाद की अवस्था में अधिकांश लक्षण पुष्पीय अंगो तक ही सीमित होते हैं। पत्तियों व पुष्पों पर बहुसंख्यक धब्बों के कारण पौधा पुष्प सहित झुलस व सूख जाता है। पुष्प कलिका का न खुलना इस रोग का प्रमुख लक्षण है।

jksx tud% यह रोग *अल्टरनेरिया लाइनाई* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% ऊँचे एवं अच्छे जलनिकास वाले खेतों मे अलसी उगाने से इस रोग को बहुत हद तक रोका जा सकता है। बीज को कैप्टान या थायराम का 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम दर से उपचारित कर बोना चाहिए। जिनेब या मैन्कोजेब का 0.25 प्रतिशत की दर से तीन छिड़काव करना चाहिए। पहला छिड़काव रोग दिखते ही करना चाहिए तथा शेष दो छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर करें। रोगरोधी किस्मों जैसेः हिम अलसी–1, श्वेता, सुभ्रा आदि का उपयोग करें।

x- ljlksa ds jksx

1- enqjksfey vkflrk

y{k.k% रोग सर्वप्रथम पत्तियों की निचली सतह पर सफेद मृदुरोमिल कवकीय वृद्धि के रूप दिखाई देते है। रोगग्रसित पत्तियों पर हल्के भूरे धब्बे दिखाई पड़ते है जो बाद में अनियमित आकार ग्रहण कर लेते है। पौध अवस्था में रोग के प्रकोप से पौधे मर जाते है। रोग के लक्षण तनों पर भी दिखाई देता है। जैसे अंत में तने के रोगग्रस्त भाग पर कोशिकीय अतिवृद्धि (सूजन जैसी) आने लगती है इससे तना झुक जाता है। कभी–कभी पुष्प कलियाँ क्षीण हो जाती हैं और पुष्पांग छितरा जाते हैं।

jksx tud% यह रोग *पैरोनोस्पोरा पैरासिटिका* नामक कवक द्वारा उत्पन्न होता है।

izca/ku% स्वस्थ्य व प्रमाणित बीजों को बुवाई के लिए प्रयोग करें। अगेती बुवाई करें जैसे अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े में खेतो में रोगग्रसित फसल अवशेषों व खरपतवारों को नष्ट कर दें। रोगरोधी किस्में उगायें। बीजो को एप्रोन एस. डी. 4 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर बोयें। फसल पर मन्कोजैब का 0.20 प्रतिशत या मेटालेक्जिल एम. जेड़–72 के 0.15 प्रतिशत का छिड़काव करें।

2- 'osr jrqvk

y{k.k% रोग की परपोषी पौधों पर दो अवस्थाएं होती है। स्थानीय व सर्वांगी रोग के लक्षण जड़ के अलावा पौधे के सभी भागों पर पाये जाते है। स्थानीय संक्रमण में पत्तियों व पुष्पवृत्तों पर उभरे हुए चमकीले अनियमित या गोलाकार फफोले बनते है जिनके पूर्णरूप से विकसित होने के बाद परपोषी की बाह्य भित्ती फट जाती है और पत्ती की सतह पर कवक बीजाणु चूर्ण के रूप दिखाई देते है। तनों एवं पुष्पक्रम पर रोग संक्रमण सर्वांगी होता है। ऊतकों में अतिवृद्धि व अतिवर्धन के कारण पुष्प अंगों का विरूपण हो जाता है तथा मोटे–मोटे हो जाते है। इस पर सफेद फफोले बन जाते है। रोगी फूलों में दाने नहीं बनते है।

jksx tud% यह रोग एक अविकल्पी परजीवी *एलयूगो कैन्डिडा* द्वारा उत्पन्न होता है।

izca/ku% jोगी पौधों के अवशेषों को नष्ट कर दें, बिना सरसों वर्गीय फसलों का 2–5 वर्ष का फसल चक्र अपनायें। स्वस्थ व प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें। बुवाई पूर्व एप्रोन 35 एस. डी. की 4.0 ग्राम प्रति किलो ग्राम की दर से बीजोपचारित कर बोयें। रोगरोधी किस्में जैसे वरदान, स्वर्ण, ज्योति, किरण, पूसा स्वार्णिका आदि बोयें। रोगी फसल पर मेन्कोजेब 0.25 प्रतिशत या मेटालेक्सिल एम जेड. – 72 की 0.15 प्रतिशत का छिड़काव करें। रोग की अधिक उग्रता होने पर पहला छिड़काव मेटालेक्सिल एम. जेड़ – 72 की 0.15 प्रतिशत व दूसरा छिड़काव मैन्कोजेब का 0.25 प्रतिशत की दर 10–15 दिन के अन्तराल पर करें।

3- vYVjusfj;k iRrh fpRrh o >qylk

y{k.k% सर्वप्रथम रोग पौधे की निचली पत्तियों पर दिखाई देता है। रोगी पत्तियों पर गोलाकार हल्के भूरे से काले रंग के धब्बे बनते है। बाद में ये धब्बे आकार में बढ़ जाते है। तथा इसके ऊपर संकेन्द्री वलय भी बन जाते है। फसल की वृद्धि के साथ–साथ रोग की उग्रता भी बढ़ती जाती है। इसके लक्षण तने व फलियों पर भी लम्बवत् काले भूरे रंग के धब्बे के रूप में बनते है। रोगी पौधों की फलियों में बनने वाले दानों का आकार छोटा व सिकुड़ा होता है व तेल की मात्रा भी घट जाती है।

jksx tud% यह रोग *अल्टरनेरिया ब्रैसिकी* एवं *अल्टरनेरिया ब्रैसिसीकोला* नामक कवकों से उत्पन्न होता है।

izca/ku% ग्रीष्म कालीन जुताई करे व रोगी फसल के अवशेषों को नष्ट करें। बिना सरसों वर्गीय फसल 2–3 वर्षो का फसल चक्र अपनायें। फसल की बुवाई अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े में करें। संतुलित उर्वरकों का 100:40:40 एन:. पी:. के. का प्रयोग करे व संस्तुति में नत्रजन उर्वरक का प्रयोग ना करे। रोग रोधी किस्मों का प्रयोग करे। खड़ी फसल में रोग का प्रकोप होने पर मेंन्कोजेब की 0.25 प्रतिशत या आइप्रोडियान की 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें। आवश्यकतानुससर 15 दिनों के अंतराल पर इन कवकनाशियों का 2–3 छिड़काव करें।

4- ruk lM+u jksx

y{k.k% यह रोग प्राय: तना व पत्तियों पर दिखाई पड़ता है। रोग की अनुकूल दशा में पुष्पगुच्छों व फलियों पर भी दिखाई देता है। रोग ग्रसित पौधे के भाग पर कवक की भूरे/सफेद रंग की वृद्धि

दिखाई पड़ती है। रोगी भाग सड़कर सूख जाता है। व पीला–मटमैला हो जाता है। तने को फाड़कर देखने पर उसमें काले रंग के कवक पिण्ड (*स्क्लेरोशिया*) पाये जाते है।

jksx tud% यह रोग *स्कलेरोटीनिया स्क्लेरोशियोरम* नामक कवक से होता है।

izcU/ku% स्वस्थ, साफ व प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें। दो–तीन वर्ष का फसल चक्र अपनायें। अगेती बुवाई (अक्टूबर का प्रथम पखवाड़ा) करें। रोग रोधी किस्में जैसे पी.सी.–17, जेसीटी–1 व पूसा स्वर्णिमा उगाये। खड़ी फसल पर आइप्रोडिआन की 0.2 प्रतिशत या बाविस्टन की 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करें।

5- pf.kZy vkflrk

y{k.k% पौधे के सभी वायवीय भाग रोगग्रसित होते हैं। प्रमुख लक्षण पत्तियों, तनों एवं फलियों पर सफेद चूर्णी धब्बों के रूप में दिखाई देता है। बाद में इन धब्बों पर कवक वृद्धि के साथ–साथ आकार में बढ़कर पूरे भाग को ढक लेते है। अति संक्रमित फलियों में दाने नहीं बनते और बन भी जाते हैं तो दाने सिकुड़ कर छोटे हो जाते हैं।

jksx tud% यह रोग *इरीसाइफी सिकोरेशियेरम* नामक कवक द्वारा उत्पन्न होता है।

izcU/ku% भूमि में पड़े रोगी पौधों को नष्ट कर दें। अगेती बुवाई करें। फसल पर सल्फेक्स 0.2 प्रतिशत सा कैराथेन 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करें।

6- ikS/k vknZ&xyu

y{k.k% यह रोग दो अवस्थाओं में पाया जाता है। (क) बीज उगने से पहले रोग लक्षण (ख) बीज के उगने बाद रोग लक्षण। पहली अवस्था में बीज का भूण्र भूमि के बाहर अंकुरित होने से पहले ही रोगग्रस्त होकर मर जाता है। दूसरी अवस्था में संक्रमण, पौद में भूमि के अंदर वाले भाग में तथा भूमि की सतह पर होता है। संक्रमित भाग (तना) सिकुड़ता जाता है। और पौध गिर जाती है।

jksx tud% यह रोग कई कवकों (*राइजोक्टोनिया, फाइटोफ्थोरा, फ्यूजेरियम, पिथियम, स्क्लेरोशियम* आदि) द्वारा होता है।

izcU/ku% बीज को कैप्टान की 2 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से उपचारित कर बोयें। *ट्राइकोडर्मा* स्पीसीज को गोबर की खाद में निवेशित कर खेत की आखिरी तैयारी के समय मिलाये। उपयुक्त नमी होने पर ही बुवाई करें व बीज दर की भी संस्तुति मात्रा ही प्रयोग करें। कटाई के बाद फसल के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।

7- vksjkscSadh

Yk{k.k% इस परजीवी की जड़ें (चूषकांग) परपोषी की जड़ों को वेधकर अपना पोषक तत्व प्राप्त करती हैं। परपोषी पौधों के चारो तरफ बहुत से परजीवी के तने मिट्टी को तोड़ते हुए निकलते दिखलाई देते हैं। परपोषी पौधों की वृद्धि रुक जाती है जिसके कारण पौधा छोटा रहकर कभी–कभी मर भी जाता है।

jksx tud% यह एक परपोषी *ओरोबैंकी इजिप्टिका* होता है।

izcU/ku% परजीवी को हस्त से उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए अगर बीज बन गये हों तो जलाकर नष्ट करें। लम्बे समय के फसल चक्र अपनाकर इसकी उग्रता को रोका जा सकता है।

फलों के महत्वपूर्ण रोग एवं उनका समेकित प्रबंधन

दिनेश सिंह
पादप रोगविज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110012

d- vke dk jksx

1- xqPNk jksx

y{k.k% आम में गुच्छा रोग नर्सरी के पौधों तथा पुराने बड़े पेड़ों में पाया जाता है। रोग के लक्षण मार्च–अप्रैल तथा जुलाई से अक्टूबर में ही दिखाई देते है। पौधों में सामान्यतः दो प्रकार की विकृतियाँ पायी जाती हैं: कायिक विकृति या गुच्छशीर्ष एवं पुष्पक्रम विकृति।

dkf;d fod`fr ;k xqPN'kh"kZ% इस प्रकार की विकृति नए एवं पुराने (बड़े) दोनों तरह के पेड़ों में पाई जाती है। रोग के लक्षण में द्वितीयक शाखाओं के सिरों के निकट स्थित कक्षस्थ कलिकाएं विकृत हो जाती हैं। शीर्षस्थ कलिका का क्षय हो जाता है तथा कक्षस्थ कलिकाओं में नई वृद्धि होती हैं। छोटी–छोटी पत्तियों एवं पोरियों वाली शाखाओं के सामूहिक निर्माण से टहनियों के सिरे पर एक गुच्छा–सा बन जाता है।

iq"iØe fod`fr dk y{k.k% बड़े पेड़ों पर मुख्य पुष्प–मंजरियों में बंध्य फूलों और पत्तियों से युक्त गुच्छे दिखाई देते हैं। पुष्प के सभी अंगों में वृद्धि होने से वह स्थूल हो जाता है। पुष्पक्रम के मुख्य अक्ष एवं शाखाओं का आकार छोटा रह जाता है, अतः मंजरियाँ गुच्छों के समान दिखाई देती हैं। पुष्प कलिकाएं वर्धी कलिकाओं में बदल जाती हैं, और इस प्रकार से बहुसंख्यक छोटी–छोटी पत्तियों एवं छोटी पोरियों वाली शाखाएं बन जाती हैं। संपूर्ण वृद्धि कूर्चिका के समान दिखाई देती है। प्रभावित फूलों के वर्तिकाग्र, वर्तिका व अण्डाशय मोटे हो जाते हैं। बाद में, विकृत पुष्पक्रम मुरझा कर काले रंग के गुच्छों के रूप में रोगग्रस्त पेड़ों पर अगले वर्ष तक दिखाई पड़ते हैं।

jksx tud% इस रोग के भिन्न–भिन्न कारक बताए गए हैं, जो इस प्रकार हैं:

कार्यिकीय कारक जैसे फूल निकलते समय नमी की अधिकता, कार्बोहाइड्रेट/नाइट्रोजन की मात्रा में असंतुलन, वृद्धि नियामकों का असंतुलन तथा मुख्य बृहत व सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रभाव, इस रोग के प्रमुख कारण बताया गया है। जबकि शुरू में कुछ कीट वैज्ञानिक इस रोग को इरियोफिड माइट, *एसिरिया मैंजीफेरी* से संबंधित रोग मानते थे। कुछ वैज्ञानिकों के विचार से यह एक विषाणु विकृति रोग है, जिन्होंने रोगग्रस्त पौधों से इस रोग का संचरण स्वस्थ पौधों में कलम बांध कर चश्मा चढाकर (बडिंग) किया था। हाल ही में इस रोग की खोज फाइटोप्लाज़्मा के रुप में की गई है। अधिकांश वैज्ञानिकों द्वारा इस विकृति रोग का संबंध कवक से होना बताया है। मुख्य कवक *फ्यूजेरियम मोनिलीफोर्मी* उपजाति *सबग्लूटिनैन्स* हैं। यह रोग कवक और चिचड़ी के संयुक्त प्रभाव से होता है। कवक के बीजाणु, जो चिंचड़ी के शरीर पर चिपके होते हैं, चिंचड़ी के स्थानांतरण के साथ–साथ पेड़ के विभिन्न भागों पर

वितरित हो जाते है। चिंचड़ी के आक्रमण से अथवा किन्हीं अन्य कारणों से पेड़ पर हुए घावों के द्वारा यह कवक पेड़ों पर संक्रमण पैदा करके रोग पैदा करता है।

नए पौधे वर्धी कार्यिकीय अवस्था से अधिक प्रभावित होते हैं जब कि बड़े पेड़ों पर पुष्पक्रम विकृति का प्रकोप अधिक होता है। रोगजनक विकृति पौधे पर उत्तरजीवी के रूप में बना रहता हैं। प्रायः रोग का फैलाव रोगी पौधों के संवर्धन एवं वितरण से होता है। उत्तरी–पश्चिम क्षेत्रों में जहाँ दिसम्बर–जनवरी के माह में तापमान 10–15^0 सेल्सियस के बीच रहता है, वहां रोग का प्रकोप अधिक रहता है। तापमान 15–20^0 सेल्सियस के बीच में होने वाले रोग के लक्षण छुटपुट रूप में मिलते हैं। औसतन तापमान 25^0 सेल्सियस से अधिक होने पर रोग के लक्षण नहीं पाए जाते हैं। रोग का सबसे अधिक पुष्पक्रम विकृति का प्रभाव आम की दशहरी, मालदा, चौंसा और लंगड़ा आदि किस्मों में अधिक होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन करना कठिन होता है, क्योंकि इसके रोग कारक के विषय में भी स्पष्ट मत नहीं है। फिर भी विभिन्न वैज्ञानिकों के शोध के आधार पर निम्नलिखित उपायों द्वारा रोग की तीव्रता को कम किया जा सकता हैः प्रमाणित पौद या रोगरहित पौधशाला से प्राप्त करें तथा स्वस्थ पौधों की पौध को ही नए बाग में लगाएं। रोगी भागों को संक्रमण स्थल से कम से कम 30 सें.मी. नीचे से काटकर नष्ट कर दें। पादप वृद्धि नियामक के छिड़काव से प्रभावशाली परिणाम पाए गए हैं, जैसेः

(अ) नैफ्थैलीन एसिटिक अम्ल, 20–25 ग्राम प्रति 100 लिटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। पहला छिड़काव अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में करें तथा आवश्यकतानुसार लगभग 4 छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करने से लाभ होता है।

(ब) जिबरेलिक अम्ल, 5 ग्राम प्रति 100 लिटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। यह फूल में निकलने वाले पुष्प गुच्छों के निकलने में विलंब कर देता है, जिससे फूलों की संख्या में बढ़ोतरी तथा पराग कणों की सजीवता बढ़ जाती है।

(स) पेक्लोब्यूट्राजोल 4 मि. लि. दवा प्रति पेड़ के हिसाब से छिड़काव अक्टूबर के प्रथम सप्ताह या फूल की कलियाँ बनने के पहले करने से रोग विकृति में कमी होती हैं तथा स्वस्थ फूलों की संख्या बढ़ जाती है जिससे उपज में वृद्धि होती है।

पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट 0.5 प्रतिशत का दो छिड़काव पहले अक्टूबर में तथा दूसरा फूल आने के पहले लाभकारी पाया गया है। कीटनाशी दवा जैसे डायाजिनॉन, मेथिल–ओ–डिमेटॉन, मोनोक्रोटोफॉस, फॉस्फामिडॉन, 0.03–0.1 प्रतिशत का घोल का छिड़काव करने से माइट का नियंत्रण कम किया जा सकता है। कवकनाशी दवा जैसे कैप्टॉन (0.2 प्रतिशत), कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), थीरम (0.2 प्रतिशत), या मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत) का घोल बना कर पेड़ों पर छिड़काव करें। बागों में उचित मात्रा में नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस युक्त उर्वरक देने से लाभ होता है। जाड़े के मौसम में, आम के पेड़ों को चारों तरफ सफेद पॉलीथीन की चादर (करीब 400 गेज मोटी) से ढक देना चाहिए। ढके बागों का तापमान, सामान्य तापमान से अधिक होता है, जिससे फूल में पुष्पगुच्छ निकलते हैं और उसकी बढ़वार भी तेजी से होने के कारण फल जल्दी लगते हैं तथा रोग में कमी आती है। यह विधि काफी प्रभावशाली है।

2- ';keo.k

y{k.k% इस रोग के लक्षण आम के विभिन्न भागों में अलग अलग लक्षण जैसे मंजरी अंगमारी, पर्णचित्ति एवं फल विगलन पाया जाता है। पत्तियों पर भूरे या काले रंग के गोल या अनियमित आकार के धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में, ये धब्बे आपस में मिलकर बड़ा क्षेत्र बनाते हैं और इससे पत्ती का अधिकांश भाग प्रभावित होता है। पत्तियाँ कटी–फटी दिखाई देती हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर, सभी पत्तियाँ पीली पड़कर गिर जाती हैं। हरी टहनियों पर लम्बे एवं हरे–भूरे रंग के धब्बे दिखायी देते है। ये धब्बे टहनियों को चारों तरफ से घेर लेते हैं जिससे ऊपरी हिस्सा सूखने लगता है तथा ऊपरी हिस्से से शुरू होकर नीचे की तरफ बढ़ता जाता है जिसे शीर्षरम्भी–क्षय रोग कहते हैं। कच्चे फलों पर काले धब्बे दिखायी देते हैं। धब्बों के नीचे का गूदा फट जाता है एवं रोगी फल पेड़ से नीचे गिर जाते हैं। पके हुए फलों पर काले, गोल या अनियमित आकार के कुछ धंसे हुए धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में ये धब्बे फैलकर आम के पूरे छिलके पर फैल जाते हैं। रोग के लक्षण प्रायः फल के ढेंपी के पास से शुरू होते हैं और नीचे की ओर लकीरों के समान फैल जाते हैं।

jksxtud% यह रोग *कोलेटोट्राइकम ग्लोओस्पोरीआइड्स* नामक कवक द्वारा होता है।

icU/ku% बाग के जमीन पर गिरे–पड़े सभी रोगी पौधों के अवशेषों जैसे पत्तियाँ, टहनियाँ एवं फलों को इकट्ठा करके नष्ट करें। पेड़ों के ऊपर की रोगी टहनियों की छंटाई, ताँबा युक्त कवकनाशी दवाओं जैसे बोर्डो मिक्सचर या कॉपर आक्सीक्लोराइड का छिड़काव पेड़ों पर करें। वृक्षों को उचित मात्रा में उर्वरक दें तथा समय–समय पर सिंचाई करें। जिन क्षेत्रों में मौसम रोग के अधिक अनुकूल होता है, वहाँ पेड़ और बाग की सफाई तथा कवकनाशी रसायनों के सामयिक छिड़काव पर विशेष ध्यान दें। कवकनाशी दवाईयाँ जैसे बोर्डो मिश्रण (4:4:50), मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत), जिनेब (0.25 प्रतिशत), कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत), कार्बोन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव निम्न प्रकार से किया जा सकता है:

- पौधशाला में छोटे पौधों पर इन कवकनाशी दवाओं को फरवरी, अप्रैल और सितम्बर माह में छिड़काव करें।
- बड़े पेड़ों पर, ये छिड़काव जनवरी माह से जून–जुलाई तक करें। पहला छिड़काव मंजरियों के आने के पहले और शेष फल लगने पर करें। शुरू मे दो छिड़काव में एक सप्ताह और बाद के छिड़काव में 15 दिन का अंतर पर आवश्यकतानुसार करें।

फलों के संचयन, परिवहन एवं भंडारण के समय फलों पर किसी प्रकार की खरोंच या घाव न होने पाए। फलों का भंडारण कम आर्द्रता तथा ठीक तापमान वाले हवादार कमरों में करें। भंडारण के पूर्व फलों को 50^0 सेल्सियस तापमान पर गर्म पानी से 15 मिनट तक उपचारित करने से रोग का प्रभाव कम हो जाता है।

3- pf.kZy vkflrk

y{k.k% पुष्पक्रम एवं नई पत्तियों पर सफेद या कभी–कभी धूसर रंग लिए चूर्ण दिखाई देती है, जिसमें कवक के बीजाणु एवं कवकजाल होते हैं। रोग का आक्रमण पुष्पक्रम के ऊपरी हिस्से से प्रारम्भ होकर

नीचे की तरफ पुष्प, अक्ष, नई पत्तियों एवं पतली शाखाओं पर फैलता है। पुष्पक्रम का रोगग्रस्त भाग बुरी तरह से क्षतिग्रस्त होकर नीचे गिर जाता है, जिसके कारण फलों की संख्या में या तो भारी कमी आ जाती है या फल लगते ही नहीं।

jkx tud% यह रोग *ऑइडियम मेंजीफेरी* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% बाग की सफाई का विशेष ध्यान दें तथा संक्रमित पौधों के अवशेषों को बाग से निकाल कर नष्ट कर दें। पुष्पक्रमों पर गंधक के महीन चूर्ण (200–300 मेष) का बुरकाव 2–3 बार करें। पहला बुरकाव फूल खिलने से पहले तथा उसके दो सप्ताह के अंतराल पर करें। यह बुरकाव प्रातः काल, पत्तियों एवं टहनियों पर ओस की उपस्थिति में करें। कवकनाशी दवाइयों जैसे सल्फेक्स (0.2 प्रतिशत), कैराथन (0.06 प्रतिशत), कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), बेलेटान या सैप्राल (0.1 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर, पेड़ों पर 15 दिन के अंतराल पर 2–3 छिड़काव करें। मैदानी क्षेत्र में पहला छिड़काव रोग के लक्षण जनवरी–फरवरी में या फूल खिलते समय दिखायी देने पर करें। शुरू के छिड़काव सल्फेक्स से करें तथा बाद के छिड़कावों में जब वातावरण का औसत तापमान 30^0 सेल्सियस से अधिक हो तो इस दवा का प्रयोग न करके, किसी अन्य कवकनाशी का प्रयोग करें।

4- 'kh"kjHkh

y{k.k% इस रोग का संक्रमण पेड़ में किसी भी अवस्था में अक्टूबर–नवम्बर में स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। इस रोग के मुख्य लक्षण जैसे बड़े पेड़ों की टहनियों एवं शाखाओं का झुलसना, उनकी सभी पत्तियों का गिर जाना तथा संपूर्ण पेड़ का झुलसना आदि हैं। टहनियों का छिलका उसके शीर्षाग्र के कुछ नीचे से गहरे रंग का हो जाता है तथा नए प्ररोह नीचे से झुलसने लगते हैं। पत्ती भूरी हो जाती है तथा उसके किनारे ऊपर की ओर मुड़ जाते हैं, जिससे इस भाग के अंदर सभी पत्तियाँ गिर जाती हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर टहनियों का भीतरी हिस्सा भूरा हो जाता है। संक्रमित भाग से गोंदीय स्राव निकलता है। रोग का संक्रमण कलम बांधे हुए जोड़ों पर होने से नए पौधे मर जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *लैसिओडिप्लोडिया थियोब्रोमी* नामक कवक के द्वारा होता है।

ic/ku% रोगग्रस्त टहनियों की काट–छांट रोगी स्थान के लगभग 7 से 8 से.मी. नीचे से करें तथा कटे हुए स्थानों पर कवकनाशी दवा का लेप करें। इसके बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का घोल बनाकर छिड़काव करें। नये पौधे तैयार करने के लिए कलम बाँधने के लिए कलम का चुनाव स्वस्थ पेड़ों से करे। कलम बांधे हुए पौधों को खुले व सूखे वातावरण में रखें।

5- thok.kt dhdj

y{k.k% पत्तियों, पत्ती के डंठलों, तनों, टहनियों, शाखाअें तथा फलों पर जलीय धब्बे दिखायी देते हैं। पत्ती के शीर्ष भाग पर एवं शिराओं के बीच सूक्ष्म अनियमित या कोणीय, जलीय धब्बे दिखाई देते हैं। बाद, में ये धब्बे गहरे भूरे रंग के तथा 4 मि.मी. व्यास के हो जाते हैं। इन धब्बों के समूह के चारों तरफ पीला प्रभामंडल दिखाई देता है। बाद में, ये धब्बे खुरदुरे एवं कुछ उठे हुए दिखाई देते हैं। कई धब्बों के आपस में मिलने से गहरे भूरे रंग के अनियमित आकार के ऊतकक्षयी कैंकर क्षेत्र बन जाते हैं। शाखाओं, टहनियों एवं तनों पर जलीय, फूले हुए गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखायी देते हैं जिनमें से

गोंदीय स्राव भी होता है। बाद में ये धब्बे खुरदरे होकर कैंकर का रूप ले लेते हैं। फलों का छिलका फट जाता है। रोग की तीव्रता में अधिकांश फल गिर जाते हैं। इस प्रकार के लक्षण अप्रैल माह के अंतिम सप्ताह से दिखाई पड़ते हैं।

jkxtud% यह रोग *जैन्थोमोनास सिटी पैथोवार मैंजिफेरी इंडिकी* नामक जीवाणु द्वारा होता है।

jkxpØ% यह जीवाणु रोगी टहनियों एवं पत्तियों पर उत्तरजीवी बना रहता है। यह रोगजनक नवम्बर से मार्च तक सुषुप्तावस्था में रहता है तथा वर्षा ऋतु के समय (जुलाई से अगस्त) उग्र अवस्था में आ जाता है। वर्षा के बाद, पत्तियों व टहनियों पर नया संक्रमण होता है। इस रोग के विकास के लिए 28 से 30° सेल्सियस तापमान तथा 90 प्रतिशत आपेक्षित आर्द्रता अनुकूल होती हैं। इस रोग का फैलाव हवा एवं वर्षा की बौछार द्वारा होता है। रोग संक्रमण के लगभग 12–14 दिन के बाद पत्ती एवं फल पर रोग लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

ic/ku% बागों का नियमित निरीक्षण करते रहें। संक्रमित पत्तियों, टहनियों, शाखाओं एवं फलों को बाग से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। पेड़ तथा बागों की स्वच्छता का विशेष ध्यान रखें तथा स्वस्थ एवं प्रमाणित पौध को ही लगाएं। रोग के लक्षण दिखाई पड़ने पर, कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का घोल बना कर पेड़ों पर छिड़काव करें। इसके बाद, 15 दिन के अंतराल पर कुल 5 छिड़काव करें। छिड़काव के घोल में स्टीकर सैण्डोबिट, ट्राइटोन 0.1 प्रतिशत के हिसाब से अवश्य मिलाएं। ताम्रयुक्त कवकनाशी दवा जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) या स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (200–300 पी.पी.एम.) 15–20 दिन के अंतराल पर कुल 5–6 छिड़काव करें। रोग प्रतिरोधी किस्में जैसे जहाँगीर, फजली और स्वर्ण रेखा आदि के बाग लगाएं।

6- dkyk fljk ;k Ård{k;

y{k.k% रोग के लक्षण अप्रैल–मई में जब फलों का आकार लगभग 1 सें.मी. का हो जाता है, तो दिखाई पड़ने लगता हैं। फल के कोणी सिरे पर ऊतकक्षयी धब्बे दिखायी देते हैं। ये धब्बे छोटे और पाण्डुरित होते हैं। बाद में वे धीरे–धीरे फैलते हैं तथा काले रंग के होकर पूरे सिरे को ढक लेते हैं, जिसके फलस्वरूप फल का सिरा चपटा व कुछ नुकीला हो जाता है। संक्रमित भाग का छिलका सख्त एवं धंसा हुआ होता है। फल के अंदर के ऊतक मृदु हो जाते है। उनमें मृतजीवी जीवाणुओं के आक्रमण होने से, दबाने पर गहरे भूरे रंग का द्रव निकलता है।

jkxtud% यह रोग कवक या जीवाणु से न होकर, ईट के भट्ठों से निकलने वाले धुएं में विद्यमान जहरीली गैस जैसे सल्फर डाइऑक्साइड, एथिलीन, एवं कार्बन मोनोऑक्साइड के कारण होता है। इन गैसों के कारण वातावरण दूषित हो जाता है। इनमें से सल्फर डाइऑक्साइड गैस सबसे अधिक नुकसानदायक होती है।

रोग की व्यापकता हवा के रूख और गति पर निर्भर करती है। उत्तर–दक्षिण की तुलना में पूर्व–पश्चिम दिशा में बने ईंट के भट्ठों से निकलने वाली जहरीली गैस काफी हानिकारक होती है। फल विकास के समय पश्चिमी हवा के चलने से रोग की व्यापकता बढ़ जाती है। ईंट के भटटों के काफी नजदीक वाले बागों की पत्तियाँ ऐंठकर अधोकुंचित हो जाती हैं।

iczca/ku% ईंट एवं चूने के भट्टों को बागानों से कम से कम 1.5 से 2.5 कि.मी. की दूरी पर लगाएं। ईंट के भट्ठों में कम से कम 15–18 मीटर ऊँची चिमनियों का प्रयोग करें। यदि संभव हो, भट्टों को मार्च के प्रथम सप्ताह से मई के तीसरे सप्ताह तक बंद कर दें। पेड़ों पर सुहागा या कॉस्टिक सोडा 6–8 कि.ग्रा. प्रति हजार लिटर पानी में घोल बनाकर लगभग तीन छिड़काव करें। पहला छिड़काव फूल आने के पूर्व, दूसरा छिड़काव फूल खिलते समय तथा तीसरा छिड़काव फल लगने के समय करें।

[k- dsyk ds jksx

1- flxkVksdk i.kZ fpfÙk

y{k.k% रोग के लक्षण पौधे में ऊपर से तीसरी या चौथी पत्तियों पर सूक्ष्म चित्तियां दिखाई देती हैं। ये चित्तियाँ हल्की पीली धारियों के रूप में, 1–10 मि.मी. तथा 0.5–1.0 मि.मी. चौड़ी तथा पर्ण शिराओं के समानांतर होती हैं। बाद में ये धारियाँ चौड़ाई में फैलकर दीर्घवृताकार, भूरे धब्बे में परिवर्तित हो जाती हैं। इन धब्बों का मध्य भाग सूखकर हल्के धूसर और गहरे भूरे या काले रंग का किनारा होता है। परिपक्व धब्बा चक्षु बिन्दु के समान हो जाता है। रोगी पौधा झुलस जाता है। रोग की व्यापकता बढ़ने पर, मध्य शिरा एवं पर्णवृंत सड़ जाते हैं, जिससे पत्तियाँ सूखकर लटक जाती हैं। पत्ती का अधिकांश भाग या पूरी पत्ती झुलस जाने पर फलपुंज तथा फल का आकार छोटा रह जाता है तथा फल पकते नहीं है।

jksx tud% यह रोग *सर्कोस्पोरा म्यूसी* नामक कवक के द्वारा होता है।

iczca/ku% बाग की स्वच्छता पर विशेष ध्यान रखें। रोगी पत्तियों, तथा खरपतवारों को बाग से निकाल कर नष्ट कर दें। बाग में जल–निकास का उचित प्रबंध रखें। पौधों के लिए संतुलित उर्वरकों का समय पर प्रयोग करें। रोग रहित स्तंभ या भूस्तारी का प्रयोग नये बाग लगाने के लिए करें। रोपने के पूर्व, पौधों को कापर आक्सीक्लोराइउ (0.05 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (0.05 प्रतिशत), के घोल में डुबोकर उपचारित करें। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत), या जिनेब, या क्लोरोथैलोनिल (0.2 प्रतिशत) या मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव 2–4 सप्ताह के अंतराल पर करें। ट्राइटोन या सैण्डोविट एक मि.लि. प्रति लिटर दवा के घोल के हिसाब से मिला लें।

2- ¶;wtsfj;e Xykfu ;k iukek

y{k.k% पौधे के नीचे की पुरानी पत्तियों के पर्णवृंत पर, हल्की पीली धारियाँ दिखाई देती हैं तथा पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं। पर्णवृंत के टूटने से पत्तियाँ लटक जाती हैं। जो बाद में सूख जाती है। रोग के पहली बार लक्षण दिखायी देने के 5–6 सप्ताह अंदर ही पौधे की सभी पत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं और केवल मूल तना खड़ा रह जाता है। संक्रमित पत्ती, पर्णवृंत या तने के भीतरी भाग हल्के पीले या गहरे रंग के हो जाते हैं, जो इस रोग की विशेष पहचान है। कही–कहीं इनका रंग गहरा लाल या बैंगनी होता है। तने के आधार पर दरारें बन जाती हैं। प्रकंद को काटकर देखने पर उसका आंतरिक भाग पीला, लाल या भूरा दिखाई देता है। रोग प्रकंद की जड़ें काली पड़कर सड़ जाती है। मूल पर्णवृंत तथा तने के अंदर से सड़ी हुई मछली जैसी दुर्गन्ध आने लगती है।

jksx tud% यह रोग *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* उपजाति *क्यूबेन्सी* नामक कवक के द्वारा होता है।

ic/ku% केले के बाग के लिए उदासीन या क्षारीय मृदा उचित होती है। भूमि में पानी के निकास का प्रबंधन अच्छा होना चाहिए। बाग में रोग के लक्षण दिखाई देने पर संक्रमित पेड़ को जड़ सहित उखाड़कर नष्ट कर दें। गड्ढे में से जड़ के टुकड़ों को भी चुनकर नष्ट कर दें। इसके बाद उस गड्ढे में चूना डालकर ढक दें तथा ऐसे स्थान पर कुछ समय तक केले का पौधा न लगाएं। रोगी पौधों को काटने के लिए जो यंत्र प्रयोग करें उन्हें आग, स्प्रिट या फिनायल के घोल से धो लें। कृषि कार्य करते समय जड़ों व प्रकन्दों को घाव व खरोंचों से बचाएं। बाग लगाने के लिए रोगरहित अंतःभूसतारी का प्रयोग करें। लगाने से पूर्व कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) घोल डुबोकर उपचारित करें। इसी दवा के घोल का पौधा लगाने के 6 माह बाद जड़ों के पास छिड़काव करें। रोगरोधी प्रजातियाँ जैसे बसराई, केवेन्डिश, पूवन, मंगोली पेलाडिन, राजाबले तथा वामनकेली के बाग लगाएं। एक्टिनोमाइसीस जैव नियंत्रक रोग की रोकथाम में प्रभावी पाया गया है।

3- ';keo.k ;k Qy foxyu

y{k.k% श्यामव्रण रोग का संक्रमण कच्चे फलों में पौधों पर ही हो जाता है, लेकिन रोग के लक्षण पके फलों पर परिवहन के समय या भंडारण के समय होता है। पकते हुए फलों के छिलके पर बिखरे हुए छोटे–छोटे, गोल, भूरे या काले रंग के कुछ धंसे हुए धब्बे दिखाई देते हैं। ये धब्बे आपस में मिलकर फल की छाल पर बड़े धब्बे बना देते हैं। रोगी फल का शीर्ष या नीचे का हिस्सा सड़ने लगता है। नम वातावरण में संक्रमित स्थानों पर रोग कारक के छोटे–छोटे बिन्दु आकार के गुलाबी या नारंगी रंग के समूहों में फलनकाय दिखाई देती है जिसे एसरबुलस कहते हैं। अविकसित फल समय से पहले ही पक जाते हैं, एवं काले पड़ जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *ग्लोओस्पोरियम म्यूसेरम* तथा *कोलेटोट्राइकम म्यूसी* नामक कवकों द्वारा होता है।

ic/ku% केले के स्तंभ पर जब फलों का गुच्छा पूरा खुल जाए तब उसका आगे का फूलों वाला भाग काट दें। संक्रमित पौधों के अवशेषों को बाग से निकालकर नष्ट कर दें। कवकनाशी जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) या मैंकोजब (0.25 प्रतिशत) के घोल में सैण्डोविट या ट्राइटोन (0.1 प्रतिशत) को मिलाकर पौधों पर छिड़काव फल लगते हैं तथा वर्षा ऋतु के पहले 20–30 दिन के अंतराल पर करें। फलों को भंडारण के समय विगलन से बचाने के लिए फलों की तुड़ाई उचित समय पर करें। परिवहन के समय फलों पर किसी प्रकार घाव व खरोंच नहीं लगने दें। फलों को अधिक तापमान पर अधिक समय तक भण्डारण न करें। फलों के भण्डारण के लिए भंडार का तापमान 13–14^{0} सेल्सियस होना चाहिए। फलों को भंडारण से पूर्व कवकनाशी जैसे कार्बेन्डाजिम, थायोबेन्डाजोल, या थायोफिनेट–मिथेल (0.01–0.04 प्रतिशत) के घोल में एक से दो मिनट तक डुबो कर उपचारित करें। रोग प्रतिरोधी प्रजातियां जैसे कोथिया या मुथिया को लगाने पर रोग कम लगता है।

4- xqPN 'kh"kZ

y{k.k% यह रोग पौधे की किसी भी अवस्था में हो सकता है। रोग का आक्रमण पौधे की शुरू की अवस्था में, रोगी पौधे की पत्तियाँ पौधे के शीर्ष पर एक गुच्छे के रूप में दिखाई देती हैं। पौधे बौने तथा पत्तियाँ स्वस्थ पौधों की अपेक्षा सीधी होती हैं। रोग की व्यापकता बढ़ने पर, पौधे की बढ़वार रुकने से

पौधे काफी छोटे रह जाते हैं तथा उनमें फल नहीं लगते हैं। बड़े पौधों पर द्वितीय संक्रमण होने पर, रोग के लक्षण पत्तियों पर दिखायी देते हैं। पर्ण पटल पर हरी पर्ण–धरियाँ बन जाती हैं। नई निकलती या निकली गोल लिपटी हुई पत्तियों पर पीताभ श्वेत धारियां दिखायी देती हैं।

jkx tud% यह रोग बंची टाप वायरस के द्वारा होता है।

i cU/ku% बाग लगाने के लिए स्वस्थ तथा प्रमाणित अंतः भूस्तारियों का ही प्रयोग करें। पादप संगरोध कानून का कड़ाई से पालन करें। इसके अंतर्गत एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में केले के वर्धी भाग को ले जाने एवं ले आने पर प्रतिबंध होना चाहिए। संक्रमित पौधों में जैसे ही विषाणु के लक्षण दिखाई दें, तुरंत पौधे को जड़ समेत निकाल कर जला दें। कीटनाशी दवाईयाँ जैसे पैराथियान, मैलाथियान या इण्डोसल्फॉन (0.1 से 0.15 प्रतिशत) का छिड़काव करें। दानेदार कीटनाशी जैसे लिन्डेन डाइसिस्टान, डाइमेथोएट (रोगोर) या फोरेट, 25 ग्राम प्रति पौधे के हिसाब से जमीन की सतह पर तने के पास और पत्तियों के अक्ष में दें। सर्वांगी कीटनाशी दवा जैसे मोनोक्रोटोफॉस या मेथिल डिमोटोन (0.05– 0.2 मि.लि.) का पौधे में इंजेक्शन लगाएं। यह क्रिया 3 से 4 सप्ताह के अंतराल पर करते रहें।

x- uhcw oxhZ; Qyksa ds jksx

1- ';keo.k] i'pekjh] 'kh"kkZjaHkh

y{k.k% नींबू वर्गीय फलों में इस रोग के लक्षण मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं, पष्चमारी या शीर्षारंभी क्षय एवं श्यामव्रण पश्चमारी अवस्था में नई या पुरानी टहनियों के शीर्षाग्र भाग की पत्तियाँ गिर जाती है तथा टहनियां ऊपर से नीचे की ओर सूखने लगती हैं। सूखे हुए भाग राख के रंग का हो जाते है। रोगी स्थानों पर काफी संख्या में छोटे, काले बिन्दु के समान बिखरे हुए कवक की बढ़वार (एसरवुलस) दिखाई देती है। फलों पर लाल भूरे धब्बे बनते हैं। रोगी फल का गूदा सड़ने लगता है। ये धब्बे फल के किसी भी भाग पर उत्पन्न हो सकते हैं, लेकिन फल के ढेंपी के पास अधिक बनते हैं और नीचे की ओर फैलते हैं।

jkx tud% यह रोग *कोलेटोट्राइकम ग्लोओस्पोरीऑइडीज* नामक कवक द्वारा होता है।

i cU/ku% पौधों के स्वास्थ्य तथा सुदृढ़ता बनाये रखने के लिए बागों में उचित कर्षण क्रियाओं तथा रोग प्रबंधन की क्रियाओं को अपनायें। रोगी टहनियों को वर्षा ऋतु से पहले काटकर जला दें। बाग में गिरी टहनियों, पत्तियों और सूखे फलों को भी इकट्ठा करके जला दें। कटाई छंटाई के बाद कटे हुए भाग पर कवकनाशी पेस्ट जैसे बोर्डो पेस्ट लगायें। गर्मी और वर्षा ऋतु में बोर्डो मिश्रण (5:5:50), कॉपर आक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत), मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर पेड़ों पर छिड़काव करें। कवकनाशी का छिड़काव सितम्बर के प्रथम सप्ताह से शुरू करके, 15 दिन के अंतराल पर कुल तीन छिड़काव करने से फल का गिरना बंद हो जाता है।

2- xksnkfrZ

y{k.k% इस रोग के लक्षण पौधे के सभी भागों जैसे तना, जड़, पत्तियों, शाखाएं तथा फूलों पर दिखायी देता है। यह रोग नर्सरी पौधे के साथ–साथ बड़े पौधों में भी लगता है। संक्रमण तने में भूमि की सतह से शुरू होता है जो जलीय क्षेत्र दिखाई देता है जिससे बाद में एक भूरा गोंदीय पदार्थ निकलता है।

तने के छिलके पर स्पष्ट कठोर गोंद का भूरा धब्बा दिखाई देता है। गंभीर अवस्था में तने पर चारों तरफ से धंसा हुआ घेरा बना लेता है। शाखाओं पर घेरा होने पर शाखाएं सूख जाती है, पत्तियां गिर जाती हैं जिससे फलों की उपज कम हो जाती है। फाइटोफ़्थोरा से भोजनवाली जड़ें ज्यादा प्रभावित होती है। संक्रमित पौधों में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप पत्तियां हल्की पीली तथा मध्य शिरा भी पीली हो जाती है। रोग सुग्राही मूलवृंत की जड़ें कालर क्षेत्र में अधिक संक्रमित होती हैं और प्रायः मुख्य तना के छिलके तक फैल जाती हैं। फलों पर भूरे रंग की सड़न दिखाई पड़ती है। संक्रमित गिरे हुए फल, सड़े हुए गंध के लक्षण देते हैं।

jkx tud% यह रोग *फाइटोफ्थोरा निकोटियाना* या *फा. पाल्मीवोरा* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% बगीचा लगाने के लिए अच्छी जलनिकास वाली भूमि का चुनाव करें। बीज शैया, नर्सरी तथा पौधे के लगने की जगह को वेपाम (0.91 प्रतिशत) से उपचारित करें। कलिकायन तने पर 30–45 से.मी. ऊपर करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में, बगीचे से खरपतवार को निकाल कर नष्ट कर दें। कोमल प्ररोहों को मुख्य तने से निकाल देना चाहिए। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा बगीचे में पानी अधिक देर तक खड़ा न रहने दें। मुख्य तनों पर कम से कम जमीन की सतह से 60 से.मी. ऊपर साल में एक बार वर्षा से पहले बोर्डो या चौबटिया पेस्ट का लेप लगाएं। बोर्डो मिश्रण (1 प्रतिशत) घोल से या जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) के साथ छिड़काव करने पर फल विगलन को कम किया जा सकता है। क्लोरोथैलेनिक (0.2 प्रतिशत) या कॉपर आक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का छिड़काव करने से पत्तियों का गिरना या विगलन को नियंत्रित किया जा सकता है। मेटालेक्सिल तथा मैन्कोज़ेब (0.25 प्रतिशत) की दर से पेड़ों पर छिड़काव करने से भी रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। मेंड के चारों तरफ थाले में मेटालेक्सिल के साथ *ट्राइकोडरमा हारजियेनम* का प्रयोग करें। स्वीट औरेंज के लिए रंगपुर नींबू और क्लीयोपैट्रा मैंडरीन को मूलवृंत के रूप में प्रयोग करें, क्योंकि ये दोनों रोग प्रतिरोधी मूलवृंत हैं।

3- d:dj

y{k.k% यह रोग पौधे के सभी भागों जैसे पत्तियों, तना, फलों एवं कांटों पर पाया जाता है। पत्तियों पर उठे हुए भूरे रंग के धब्बे चारों तरफ से पीले रंग के घेरे से घिरे होते हैं। नई पत्तियां इस रोग के लिए अधिक उत्तरदायी होती हैं, तनों पर भी इस रोग के लक्षण पाए जाते हैं। फलों पर ये धब्बे स्पष्ट रूप से स्पंज की तरह होते हैं। कैन्कर में ये धब्बे छिलके तक ही सीमित होते हैं। यह रोग मनुष्यों को नुकसान नहीं पहुंचाता है।

jkx tud% यह रोग *जैंथोमोनास सीट्री* उपजाति *सीट्री* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% मानसून आने से पहले सभी संक्रमित टहनियों को काटकर पेड़ से अलग कर दें तथा कटी हुई टहनियों के कटे हुए भाग पर वोर्डो मिक्चर का लेप लगायें। पौधे रोग सहित नर्सरी से लें। नींबू पौधे की नर्सरी, कैंकर संक्रमित बगीचे के पास न उगाएं। 7 किलोग्राम नीम की खली को 140 लिटर पानी में घोलकर 15 दिन के अंतराल पर दो या तीन छिड़काव प्रतिवर्ष करें। 100 मि.ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसीन सल्फेट तथा 1 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड को एक लिटर पानी की दर से घोल बनाकर 15 दिन

के अंतराल पर छिड़काव करने से रोग को फैलने से रोका जा सकता हैं। टैंजरिन किंग, मैंडरीन और सतसुमा की तरह इस रोग के प्रति रोग प्रतिरोधी हैं।

4- gfjrek jkx

y{k.k% इस रोग में, पत्तियों की मध्य शिरा पीली पड़ जाती है। जब पौधा प्रथम बार प्रभावित होता है तो पत्तियों की शिराएं हरी हो जाती हैं तथा पर्णपटल, हरित चितकबरी हो जाती हैं। इस रोग से प्रभावित पौधे छोटे, सीधे तथा जिंक एवं लोहे की कमी के लक्षण के समान दिखाई देते हैं। इस रोग के कारण, पौधे की जड़ें खराब हो जाती हैं तथा जड़ों की वृद्धि रुक जाती है, जिसके परिणामस्वरूप झकड़ा जड़ें अत्यधिक कम हो जाती हैं। फल का आकार छोटा तथा फलों में रस की मात्रा कम हो जाती है।

jkx tud% यह रोग *कैन्डिडेटस लिबेरोबेक्टर एसियाटीकस* द्वारा होता है तथा *सिट्रस सिल्ला* नामक कीट द्वारा यह रोग स्थानान्तरित होता है।

ic/ku% रोग के फैलने से रोकने के लिए पादप नियमन का कड़ाई से पालन करना चाहिए। संक्रमित पौधे से कली का चुनाव कलम बांधने के लिए प्रयोग न करें। नर्सरी पौधे को ऐसे जगह पर तैयार करें जहां पर यह रोग नहीं हो। गर्म वाष्प या गर्म जल (49 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 50 मिनट के लिए) से उपचारित करने पर रोग रहित नर्सरी पौधे प्राप्त किए जा सकते हैं। जैवरोधी दवाएं जैसे लीडरमाइसीन या पेनिसोबलिन को वेविस्टीन (500 पीपीएम) के साथ छिड़काव करने पर रोग के प्रभाव को कम किया जा सकता है। कली छड़ों को 1000 पी.पी.एम. लीडरमाइसीन या स्ट्रेप्टोमाइसीन या बीपी–10एल का 50 पी.पी.एम., में डुबाने से पौधा पूरी तरह से स्वस्थ हो जाता है। यह रोग मुख्य रूप से कीट द्वारा फैलता है। उसको रोकने के लिए कीटनाशी दवाएं जैसे डीमेथोएट (0.03 प्रतिशत), मिथाइल डेमोटान (0.012 प्रतिशत), फास्फोमिडान (0.085 प्रतिशत) या मोनोक्रोटोफास (0.02 प्रतिशत) एक महीने के अंतराल से पेड़ों पर छिड़काव करें।

5- fVfLV tk jkx

y{k.k% इस रोग के मुख्य लक्षण रोगग्राही मूलवृंत एवं सांकुर में पूर्ण या कुछ भाग की नई वृद्धि को रोक देता है और पत्तियां विभिन्न तरह की पीली शेड्स में बदल जाती हैं। पत्तियां लम्बाई में ऊपर की तरफ मुड़ जाती हैं। बाद में, इस रोग से प्रभावित पत्तियां झड़ जाती हैं। इसके अलावा ट्रिस्टिजा के अन्य लक्षण भी पौधों पर दिखायी देते हैं जैसे नसों का साफ दिखाई देना, तने पर गड्ढ़े बनाना, जड़ों पर गड्ढ़ा बनना आदि। इस विषाणु के कुछ स्ट्रेन मुख्य तथा लेटरल नसों में कार्वी इरप्सन को बढ़ाते है जो कि हमेशा पत्तियों की ऊपरी सतह पर होता है।

jkx tud% यह रोग *ट्रिसिजा क्लोस्टेरो* वायरस द्वारा होता है तथा यह विषाणु *टोक्सोप्टेरा सिट्रीसिडा* नामक माहू द्वारा फैलता है।

ic/ku% इस रोग से संक्रमित सभी पौधों को नर्सरी या बगीचे से निकालकर नष्ट कर दें। इस रोग से मुक्त नर्सरी पौधों को ही बाग में लगाएं। मैंडरीन तथा औरंज के लिए रंगपुर लाइम तथा क्लियोपैट्रा को मैंडरीन के लिए मूलवृंत के रूप में प्रयोग करें।

?k- ve:n d jkx

1- QkbVk¶Fkkjk Qy foxyu

y{k.k% इस रोग के लक्षण पौधों की टहनियों, फूलों तथा फलों पर दिखाई देते हैं। टहनियों की ऊपरी छाल बदरंग हो जाती है तथा ऊपर से सूखते हुए नीचे की तरफ बढ़ती है। पत्तियों पर छोटे, भूरे रंग के धब्बे दिखायी देते हैं जो पत्ती के किनारे या शीर्ष भाग से शुरू होकर पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं। जिससे संक्रमित रोगी पत्तियाँ झुलस कर गिर जाती हैं। रोगी पेड़ों की सभी ऊपरी पत्तियाँ हल्की पीली दिखाई पड़ती हैं। फलों की निचली सतह पर, गोल, हल्के भूरे से गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।

jkx tud% यह रोग *फाइटोफ्थोरा निकोटियानी* उपजाति *पैरासिटिका* नामक कवक द्वारा होता है।

ioa/ku% रोगी पेड़ों के अवशेषों तथा गिरे फलों को बाग से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। बाग में जल–निकास का उचित प्रबन्ध करें। पेड़ों की टहनियों एवं डालियों को सहारा देकर ऊपर कर दें। कवकनाशी जैसे मैंकोजेब, जिनेब (0.25 प्रतिशत) कॉपर आक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) आदि के घोल में सैण्डोविट या ट्राइटन (0.1 प्रतिशत) मिलाकर छिड़काव करें। पौधों पर पहला छिड़काव जून में शुरू कर दें, इसके बाद एक माह के अंतराल कुल 5–6 छिड़काव करें। रोग की तीव्रता बढ़ने एवं संक्रमण तथा फलों पर रोग के फैलाव हेतु वातावरण अनुकूल होने पर यह छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर करें।

2- Eykfu

y{k.k% अमरूद में म्लानि रोग के लक्षण वर्षा ऋतु में स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। रोग का आक्रमण नए पौधों (2 से 6 माह पुराने पौधे) तथा पुराने पौधों पर होता है। संक्रमित पौधों की पत्तियां मुरझा जाती है तथा पत्तियों का हरा रंग भूरे रंग में बदलने लगता है। पेड़ों की छाल की सतह भी बदरंग हो जाती है तथा शाखाएं सूखने लगती हैं। बाद में, पूरा पौधा सूख कर नष्ट हो जाता है। कभी–कभी पेड़ों के आधे भाग में ही रोग के लक्षण दिखाई देते हैं तथा शेष भाग हरा और स्वस्थ बना रहता है। रोगी पेड़ों को काटने पर उसके भीतरी संवहनी ऊतक भूरे रंग का दिखाई देता है। तने के आधार पर दरारें पड़ जाती हैं। जड़ें काली हो जाती है।

jkx tud% यह रोग *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* उपजाति *सीडिआई* नामक कवक द्वारा होता है।

ioa/ku% अमरूद का बाग क्षारीय मिट्टी में न लगाएं। अमरूद का बाग लगाने से पहले पूरे क्षेत्र को फार्मलीन या सौरीकरण द्वारा निजर्मीकृत करें। पेड़ों के नए रोगी हिस्से को काटकर अलग कर दें तथा कटे स्थानों पर कॉपर कवकनाशी दवा या बोर्डो मिश्रण का लेप लगाएं। पेड़ों के अवशेषों को बाग से निकाल कर नष्ट कर दें। रोगी पौधे को जड़ सहित उखाड़कर नष्ट कर दें। पौधे उखाड़ने के पश्चात् बने गड्ढों में थीरम (0.3 प्रतिशत) का घोल या फार्मलीन से उपचारित करें। फार्मलीन से उपचारित करने के बाद गड्ढे को लगभग तीन दिन तक पॉलीथीन की चादर से ढक कर रखें तथा 2 सप्ताह बाद पौधे लगाएं। बिनोमिल या कार्बेन्डाजिम (0.2 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर जड़ों के पास देने से भी रोग की व्यापकता में कमी आती है। मिट्टी में चूना या जिप्सम (25–30 कि.ग्रा./हे.) के प्रयोग से भी रोग में कमी आती है। नीम की फली 6 कि.ग्रा. तथा जिप्सम 2 कि.ग्रा. प्रति पेड़ की दर से मृदा में प्रयोग करके रोग के प्रभाव को कम किया जा सकता है। *ट्राइकोडरमा हार्जिनियम* या *स्यूडोमोनास*

फ्लोरसेन्स निवेशित सड़ी हुई गोबर की खाद 1–5 कि.ग्रा. प्रति पेड़ की दर से सितम्बर में प्रयोग करने पर लाभ होता है।

3- ';keo.k

y{k.k% रोग के लक्षण, नई पत्तियों, टहनियों तथा कोमल शाखाओं पर दिखाई देते हैं। पतली टहनियां ऊपर से नीचे की ओर सूखती हुई, विशेषकर नीचे की तरफ बढ़ती जाती हैं जिसे शीर्षारम्भी क्षय कहते है। इस प्रकार रोग की तीव्रता में नई कलिकाएं तथा फूल काले पड़कर नीचे गिर जाते हैं। रोगी स्थानों पर छोटे–छोटे बिन्दु के रूप में कवक की बढ़वार दिखाई देती है। शुरू में रोग के लक्षण, कच्चे फलों पर छोटे–छोटे धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। बाद में, ये धब्बे बढ़कर कुछ धंसे हुए, गोलाकार (5–6 मि.मी. व्यास) हो जाते हैं। प्रायः रोगी कच्चे अथवा पके फल सिकुड़कर भूरे या काले रंग के हो जाते हैं।

jksx tud% यह रोग *कोलेटोट्राइकम सिडिआई* नामक कवक द्वारा होता है।

jksx pØ% यह रोगजनक सूखे फलों, रोगग्रसित शाखाओं एवं नीचे गिरे फलों और टहनियों पर उत्तरजीवी बना रहता है। रोग का फैलाव हवा, वर्षा, कीड़े के द्वारा होता है। कच्चे तथा पके फलों पर संक्रमण के लिए अनुकूलतम तापमान लगभग 30^0 सेल्सियस है। रोग फैलाव के लिए आपेक्षित आर्द्रता 96 प्रतिशत अनुकूल होती है। लेकिन 76–83 प्रतिशत आपेक्षित आर्द्रता वातावरण में होने पर, पके तथा कच्चे फलों पर रोग का विकास नहीं होता है।

izca/ku% बाग में पड़े हुए और पेड़ पर लगे सूखे और संक्रमित फलों तथा शाखाओं को एकत्र करके जला दें। कवकनाशी कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), जिनेब, मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर 10 दिन के अंतराल पर पेड़ो पर छिड़काव करें। इस रोग के नियन्त्रण के लिए कुल 4–5 छिड़काव पर्याप्त होते हैं। लम्बी दूरी के परिवहन तथा भण्डारण के लिए स्वस्थ, कड़े फलों का चुनाव उपचारित पेड़ों से करें। हल्के लाल गूदे वाली अमरूद की प्रतिरोधी किस्म, 'एकल कलर' के बाग लगाएं।

p- vaxwj ds jksx

1. enqjksfey vkflrk

y{k.k% इस रोग के लक्षण पत्तियों, नए प्ररोहों तथा कच्चे फलों पर दिखाई देते हैं। प्रारंभ में पत्तियों की ऊपरी सतर पर गोल या अनियमित आकार के हल्के पीले धब्बे बनते हैं। इन धब्बों के ठीक निचली सतह पर सफेद, मटमैले भूरे या धूसर रंग की कवक की बढ़वार दिखायी देती है, जिसमें कवक के बीजाणु धानी एवं बीजाणु होते है। रोग की तीव्रता बढ़ने पर पत्तियां गिर जाती है। नए फलों पर भूरे रंग के धब्बे दिखायी देते हैं। रोगी स्थानों पर मृदुरोमिल कवक की बढ़वार दिखाई देती है। रोगी फल सिकुड़ जाते है तथा फलों के गुच्छे नष्ट हो जाते हैं।

jksx tud% यह रोग *प्लाज्मोपारा विटिकोला* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% अंगूर के बागों की सफाई रखें तथा रोगी पौधों या उनके अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। पौधों की लताओं को जमीन की सतह से काफी ऊचाई पर रखें। पौधों की लताओं की

काट–छांट करके उनके मध्य उपयुक्त दूरी रखें। इससे वायु संचार अच्छा होता है व आर्द्रता कम हो जाती है, जिससे रोग कारक के संक्रमण के लिए अनुकूल वातावरण नहीं मिल पाता है। रीडोमिल या मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत), एलिएटे (0.2 प्रतिशत), बोर्डो मिश्रण (4:4:50) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का छिड़काव पौधे पर छंटाई के तुरंत बाद, फूल आने के पहले, एवं फलों के गुच्छे बनने के बाद, टहनियों की वृद्धि के समय दो बार करें। फलों की तुड़ाई से 15 दिन पूर्व कवकनाशी दवाओं का छिड़काव बन्द कर दें।

2- pf.ky vkfl rk

y{k.k% इस रोग के लक्षण प्रारंभ में पत्तियों पर छोटे–छोटे सफेद चूर्णिल धब्बे दिखाई देते हैं जो धीरे–धीरे सफेद चूर्ण पत्ती की सतह पर फैल जाते हैं जो सफेद आटे के चूर्ण के समान दिखाई देते हैं। इस सफेद चूर्ण में कवक के कवकजाल तथा कोनिडिया होते है। सूखे मौसम में पत्तियाँ गंभीर रूप से रोगग्रस्त होकर ऊपर की तरफ मुड़ जाती हैं। तनों पर भी इस प्रकार के लक्षण उत्पन्न होते हैं तथा वे भूरे रंग के हो जाते हैं। कच्चे फलों पर भी सफेद चूर्णीय धब्बे दिखायी देते हैं, जो बाद में पूरे फल पर फैल जाते है। फल के गुच्छों में से कुछ ही फल पकते हैं।

jkx tud% यह रोग *अन्सीनूला निकेटर* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% रोगी पौधों के अवशेषों को इकट्ठा करके जला दें। बाग की सफाई का विशेष ध्यान दें। अंगूर की लताओं को आवश्यकतानुसार काट–छांट कर दे, जिससे छाया का प्रभाव कम से कम हो तथा वायु का संचरण सुचार रूप से होता रहे। संतुलित उर्वरकों की मात्रा विशेषकर नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों का प्रयोग करें। कवकनाशी दवा सल्फेक्स (0.2 प्रतिशत), कैराथन (0.05 प्रतिशत), ट्राइडिमेफान (0.1 प्रतिशत), कार्बेन्डाज़िम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव पौधों पर आवश्यकतानुसार करें। गंधक के चूर्ण का बुरकाव पौधों पर 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से करने से लाभ होता है। कुल तीन या चार बुरकाव अथवा छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर, रोग की तीव्रता के अनुसार करें।

3- ';keo.k

y{k.k% इस रोग के लक्षण, पत्तियों, प्ररोहों, प्रतानों तथा फलों पर दिखायी देते हैं। पत्तियों पर छोटे, अनियमित आकार के गहरे भूरे धब्बे दिखायी देते हैं। बाद में, इन धब्बों के भीतरी मध्य धूसर भाग तथा किनारों के ऊतक भूरे रंग के हो जाते हैं। अंत में धब्बों का केन्द्रीय भाग सूखकर गिर जाता है, जिससे पत्तियों पर छिद्र सा बन जाता है। प्ररोह और प्रतानों पर छोटे, बिखरे हुए हल्के भूरे रंग के धब्बे दिखायी देते हैं। ये धब्बे पहले गोलाकार, लेकिन बाद में दीर्घवृतीय एवं धंसे हुए होते हैं। किनारों के ऊतक थोड़े उठे हुए एवं गहरे रंग के होते हैं। धब्बे के केन्द्र का भाग राख के रंग का होता है। प्रतानों एवं पर्णवृतों की भाँति फलवृंत पर विक्षत पाए जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *एल्सिनों ऐम्पिलीना* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% ममीभूत फलों के गुच्छों, प्रतानों तथा संक्रमित टहनियों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। पिछले मौसम की सभी टहनियों की छंटाई कर दें। कवकनाशी दवा जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3

प्रतिशत), थायोफिनेट मेथिल, कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर छिड़काव कलियाँ खिलते समय तथा लताओं के बढ़वार के समय छिड़काव जारी रखें। इसके अलावा, कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) और मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत) के एकान्तर छिड़काव काफी अच्छे पाए गए हैं।

4- thok.kqt dSdj

y{k.k% इस रोग के लक्षण पत्तियों पर छोटे जलीय धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं तथा पत्ती की निचली सतह पर पीला क्षेत्र दिखायी देता है जिसका आकार बढ़कर 2–5 मि.मी. व्यास तथा अनियमित और कैंकरस होता है। पर्णवृंतों तथा लताओं पर भूरे से काले रंग के, लम्बे 0.5–8 सें.मी. व्यास के विक्षत पाए जाते हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर प्ररोहों की बढ़वार रुक जाती है। फलों पर भी भूरे या काले रंग के कैंकर दिखाई देते हैं। रोगी फलों का आकार छोटा तथा सिकुड़ा होता है। प्रभावित फल सूखकर गिर जाते हैं।

jksxtud% यह रोग *जाइलोफाइलस एम्पेलिनस* नामक जीवाणु द्वारा होता है।

izcU/ku% अंगूर की लताओं की काट–छाँट का कार्य अक्टूबर के दूसरे पखवाड़े में करें। अंगूर के बागों में सिंचाई आवश्यकतानुसार करें तथा जलनिकास का उचित प्रबंधन करें, जिससे बागों में नमी की अधिकता काफी समय तक न बनी रहे ताकि रोग विकास में बाधा बनी रहे। खरपतवारों को निकाल कर बाग को साफ रखें। नाइट्रोजन की अधिक मात्रा का प्रयोग न करें एवं फॉस्फोरस और पोटाश की संतुलित मात्रा दें। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत), या स्ट्रेप्टोमाइसीन सल्फेट या टेट्रासाइक्लिन (300–500 मि.ग्राम प्रति लिटर पानी) का घोल बना कर पौधों पर छिड़काव आवश्यकतानुसार करें। नए बाग लगाने के लिए, स्वस्थ तथा रोग रहित पौधों का प्रयोग करें।

N- iihrk dk jksx

1- ruk ;k ikn foxyu

y{k.k% नर्सरी की पौध में आर्द्र पतन के लक्षण प्रकट होते हैं, जबकि बड़े पौधों में पाद विगलन, तना विगलन या मूल विगलन होता है। भूमि सतह के पास के पौधे के तने पर जलीय धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में, ये जलीय धब्बे आकार में बढ़कर तने के चारों ओर से घेर लेते हैं। तने के चारों ओर घेरा बनने से पौधा उस स्थान पर कमजोर पड़ जाने से पूरा पेड़ आधार से ही टूटकर गिर जाता है। तने के छिलके को हटाकर देखने पर अंदर के ऊतक सूखे एवं मधुमक्खी के छत्ते जैसे दिखाई पड़ते हैं। इनका रंग गहरा भूरा या काला हो जाता है। तना का ऊपरी भाग एवं जड़ें सड़ जाती हैं। जड़ सड़ने के कारण संपूर्ण जड़ तन्त्र नष्ट हो जाता हैं।

jksxtud% कवक *पिथियम* की अनेक जातियों जैसे *पिथियम अफेनीडर्मेटम* तथा *पिथियम डिबेरीएनम* के द्वारा होता है। इसके अतिरिक्त अन्य कवक जैसे *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* द्वारा यह रोग होता है।

izcU/ku% पपीते के बाग में पानी अधिक समय तक नहीं रुकना चाहिए तथा जल–निकास का उचित प्रबन्ध करें। संक्रमित पौधों को शीघ्र ही जड़ सहित उखाड़ कर जला दें तथा उस स्थान पर दूसरे पौधे न लगाएं। पौधों के आधार से 60 से.मी. की ऊँचाई तक तनों पर बोर्डो पेस्ट (1:1:3) का पेस्ट लगाएं। पौधों में आर्द्र पतन रोग के रोकने के लिए बीज अंकुरण से पूर्व एवं अंकुरण के समय मृदा में कैप्टान

(0.2 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर सिंचाई करें। *राइजोक्टोनिया सोलेनी* से होने वाले पाद विगलन को रोकने के लिए बीजों को कवकनाशी जैसे क्लोरोथेलोनिल या कैप्टान द्वारा उपचारित करें।

2- ';keo.k

y{k.k% इस रोग के लक्षण पर्णवृंत, तना एवं फलों पर दिखायी देते हैं। पर्णवृंत एवं तने पर, भूरे रंग के, लम्बे धब्बे दिखायी देते हैं। संक्रमित पत्तियाँ गिर कर नष्ट हो जाती है। अधपके या पकते हुए फलों पर छोटे, गोल, जलीय तथा कुछ धंसे हुए धब्बे दिखाई देते हैं। पेड़ पर लगे फल पर बने इन धब्बों का आकार लगभग 2 सें.मी. तक होता है। फल पकने के साथ–साथ इन धब्बों का आकार भी बढ़ता जाता है। बाद में, इन धब्बों के आपस में मिलने पर, इनका आकार अनियमित हो जाता हैं। धब्बों के किनारे का रंग गहरा और बीच का हिस्सा भूरा या काला होता है। रोग की तीव्रता बढ़ने पर, संक्रमित फल सड़ने लगते हैं। फलों का मीठापन भी कम हो जाता है।

jkx tud% यह रोग *कोलेटोट्राइकम ग्लोओस्पोरीआइडीज* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% पपीते के बाग से संक्रमित पत्तियों, तनों तथा फलों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। कवकनाशी दवाओं जैसे मैंकोजेब, जिनेब (0.2 प्रतिशत), कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), डैकोनिल (0.2 प्रतिशत) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर 5–6 छिड़काव पौधों पर करें। पहला छिड़काव फल लगने के एक महीने बाद शुरू करें तथा उसके बाद 15 से 20 दिन के अंतराल पर छिड़काव करते रहें।

3- i.k&dqpu

y{k.k% पर्ण–कुंचन रोग के लक्षण प्रमुख रूप में केवल पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं। संक्रमित पत्तियाँ छोटी एवं झुर्रीदार हो जाती हैं। पत्तियां विकृत तथा इनकी शिराएं पीली पड़ जाती हैं। संक्रमित पत्तियाँ नीचे की तरफ मुड़ जाती तथा उल्टे प्याले के अनुरूप दिखाई देती हैं। तथा इनकी पत्तियाँ मोटी, भंगुर और ऊपरी सतह पर अतिवृद्धि के कारण खुरदरी शिराएं तथा शिरिकाएँ नीचे से मोटी एवं गहरे रंग की होती हैं। पर्णवृंत ऐंठे एवं टेढ़े–मेढ़े हो जाते हैं। रोगी पौधों में फूल कम आते हैं। रोग की तीव्रता में पत्तियाँ गिर जाती हैं और पौधों की बढ़वार रुक जाती है।

jkx tud% यह रोग के *पपाया लीफ कर्ल* वायरस द्वारा होता है। बगीचों में इस रोग का फैलाव, रोगवाहक सफेद मक्खी के द्वारा होता है।

4- iihr dk oy;&fpÙkh

y{k.k% पपीते का वलय–चित्ती रोग को कई अन्य नामों जैसे पपीते की मोजेक, विकृति मोजेक, वलय–चित्ती, पर्ण–न्यूनीकरण, पर्ण कुंचन तथा विकृति पर्ण आदि से जाना जाता है। इस रोग के लक्षण पौधे की ऊपर की मुलायम पत्तियों पर दिखाई देते हैं। संक्रमित पत्तियाँ छोटी, चितकबरी एवं उपरी सतह खुरदुरी हो जाती है। इन पर गहरे हरे रंग के फफोले से बन जाते हैं। पर्णवृंत छोटे तथा ऊपर की पत्तियाँ खड़ी होती हैं। पुरानी पत्तियों को समय से पूर्व गिरने से पेड़ के सिरे पर छोटी पत्तियों का एक समूह सा बचा रहता है। पौधों में नई निकलने वाली पत्तियों पर पीला मोजेक तथा गहरे रंग के

क्षेत्र बनते हैं। ऐसी पत्तियाँ नीचे की तरफ ऐंठ जाती हैं तथा उनका आकार धागे के समान हो जाता है। फलों पर गोल जलीय धब्बे बनते हैं। ये धब्बे फल पकने के समय भूरे रंग के हो जाते हैं। इस प्रकार ये वलय धब्बे मुख्यतः फल के बाहरी सतह पर पाए जाते हैं।

jksxtud% यह रोग पपाया रिंग स्पाट वायरस के द्वारा होता है। यह विषाणु भी पर्ण–कुंचन विषाणु का संचरण रोगवाहक कीटों के द्वारा होता है जिनमें से *ऐफिस गोसिपाई, ऐफिस माल्वी, एफिस नेराई* और *माइजस पर्सिकी* रोगवाहक का काम करती हैं। इसके अलावा रोग का फैलाव, अमरबेल तथा पक्षियों के द्वारा भी होता है।

5- ekstsd

y{k.k% इस रोग के लक्षण, पत्तियों पर हरित कर्बुरण के रूप में दिखायी देते हैं, लेकिन पत्तियाँ विकृत वलय चित्ती रोग की भांति विकृति नहीं होती हैं। इस रोग के शेष लक्षण पपीते के वलय चित्ती रोग के लक्षण से काफी मिलते–जुलते हैं।

jksxtud% यह रोग *पपाया मोजेक* वायरस के द्वारा होता है। रोग का फैलाव रोगवाहक कीट माहू की कई जातियों द्वारा होता है।

fo"kk.kq tfur jksxksa dk izca/ku

पपीते में विषाणुओं द्वारा होने वाले तीनों रोगों की रोग प्रबंधन करना आसान नहीं होता है, लेकिन फिर भी निम्नलिखित उपायों को अपनाकर रोग के प्रभाव को कम किया जा सकता हैः संक्रमित पौधों को बाग से निकाल कर नष्ट कर दें। बागों की सफाई रखें तथा संक्रमित पौधे के अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। पौधशाला से स्वस्थ तथा रोगरहित पौध का चुनाव, नये बाग लगाने के लिए करें। रोगवाहक कीटों की रोकथाम के लिए मेटासिस्टॉक्स (0.1 प्रतिशत) या मूंगफली के तेल का एक प्रतिशत का घोल बनाकर 10–12 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करने से लाभ होता है। बाग के समीप के अन्य बगीचों तथा टमाटर एवं तम्बाकू की फसल पर भी कीटनाशी दवा का छिड़काव करें। बागों की देखरेख करते रहें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। संतुलित उर्वरक तथा पोषक पदार्थों का समय पर प्रयोग करें। रोग प्रतिरोधी किस्में प्राइमा, प्रिसिल्ला, मैकफ्री, लिबर्टी, कूप–12, रेडफ्री और सरप्राइज का बाग लगाने पर इस रोग से बचा जा सकता है।

t- vukj ds jksx

1. i.kZ fpÙkh ,oa Qy foxyu

y{k.k% इस रोग के लक्षण पत्तियों पर छोटे–छोटे हल्के बैंगनी से काले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। इन धब्बों के चारों तरफ हल्का पीला क्षेत्र बन जाता है । बाद में जो धीरे–धीरे आकार में बढ़ने से पत्ती के अधिकांश भाग पर फैल जाता है। रोग की तीव्रता बढ़ने पर पत्तियाँ गिर जाती हैं। फल पर ये धब्बे निचले हिस्से से या किनारे से शुरू होते हैं। बाद में, संक्रमित भाग भूरे या काले रंग के होकर फल के अधिकांश भाग पर फैल जाते हैं। ऐसे फल संक्रमण के एक सप्ताह के अंदर ही मुलायम पड़कर सड़ने लगते हैं।

jksx tud% यह रोग *कोलेटोट्राइकम ग्लोओस्पोराइडिस* नामक कवक के द्वारा होता है।

izca/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों को बाग से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। कवकनाशी दवाईयाँ जैसे कार्बेन्डाजिम (0.2 प्रतिशत) या थायोफिनेट मिथाइल (0.2 प्रतिशत) या कैप्टॉन (0.3 प्रतिशत) का घोल बनाकर पेड़ों पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

2- dSadj vkSj 'kh"kZjksHkh {k;

y{k.k% इस रोग के लक्षण टहनियों पर बड़े वृताकार, काले रंग के दिखाई देते हैं। बाद में, संक्रमित भाग चपटा, बीच का भाग दबा हुआ और किनारे उठे हुए होते हैं। रोगी स्थान की छाल सूखकर फट जाती है जिससे नीचे का काष्ठ गाढ़ा भूरा या काले रंग का दिखाई देता है। संक्रमित भाग से ऊपर की टहनियां सूखने लगती हैं तथा रोग की तीव्रता बढ़ने पर पूरा पेड़ सूख जाता है।

jksx tud% यह रोग *सिंथोस्पोरा फाइलोस्टिक्टा* नामक कवक के द्वारा होता है।

izca/ku% पेड़ से रोगी टहनियों को काट–छांट कर अलग करके नष्ट कर दें तथा कटे भागों पर बोर्डो पेस्ट लगाएं। कवकनाशी दवा मैंकोजेब (0.3 प्रतिशत) का घोल बनाकर समय–समय पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करते रहें।

3- thok.kqt i.kZfpÙkh

y{k.k% पत्तियों पर छोटे–छोटे अनियमित आकार (2.5 मि.मी. व्यास) के जलीय धब्बे बहुतायत में दिखाई देते हैं। धब्बों के केन्द्र का भाग विक्षत होता है। ऐसे धब्बे को प्रकाश के सामने देखने पर वे पारदर्शी दिखाई देते हैं। धब्बों का रंग हल्के भूरे या गहरे भूरे रंग के तथा ये धब्बे जलीय किनारे से घिरे रहते है। ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े संक्रमण का बड़ा क्षेत्र बनाते हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर पत्तियाँ पीली पड़ कर आसानी से गिर जाती है। पौधों की वृद्धि रुक जाती है और पौधा बौना लगने लगता है। इस रोग के लक्षण तना, शाखाओं तथा फलों पर भी दिखाई देता है। भूरे से काले धब्बे फलों पर L और Y आकार के दिखायी देते हैं।

jksx tud% यह रोग *जैन्थेमोनेास ऐक्सोनोपोडिस* पैथोवार *प्यूनिकी* नामक जीवाणु द्वारा होता है।

izca/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों जैसे टहनियों, पत्तियों तथा फलों को बाग से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। बाग की सफाई का विशेष ध्यान दें। स्वस्थ पौद का चुनाव नये बाग लगाने के लिए करें। स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (0.05 प्रतिशत) + कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) के घोल के मिश्रण को 15 दिन के अंतराल पर पेड़ों पर दो छिड़काव करें।

p- lsc ,oa uk’kikrh ds jksx

1- pw.kZy vkflrk

y{k.k% इस रोग के लक्षण पौधे के एक वर्ष पुराने प्ररोहों, टहनियां, पत्तियों, फूलों एवं फलों पर दिखायी देते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर सफेद रंग के छोटे–छोटे धब्बे दिखायी देते हैं। बाद में, ये धब्बे फैलकर पत्ती की संपूर्ण सतह पर फैल जाते हैं और पत्तियां ऊपरी सतह पर सफेद आटे की

तरह बिखरे हुए चूर्ण दिखायी देते हैं, इस सफेद चूर्ण में रोगजनक के कवकजाल तथा चूर्णिल बीजाणु होते हैं। संक्रमित पत्तियाँ सख्त, भंगुर एवं मुड़ जाती हैं तथा कभी–कभी वे मर भी जाती हैं। संक्रमित भाग का रंग बदलने लगता है, जिसमें काले रंग के छोटे बिन्दु आकार के कवक की फलनकाय बनते हैं। संक्रमित टहनियों पर नई पत्तियाँ एवं कलिकाएं जैसी ही निकलती हैं। वे भी संक्रमित हो जाती हैं। टहनियों के पर्ण छोटे, कक्षीय कलिकाएं बैंगनी–लाल रंग की तथा लम्बी होकर गुच्छित हो जाती हैं। पुष्पीय भाग झुलसकर सिकुड़ जाते हैं और उन पर फल नहीं लगते हैं। नए फलों पर रोग लगने से वे छोटे रह जाते हैं, जबकि बाद में रोगी फलों पर रूक्ष शल्क के लक्षण दिखाई देते हैं। फल का संक्रमित भाग सख्त होकर फट जाता है।

jkx tud% यह रोग *पॉडोस्फेरा ल्यूकोट्रिका* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% पेड़ों के प्रभावित हिस्सों की काट–छांट कर उन्हें नष्ट कर दें। शीत तथा वसन्त ऋतु में पेड़ों की कटाई–छंटाई करें। कवकनाशी डाइनोकैप (0.05 प्रतिशत), कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), सल्फेक्स (0.2 प्रतिशत), कैलिक्सीन (0.1 प्रतिशत), वेलेटान (0.1 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर पेड़ों पर छिड़काव करें। पहला छिड़काव सुसुप्तावस्था में, दूसरा कलियाँ निकलने पर, तीसरा पंखुड़ियाँ गिरने पर तथा चौथा छिड़काव 20 दिन बाद आवश्यकतानुसार करें। पेड़ों पर पुष्पन काल से पहले एवं कुछ समय बाद माइक्रोफाइन सल्फर (20–25 कि.ग्रा./हैक्टर) का छिड़काव करें, लेकिन यदि मौसम अधिक गर्म हो तो यह छिड़काव न करें। नये बाग लगाने के लिए रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें।

2- ekl kfuuk i.k fpUkh

y{k.k% इस रोग के लक्षण पुरानी पत्तियों के ऊपरी सतह पर छोटे भूरे रंग के धब्बे दिखायी देते हैं जो बाद में बढ़कर 5–10 मि.मी. व्यास चौड़े एवं गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं। संक्रमित स्थानों पर कवक के छोटे–छोटे काले बिन्दू के समान फलनकाय बनती है। रोग की तीव्रता बढ़ने पर, ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े–बड़े धब्बे बना देते हैं, तथा पत्तियाँ पीली होकर असमय ही गिर जाती हैं। पेड़ों पर सिर्फ सेब के फल अपरिपक्व होने की अवस्था में लटके हुए दिखाई देते हैं। फलों पर भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जो आकार में 4–5 मि.मी. व्यास के होते हैं। बाद में ये धब्बे दबे हुए और गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं। फल की परिपक्व अवस्था में इनका रंग काला हो जाता है। इस रोग के प्रभाव से फसल की पैदावार कम जो जाती है। रोगी पेड़ के फल छोटे तथा कुरूप हो जाने से उनका बाजार मूल्य घट जाता है।

jkx tud% यह रोग *मार्सोनिना कोरोनेरिया* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% सेब एवं नाशपाती के बागों की उचित देखभाल करते रहे। गिरी हुई पत्तियों को बाग से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। पेड़ की समय से काट–छांट करते रहें। इसके अलावा गिरी हुई पत्तियों पर यूरिया का 5 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करने से पत्तियाँ शीघ्र ही गलकर नष्ट हो जाती है।

3- Ldc

y{k.k% इस रोग के लक्षण पत्तियों एवं फलों पर दिखाई देते है। पत्तियों पर, हल्के से जैतूनी–हरे रंग के धब्बे बनते हैं, जो बाद में गहरे रंग के हो जाते हैं। अंत में, विशेषतः ऊपरी सतह पर ये काले रंग के हो जाते हैं। नई पत्तियों पर धब्बे बदरंग एवं पंखदार किनारों वाले, जबकि पुरानी पत्तियों पर धब्बों

के किनारे निश्चित आकार के होते हैं। धब्बों की सतह ऊतकों के स्थूल होने पर ऊपर की ओर उभर आती हैं एवं पत्ती की निचली सतह प्याले के समान दब जाती हैं। पर्णवृंत पर अधिक धब्बों के बनने से पत्तियां पीली होकर गिर जाती हैं। धब्बों के मरे हुए उत्तकों पर काले रंग की कवक की बढ़वार दिखाई देती है। टहनियों पर फफोले के समान छोटे धब्बे बनते, जिससे संक्रमित टहनियों की छाल फट जाती है। फलों पर पत्तियों की अपेक्षा छोटे एवं हल्के, जैतुनी, गहरे भूरे या काले रंग के धब्बे बनते हैं। प्रारंभ में धब्बे फल की उपत्वचा से ढके होने के कारण धूसर रंग के दिखाई पड़ते हैं। कुछ फलों में धब्बे एवं मस्सेदार सूजन के नीचे कार्की परत बन जाने से फल बुरी तरह से विकृत हो जाते हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर, फल की संपूर्ण सतह कार्क के समान हो जाती है तथा उसमें गहरी दरारें पड़ जाती हैं।

jkx tud% यह रोग *वेन्चूरिया इनइक्वेलिस* नामक कवक द्वारा होता है।

iccU/ku% पेड़ की नीचे गिरी संक्रमित या अन्य पत्तियों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। झड़ी पत्तियों पर 5 प्रतिशत यूरिया या बिनोमिल (0.05 प्रतिशत) का अच्छी प्रकार छिड़काव करें। अन्य कवकनाशी दवा जैसे कैप्टॉन (2 प्रतिशत), मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत), कार्बेन्डाजिम (0.05 प्रतिशत) का छिड़काव गिरी हुई पत्तियों पर करें। बगीचों की समय पर जुताई करें जिससे गिरी हुई पत्तियाँ मृदा में दबकर सड़कर नष्ट हो जाये। भूमि की सतह के पास तने के चारों तरफ कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत), कैलिक्सीन, टॉप्सीन–एम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव जून–जुलाई और अगस्त में करें। स्कैब रोग के प्रबंधन के लिए पेड़ों पर कवकनाशियों के छिड़काव के लिए निम्नलिखित सारणी दी गयी हैं:

iM+ dh voLFkk	doduk'kh ek=k ¼ifr 100 fyVj ikuh½
रजत शीर्ष से हरी अवस्था	क्लोरोथैलोनिल (400ग्रा.) या कैप्टॉन (300 ग्रा) या मैंकोजेब (400 ग्रा.)
गुलाबी कली अवस्था	मैंकोजेब (300 ग्रा.)+ गंधक (200 ग्रा.)
पंखुड़ियाँ गिरने की अवस्था	कार्बेन्डाजिम (50 ग्रा.)
फल बनने की अवस्था (मटर के आकार)	मैंकोजेब या कैप्टान (300 ग्रा.)
फल विकास (मटर आकार के बीस दिन बाद)	कार्बेन्डाजिम (50 ग्रा.) या थायोफिनेट मेथिल (25 ग्रा.) + मैंकोजेब (250 ग्रा.) या कैप्टॉन (300 ग्रा.)
फल विकास (5 वें छिड़काव के 20 दिन बाद)	कार्बेन्डाजिम (50 ग्रा.) या मैंकोजेब या कैप्टॉन (300 ग्रा.)
फल तुड़ाई के 20–25 दिन पहले	मैंकोजेब या कैप्टॉन 300 ग्रा.
पतझड़ के पहले	यूरिया 5 कि. ग्रा.

सेब की रोग प्रतिरोधी किस्में उगायें। आर्द्रपतन रोग की रोकथाम के लिए (i) पौधशाला की क्यारी भूमि सतह से कुछ ऊपर उठी हुई होनी चाहिए। मृदा हल्की बलुई होनी चाहिए। यदि मृदा कुछ भारी हो तो उसमें बालू या लकड़ी का बुरादा मिला लें। (ii) पौधशाला में जल–निकास का उचित प्रबंधन हो जिससे कि वहां अधिक देर तक पानी जमा न हो सके। (iii) बीज की बुवाई घनी न करें। इसके अतिरिक्त, पौधशाला की मृदा का उपचार (i) पौधशाला की मिट्टी में थीराम या कैप्टान (3 ग्रा./वर्ग मीटर की दर से)

मिलाएं। (ii) पौधशाला की क्यारी में फार्मलीन (एक भाग फार्मलीन + 50 भाग पानी) का घोल बनाकर मृदा को खूब अच्छी तरह भिगोएं तथा पॉलीथीन से एक सप्ताह तक के लिए ढ़ककर छोड़ दें। यह कार्य बोआई के एक सप्ताह पूर्व करना चाहिए। (iii) पौधशाला की मृदा के ऊपर लकड़ी के सरकंडे या घास फूस को जलाकर भी मृदा का उपचार किया जाता है। (iv) मृदा का सौर ऊर्जा उपचार में सफेद पारदर्शी पॉलीथीन की मोटी (लगभग 200 गेज) चादर को मिट्टी की सतह पर बिछाकर लगभग 45–60 दिनों के लिए ढककर रखें। पॉलीथीन चादर से ढकने के पूर्व मृदा की हल्की सिंचाई कर दें। यह कार्य अप्रैल से जून के मध्य में करें।

बुवाई से पहले बीज को किसी कवकनाशी जैसे कैप्टॉन, थीरम (2.5 ग्राम) या कॉपर आक्सीक्लोराइड (3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से) से उपचारित करें। पौध उगने के बाद थीराम या कैप्टॉन (2.5 ग्रा./लिटर पानी की दर से) का पानी में घोल बनाकर पौधशाला की क्यारियों में डालें।

4- d|dj

y{k.k% इस रोग के लक्षण, पौधों में पर्णदाग, फल विगलन (काला विगलन) एवं कैंकर (धूमिल) अंगमारी के रूप में दिखाई देती हैं। पत्तियों पर छोटे, बैंगनी रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में बढ़कर गोल, 4–5 मि.मी. व्यास तक हो जाते हैं। इन धब्बों का किनारा बैंगनी तथा अंदर का हिस्सा भूरे रंग का होता है। रोग की तीव्रता बढ़ने पर पत्तियाँ पीली होकर गिर जाती हैं। सेब की टहनियों एवं शाखाओं पर छोटे, गोल जलीय धब्बे बनते हैं जो बाद में बैंगनी रंग के कैंकर बन जाते हैं। संक्रमित भाग की छाल गिर जाने से श्लेषी परत दिखायी देने लगती है। अगली बसंत ऋतु में कवक के पिक्नीडियां बनने से, धब्बे की सतह पर कुछ उठे हुए क्षेत्र बन जाते हैं। फलों पर छोटे, लाल रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में बैंगनी रंग के फफोले के रूप में हो जाते हैं। संक्रमित भाग अनियमित, काला तथा लाल रंग से घिरा होता है। धब्बों का काले–भूरे रंग के क्रमानुसार छल्ले बनते हैं।

jksx tud% यह रोग *बोट्रियोस्फीरिया रिबिस* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% संक्रमित टहनियों को संक्रमित स्थान से लगभग 15 से.मी. नीचे से काटकर नष्ट कर दें तथा कटे हुए भाग पर चौबटिया पेस्ट का लेप लगायें। बाग से संक्रमित पेड़ों के अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। बाग में कैप्टान (0.2 प्रतिशत) या कापर आक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) घोल का छिड़काव पेड़ों पर करें।

5- LrEHk ey lfU/k foxyu

y{k.k% जमीन सतह के पास तने की छाल मर जाती है तथा उस स्थान से नम रिसाव दिखाई देता है। छाल स्पंजी हो जाती है। छाल सड़ने लगती है तथा कैंकर क्षेत्र बन जाता है। कैंकर प्रायः अण्डाकार या अनियमित आकार के दिखाई देते हैं। पेड़ के चारों ओर कत्थई से लेकर लाल रंग की मेखला बना देते हैं। तना गल जाने के कारण, पूरा पेड़ 1–2 साल में मर जाता है।

jksx tud% यह रोग *फाइटोफ्थोरा कैक्टोरम* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% स्तंभ मूल सन्धि विगलन रोग का प्रबंध के लिए बाग से संक्रमित पेड़ों के अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दे। बाग में जल–निकास का उचित प्रबंधन रखें। स्तम्भ मूल संधि के पास के भाग को

घाव तथा खरोंच से बचाएं। मूलवृंत के तने पर कलिका रोपण कम से कम 30 से.मी. ऊँचाई पर करें। बाग में, ढालों पर मेंड़ बनाएं, जिससे वर्षा का पानी रोगी से स्वस्थ पेड़ों तक बहकर न जा सके। रोग प्रतिरोधी किस्मों के मूलवृंतों जैसे एम–2,4, एम एम 110, 114, 115 एवं क्रैब सेब का प्रयोग करें। संक्रमित छाल को चाकू से छील कर, उस स्थान पर चौबटिया पेस्ट, बोर्डो पेस्ट या कॉपर पेस्ट या मेटालेक्जिल पेस्ट का लेप लगाएं। कवकनाशी दवाओं जैसे मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत), कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत), रीडोमिल (0.25 प्रतिशत) का घोल बनाकर मुख्य तने के चारों ओर डालें।

6- 'or ey foxyu

y{k.k% श्वेत मूल विगलन रोग पौधशाला एवं बागों का बहुत हानिकारक रोग है। संक्रमित जड़ों पर सफेद रोएंदार कवक की बढ़वार दिखायी देती हैं। मरी छाल दारू के ऊपर असंख्य छोटे–छोटे काले रंग की कवक की स्क्लेरोशिया पायी जाती हैं। मूल विगलन के फलस्वरूप पेड़ कमजोर हो जाते हैं। पेड़ों की बढ़वार रुक जाती है। रोगी पेड़ पर कम पत्तियाँ लगती हैं तथा वे पीली पड़कर असमय ही गिर जाती हैं। फलों की संख्या कम तथा आकार में भी छोटे होते हैं। संक्रमित पेड़ों की मृत्यु धीरे–धीरे हो जाती है।

jkx tud% यह रोग *रोजेलिनिया निकैट्रिक्स* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए मूल तन्त्र जैसे एम.एम. 109, और एम.एम. 104 कम रोगग्राही पाये गये हैं। नर्सरी एवं बागों में जल–निकास का उचित प्रबंधन करें। नए बाग लगाने के लिए रोग रहित क्षेत्र का चुनाव करें। संक्रमित पौधों के उखाड़कर प्रभावित जड़ों की छंटाई कर कटे भाग पर चौबटिया लेप लगा दें। इसी प्रकार स्तंभ पर संक्रमित भाग को छीलकर उस पर भी चौबटिया पेस्ट का लेप लगा दें। नर्सरी की मृदा को सौरीकरण द्वारा अच्छी तरह सुखा लें। रोपण के पहले पौध की जड़ों को कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) के घोल में डुबोकर उपचारित करें। भूमि में नीम की खली (25 क्विंटल प्रति हैक्टर) को मिलाएं। बुरी तरह संक्रमित पेड़ों को उखाड़कर उनको समस्त मूल अवशेषों सहित जला दें। पौधों में संक्रमण होने पर कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का घोल बनाकर पेड़ों की जड़ों के पास 15–20 से.मी. गहरा छेद बनाकर डालें। यह उपचार वर्षा के समय प्रत्येक वर्ष 3–4 बार करना चाहिए। इसके अलावा आरियोफन्जिन (0.02 प्रतिशत) + कापर सल्फेट (0.02 प्रतिशत) से मिट्टी को भिगोकर रोग को नियन्त्रित कर सकते हैं। इस रोग के नियंत्रण के लिए, जैव नियन्त्रक जैसे *ट्राइकोडरमा हारजिएनम* एवं *ट्रा. विरिडी* के प्रयोग उपयोगी पाये गये हैं।

7- ikS/k >qylk jkx

y{k.k% यह पौधशाला में लगने वाला रोग है तथा 2–3 वर्ष पुरानी पौधे पर रोग के लक्षण दिखाई देता है। संक्रमित पौधों की पत्तियाँ लाल या धूसर–बैंगनी रंग की होकर सूखने लगती हैं। बाद में पौध के सभी वायव भाग झुलस जाते हैं। मृत पौध की जड़ों पर सरसों के बीज के समान भूरे रंग की संरचना बनती है, जिसकी उपस्थिति इस रोग के होने सत्यापित करती है।

jkx tud% यह रोग *स्क्लेरोशियम रोल्फसाई* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए पौधशाला में जल–निकास का उचित प्रबंधन रखें। पौधशाला के लिए दोमट मृदा का प्रयोग करें। पौधशाला की जगह कम से कम 4–5 वर्ष के बाद बदल देनी चाहिए।

मृदा को सौरीकरण विधि से उपचारित करें। पौधशाला की मृदा को पुनः प्रयोग में लाने के पूर्व कम से कम 4–5 वर्ष तक मक्का अवश्य लगाए। रोगी पौधे को पौधशाला में कवकनाशी दवा थीरम (0.2 प्रतिशत) का घोल बनाकर जड़ों के पास डाल कर उपचारित करें।

8- frDr foxyu

y{k.k% फलों पर छोटे–छोटे गोलाकार हल्के भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में, ये धब्बे आकार में बढ़कर बीच में दबे हुए निश्चित गोलाकार धब्बों में बदल जाते हैं। अनुकूल वातावरण मिलने पर इन धब्बों के बीच, गुलाबी रंग की कवक की बढ़वार दिखाई देती है। धब्बों के पुराने हो जाने पर उनका रंग गहरा भूरा या काला, कुछ झुर्रीदार दबा हुआ होता है। संक्रमित भाग के नीचे गूदे का कुछ हिस्सा सड़ जाता है, जो धीरे–धीरे कोर की ओर बढ़ता है। सड़ा हुआ गूदा काफी मुलायम तथा स्वाद में कड़वा हो जाता है। संक्रमित फल अपरिपक्व अवस्था में पक जाते हैं एवं झड़ने लगते हैं। शाखाओं पर सड़े एवं सूखे फल लटके हुए दिखाई देते हैं। इस रोग के लक्षण शाखाओं पर कैंकर के रूप में दिखायी देते हैं। संक्रमित छाल अण्डाकार आकार में थोड़ा दबे हुए होते हैं तथा उनके नीचे के हिस्से का दारू सूखकर मर जाता है। पुराने कैंकर में उनके किनारों के समांतर दरारें बन जाती हैं, जिससे मृत छाल में मंडल बन जाता है। कैंकर के चारों तरफ कैलस की परत बन जाती है, जो कैंकर की वृद्धि को रोक लेती है।

jksx tud% यह रोग *ग्लोमेरेला सिंगुलेटा* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए बाग की सफाई पर विशेष ध्यान रखें। सभी सड़े–सूखे फलों एवं झुलसी हुई टहनियों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। बाग में जुलाई से आरंभ कर, फल तुड़ाई तक मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत) या कैप्टॉन (0.2 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर 10–14 दिन के अन्तर पर पेड़ों पर छिड़काव करते रहें। फलों को भण्डारण से पहले ट्राइसोडियम फॉस्फेट (2.0 प्रतिशत) के घोल में डुबोकर ही भंडारित करें। फलों का भण्डारण शीत गृहों में कम तापमान (0–2 डिग्री सेल्सियस) पर करें।

N- xBYhnkj Qyksa ds jksx

1- i.kZ dqapu

y{k.k% इस रोग के लक्षण, पौधों पर वसन्त ऋतु प्रारंभ होने पर दिखायी देने लगते हैं। कली से निकलते ही कुछ पत्तियाँ मुड़ी हुई, मोटी, झुर्रीदार, नीचे की तरफ कुंचित तथा विकृत हो जाती हैं। शुरू में रोगी पत्तियों का रंग पीताभ–हरा या पीला होता है, जो बाद में पत्तियों के कुछ भाग लाल–बैंगनी रंग के हो जाते हैं। नई शाखाएं फूली हुई एवं विकृत दिखाई देती हैं रोग की तीव्रता बढ़ने पर, पत्तियाँ, फूल तथा फल रोगी होने के कारण नीचे गिर जाते हैं। इस रोग का प्रकोप कई वर्षों तक बने रहने से संक्रमित पौधों का जीनव–काल कम हो जाता है। इन संक्रमित शाखाओं से गोंद जैसा पदार्थ निकलता है।

jksx tud% यह रोग *टैफरीना डिफॉर्मेन्स* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए संक्रमित गिरी हुई पत्तियों को बाग से निकाल कर नष्ट कर दें। बाग की सफाई का विशेष ध्यान दें। कवकनाशी दवाईयाँ जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत),

कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), जीरम (0.2 प्रतिशत), क्लोरोथैलोनिल (0.2 प्रतिशत), कैप्टॉन (0.2 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव कलियों के फूलने से पहले करें।

2- pf.ky vkfl rk

y{k.k% इस रोग के लक्षण, पेड़ की नई शाखाओं, पत्तियों और फलों पर दिखायी देते हैं। नई पत्तियों पर धूसर सफेद रंग की कवकीय चूर्णिल वृद्धि पूरी तरह से फैल जाती हैं। आकार में बढ़ने के साथ ही पत्तियाँ कुंचित और पतली हो जाती हैं। पुरानी पत्तियों पर धूसर सफेद छोटे–बड़े धब्बे दिखाई देते हैं। हरी नई कलिकाओं पर सफेद रंग के धब्बे पाए जाते हैं। संक्रमित कलियाँ या तो खुलती ही नहीं या असमान रूप से खुलती हैं। खिलते हुए फलों का आकार छोटा हो जाता है तथा फूल बदंरग होकर सूख जाते हैं। फलों पर गोल तथा सफेद धब्बे दिखाई देते हैं जो बाद में, बढ़कर पूरे फल या उसके एक बड़े भाग पर फैल जाते हैं। फल गुलाबी या गहरा–भूरा हो जाता है और बाहरी त्वचा चीमड़ और कड़ी हो जाती है। कभी–कभी फलों में दरारें भी दिखायी देती हैं। फलों में छोटे–छोटे ऊतकक्षयी स्थान बन जाते हैं और पके फल गन्दे दिखाई देते हैं जिससे ऐसे फलों का बाजार मूल्य घट जाता है।

jkx tud% यह रोग *पोडोस्फिरा क्लैन्डेस्टिना, पो. ट्राइडेक्टिला, पो. ल्यूकोट्राइका* एवं *स्फीरोथिका पैनोसा* नामक कवकों के द्वारा होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए रोगी पौधों के अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें तथा बागों की सफाई समय–समय पर करते रहें। कवकनाशी दवाएं जैसे कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), थायोफिनेट मेथिल (0.2 प्रतिशत), ट्राइडिमिकोन (0.1 प्रतिशत), टैब्यूकोनेजोल (0.1 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर पौधों पर तीन छिड़काव करें। पहला छिड़काव फूल खिलने के पूर्व, दूसरा छिड़काव बाह्य दल गिरने तथा अंतिम छिड़काव 15 दिन के बाद करें।

3- Hkjk foxyu

y{k.k% इस रोग के लक्षण फूलों, कलियों एवं फलों पर दिखाई देते हैं। संक्रमित फूलों के पुंकेसर और उनकी पंखुड़ियों सूख जाती हैं तथा वर्तिकाग्र और बाह्यदल मुरझा जाते हैं। इनका रंग धूसर से गाढ़ा–भूरा हो जाता है। इस रोग के प्रभाव से टहनियाँ सूखने लगती हैं। शाखाओं और पतली टहनियों पर लम्बे, प्रायः धंसे हुए और भूरे रंग के कैंकर दिखायी देते है, जिसमें से वर्षाकाल में गोंदीय पदार्थ निकलता है। फलों पर छोटे, गोल और भूरे रंग के धब्बे दिखायी देते हैं। ये धब्बे प्रायः कीटों द्वारा बनाये घावों के स्थानों से शुरू होकर फलों में पहुंच जाता हैं। इन धब्बे की सतह चिकनी तथा इनके नीचे सड़ा हुआ गूदा मुलायम हो जाता है। अनुकूल मौसम में, संक्रमित भाग, राख के रंग का हो जाता है जिसमें कवक की बढ़वार (कवकजाल तथा बीजाणु) पायी जाती है। फल पूर्णतः सड़ जाने के बाद भी या तो गिर जाते हैं या पेड़ पर ही धीरे–धीरे सूखकर ठोस ममी के समान बन जाते हैं। इस रोग का प्रभाव फलों के भण्डारण तथा परिवहन के समय भी होता है।

jkx tud% यह रोग *मोनिलिनिया फ्रक्टीकोला* या *मोनिलिनिया फ्रक्टिजेना* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए ममीभूत फलों तथा रोगी टहनियों को तुरंत काट–छांट करके जला दें। बगीचों में वृक्षों के थालों के आस–पास सफाई तथा निराई–गुड़ाई करें। पेड़ों की कांट–छांट

समय–समय पर करते रहें। कवकनाशी दवाएं जैसे कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), थायोफिनेट मिथाइल (0.2 प्रतिशत), क्लोरोथैलोनिल (0.2 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर पेड़ों पर कुल चार छिड़काव जिसमें कलियों के गुलाबी होने से लेकर बाह्यदल गिरने तक समय से करने से रोग से बचा जा सकता है। फलों की तुड़ाई के कुछ सप्ताह पहले से लेकर तुड़ाई के समय तक कवकनाशी का छिड़काव करने से भण्डारण एवं परिवहन के समय यह रोग कम लगता है। फलों की तुड़ाई सावधानी से करें। जिससे फलों को चोट न लगे। रोगी फलों को छांटाई करके संक्रमित, अनियमित आकार के फलों को छांटकर अलग करें। फलों के भंडारण के पूर्व कार्बेन्डाजिम, थायोफिनेट मिथाइल (0.1–0.05 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर उपचातिर करें।

4- ldkLikjk i.k fpUgh

y{k.k% पत्तियों पर गोल 4–5 मि.मी. व्यास, सूखे, प्रारंभ में ये धब्बे लाल–भूरे रंग के धब्बे पत्तियों के दोनों सतहों पर दिखाई देते हैं। इन धब्बों का केन्द्रीय भाग हल्का भूरा तथा किनारे का रंग भूरा–लाल होता हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर, धब्बों के आकार बढ़ने पर ये आपस में मिल जाते हैं और वहाँ एक बड़ा सूख क्षेत्र बन जाता है। संक्रमित भाग सूखकर नीचे गिर जाता है, जिससे पत्तियों में छिद्र बन जाता हैं। रोग की तीव्रता बढ़ने पर, रोगी पत्तियाँ गिर जाती हैं। अपरिपक्व पत्तियों के गिरने से दूसरी नई पत्तियाँ निकलते ही संक्रमित होकर गिरने लगती हैं। और पौधों की बढ़वार रुक जाती है।

jkxtud% यह रोग *सर्कोस्पोरा रूब्रेटिन्क्टा* नामक कवक द्वारा होता है।

ipkj/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए बाग से नीचे गिरी हुई संक्रमित पत्तियों को इकट्ठा करके जला कर नष्ट कर दें। बाग की सफाई का विशेष ध्यान दें। थायोबेन्डाजोल (0.1 प्रतिशत), जिनेब, मैंकोजेब, कैप्टॉन (0.2–0.25 प्रतिशत) कवकनाशी का पानी में घोल बनाकर पेड़ों पर रोग के लक्षण दिखायी देने पर छिड़काव करें। इसके अलावा कवकनाशी का छिड़काव पत्तियाँ फूटने की अवस्था से शुरू करें तथा एक महीने के अंतराल पर उसे अवश्य दोहराते रहें। पत्तियों के गिरने के बाद भी इनका एक छिड़काव अवश्य करें।

5- f'k[kj fifVdk

y{k.k% इस रोग के लक्षण पौधों में जमीन सतह के पास से तने और जड़ों पर छोटे, गोल, सफेद, मुलायम, अतिवृद्धि के दिखायी देती हैं। इस अतिवृद्धि के कारण संक्रमित भाग पर अनेक गोल एवं मुलायम पिटिकाएं बन जाती हैं। बाद में इनकी सतह संवलित तथा सफेद रंग या मांसवर्णी होती है जो बाद में, गहरे–भूरे या काले रंग की हो जाती है। पिटिकाएँ पुरानी होने पर घुंडीनुमा या गांठदार तथा कड़ी हो जाती हैं। कुछ पौधों में पिटिकाओं का बाहरी भाग, कार्क के समान और भीतरी ऊतक काष्ठीय हो जाता है। रोगी पौधों की बढ़वार रुक जाती है। पत्तियाँ छोटी तथा पीली हो जाती है।

jkxtud% यह रोग *राइजोबियम रेडियोबेक्टर* (पूर्ववर्तीः *एग्रोबैक्टीरियम टयूमेफेशिएन्स*) नामक जीवाणु द्वारा होता है।

ipkj/ku% संक्रमित पौधों को पौधशाला से निकाल कर नष्ट कर दें। स्वस्थ तथा रोगरहित पौधों को ही लगाने के लिए चुनें। पौध तैयार करने के लिए पौधशाला लगाने वाले क्षेत्र में कई वर्षों के अनुसार

फसल—चक्र अनाजवाली फसल या अन्य फसल के साथ अपनाएं। कृषि क्रियाएं या गुड़ाई करते समय जड़ों को व सिरों पर घाव व खरोंच लगने से बचायें। नई पौध तैयार करने के लिए कलम बाँधने के स्थान पर चश्मा चढ़ाना लाभदायक होता हैं। नये बाग लगाने के लिए, स्वस्थ तथा रोगरहित पौध का चुनाव करें।

6- thok.kqt fpÙkh

y{k.k% पौधों की पत्तियों, तना तथा फलों पर रोग के लक्षण दिखाई देते हैं। पत्तियों पर गोल या अनियमित आकार के जलीय, गहरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में गहरे बैंगनी या भूरे या काले रंग के हो जाते हैं। इन धब्बों के किनारों पर पत्ती का रंग पीला होता है। नम वातावरण में धब्बों के ठीक नीचे, पत्ती की निचली सतह पर जीवाणु के श्राव बीजाणु फैले हुए होते हैं तथा सूखने पर काँच जैसा दिखाई देते हैं। शुष्क मौसम में धब्बों के चारों तरफ दरारें बन जाती हैं। पत्तियों में, संक्रमित उत्तकों के गिर जाने के कारण छोटे बन जाते हैं। रोगी पत्तियाँ पीली पड़कर नीचे गिर जाती हैं। नई शाखाओं पर गहरे बैंगनी रंग के जलीय धब्बे बनते हैं, जो बाद में भूरे या काले, धंसे हुए, गोल या लम्बे आकार के हो जाते हैं। इस संक्रमण से शीर्षरंभी क्षय रोग के लक्षण उत्पन्न होते हैं। पुरानी शाखाओं एवं तने पर भी गहरे भूरे रंग के धब्बे पाये जाते हैं। फलों पर, जलीय, छोटे, गोल, हल्के भूरे तथा कुछ दबे हुए धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में, ये धब्बे गहरे या काले रंग के हो जाते हैं। इन धब्बों में दरारें पड़ जाती हैं। नम मौसम में, इनमें से एक गोंद जैसा पदार्थ निकलता है।

jksx tud% यह रोग *जैन्थोमोनास आर्बोरिकोला* पैथोवार *प्रूनी* नामक जीवाणु द्वारा होता है।

izca/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए पौधशाला और बगीचों की सफाई का विशेष ध्यान रखें। संक्रमित शाखाओं, पत्तियों एवं फलों को बाग से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। पेड़ों को उचित मात्रा में संतुलित खाद एवं उर्वरक तथा पानी समय पर दें। स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (0.01 प्रतिशत) + कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का घोल बनाकर पेड़ों पर 10—15 दिन के अंतराल पर कुल चार छिड़काव करें।

t- LVªkcsjh ds jksx

1. i.kZ fpÙkh

y{k.k% नई पत्तियों पर छोटे, गोल तथा बैंगनी रंग के धब्बे (चित्ती) दिखाई देते हैं। पुराने धब्बे गोल तथा 2.5 —3.0 मि.मी. व्यास के हो जाते हैं। धब्बे के केन्द्रीय भाग धूसर या सफेद तथा किनारा रक्ताभ—बैंगनी होता है। रोग की तीव्रता बढ़ने पर, कई धब्बे आपस में मिल जाते हैं, और एक बड़ा सा क्षेत्र बन जाता है। पत्तियाँ झुलसी हुई दिखाई देती है। संक्रमित पौधों की पत्तियाँ गिर जाती हैं। तनों, पर्णवृंत तथा फल वृंत पर लम्बे आकार के धब्बे पाये जाते हैं। फलों पर काले रंग के धब्बे बनते हैं, जिससे फलों का बाजार भाव घट जाता है।

jksx tud% यह रोग *रैमुलेरिया टुलास्नेआई* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से हटाकर जला दें। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था करें। कवकनाशी दवायें जैसे कैप्टान (0.2 प्रतिशत), जिप्सम (0.2 प्रतिशत), कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), थायोफिनेट मेथिल (0.2 प्रतिशत), या क्लोरोथैलोनिल (0.2

प्रतिशत) आदि का पानी में घोल बनाकर पौधों पर कम से कम एक छिड़काव पौध लगाने के पूर्व नर्सरी में ही करें। रोगी–प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग लाभदायक होता है।

2- i.kZ vaxekjh ,oa 'kq"d o`Ur foxyu

y{k.k% इस रोग के लक्षण पौधों के सभी भागों पर सितम्बर से अक्टूबर में दिखाई देते हैं। पत्तियों पर लगभग गोल धब्बों जिसका केन्द्रीय भाग राख या धूसर रंग के तथा किनारा गहरे बैंगनी रंग का होता है। बाद में, ये धब्बे अण्डाकार या अनियमित आकार के हो जाते हैं। पुराने पौधों की पत्तियाँ कुंचित होकर झड़ जाती है। संक्रमित पौधों के उपरिभूस्तारी एवं उनके वृंत गहरे भूरे काले रंग के हो जाते हैं तथा इन पर भी अनियमित आकार के विक्षत धब्बे पाए जाते हैं। संक्रमित पौधों की बाह्य वृद्धि कम हो जाती है। नई जड़ें कम विकसित होती हैं तथा पुरानी जड़ों के दूरस्थ भाग चिथड़े जैसे लगते हैं।

jksxtud% यह रोग *राइजोक्टोनिया बटाटीकोला* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए खेत से संक्रमित पौधों के अवशेषों को निकाल कर नष्ट कर दें, तथा खेत की सफाई का विशेष ध्यान दें। 2–3 साल का फसल–चक्र अपनाएं। गर्मियों के दिनों में खेत की गहरी जुताई करके उसे सूखने के लिए खुला छोड़ दें। हरी खाद का अधिक प्रयोग करें।

3- yky jaHk

y{k.k% इस रोग के लक्षण पौधों के वायव भागों पर दिखाई देते है। संक्रमित पौधों की बढ़वार रुक जाती है तथा पुरानी पत्तियाँ मुरझाकर सूख जाती हैं तथा नई पत्तियाँ छोटी हो जाती हैं। पत्तियों का रंग नील हरित और पुरानी पत्तियो में पीले, लाल एवं भूरे रंग की आभा मिलती है। रोग की तीव्रता बढ़ने पर पौधों पर फल नहीं लगता, यदि लग भी जाएं तो आकार में छोटे रहते हैं और पकने के पहले ही सूख जाते हैं। जल निकास की समुचित व्यवस्था न होने पर पानी रुके स्थान पर पौधा मर जाता है। संक्रमित पौधों की रेामिल जड़ें झड़कर नष्ट हो जाती हैं। नई निकलने वाली शिखर जड़ों का ऊपरी सिरा काला पड़कर, मर जाता है। रोग का आक्रमण मोटी जड़ों में ऊपर की ओर केन्द्रीय रंभ में बढ़ता है। रंभ के संक्रमित होने पर ऊतकों का रंग रक्ताभ भूरा हो जाता है। रोगग्रस्त रंभ का यह लाल एवं भूरा रंग चारों ओर के स्वस्थ सफेद वल्कुट–ऊतक से अलग पहचाना जा सकता है। रोगी जड़ों के नीचे के सारे भाग भूरे या काले रंग के हो जाते हैं।

jksxtud% यह रोग *फाइटोफ्थोरा फ्रेगेरी* नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए स्वस्थ तथा रोग रहित खेतों से प्राप्त उपरिभूस्तारियों को ही लगाएं। खेत में जल–निकास का समुचित प्रबंधन करें। संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। खेत की सफाई रखें। तीन से चार वर्ष का फसल–चक्र अपनाएं। गर्मी के दिनों में खेत की जुताई करके उसे खुला छोड़ दें। रोगी प्रतिरोधी किस्मों को लगाएं।

4- /kwlj QQwan Qy foxyu

y{k.k% इस रोग का संक्रमण फल विकास के किसी भी अवस्था में होता है। फलों के अलावा इस रोग के लक्षण फूल, बाह्य दलपुंज, फलवृंत एवं पत्तियों पर भी होते हैं। फल पर हल्के भूरे रंग तथा

मुलायम क्षेत्र बन जाता हैं। बाद में यह विगलन शीघ्र ही पूरे फल पर फैल जाता है। फल सूखने लगता है तथा बाद में फल कठोर हो जाते हैं। संक्रमित भाग पर हरे या धूसर रंग के रोगजनक कवक की वृद्धि दिखाई देती है।

jkx tud% यह रोग *बॉट्राइटिस साइनेरिया* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% खेत से संक्रमित पौधों के अवशेषों को निकाल कर नष्ट कर दें। खेत में जल–निकास का उचित प्रबंधन करें। पौधों के बीच में उचित दूरी रखें, जिससे वायु का प्रवाह बना रहे। रोगरोधी किस्मों का चयन करना चाहिए, जिनकी बढ़वार ऊपर की ओर व सीधी हो तथा फल पौधे के वितान के बाहर लगते हों। पौधों की पंक्तियों के बीच सूखी घास, पुआल या भूसा आदि की परत बिछा देने से फलों की सड़न कम हो जाती है। संक्रमित फलों को भंडारण व परिवहन से पहले ही छांट लें, जिससे स्वस्थ फल संक्रमित न हो। केप्टॉन (0.2 प्रतिशत), बिनोमिल (0.1 प्रतिशत) या थायोफिनेट मिथाइल (0.2 प्रतिशत) का घोल बना कर पहला छिड़काव पुष्पपुंज के खुलने का समय तथा उसके बाद दो अन्य छिड़काव फल के रंग आने तक करने से लाभ होता है। फलों का भंडारण 5° सेल्सियस तापमान या उससे नीचे करना चाहिए।

सब्जियों के रोगों की पहचान एवं उनका प्रबंधन

दिनेश सिंह
पादप रोगविज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

d- xkHkh oxh; Ql yk d jkx

1- enjkfey vkfl rk

y{k.k% इस रोग का आक्रमण पुराने पौधों की अपेक्षा नए पौधों पर अधिक होता है। इस रोग के लक्षण पत्तियों की निचली सतह पर नसों के बीच के स्थान पर कोणीय, अर्द्ध–पारदर्शक, बैंगनी–भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं तथा उसके ठीक पत्तियों की ऊपरी सतह पर हल्के पीले रंग के धब्बे बनते हैं। नमी वाले मौसम में, रोगजनक के सफेद–धूसर रंग के कवकजाल, बीजाणुधानी तथा बीजाणु पत्तियों की निचली सतह पर दिखाई देते हैं। रोगजनक फूलगोभी के कर्ड को भी संक्रमित करते है, जिससे संक्रमित 'कर्ड' के ऊपरी भाग भूरे रंग का हो जाता है जो बाद में गहरे भूरे से काले रंग में बदल जाता है।

jkx tud% यह रोग *पेरोनोस्पोरा पैरासिटीका* नामक कवक द्वारा होता है।

icU/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए समेकित विधियों जैसे कर्षण क्रियाओं के साथ–साथ कवकनाशियों का प्रयेाग तथा रोग प्रतिरोधी किस्मों को उगाकर किया जा सकता है। इस रोग का प्रबंधन के लिए, संक्रमित फसल अवशेषों एवं बहुवर्षीय खरपतवारों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। फसल–चक्र में गोभी वर्गीय फसलों के स्थान पर दूसरी फसलों को सम्मिलित करें। फसलों को अधिक सघन न उगाएं ताकि फसलों के पास अधिक आर्द्रता न बने। बुवाई के लिए स्वस्थ एवं साफ बीजों का प्रयोग करें। रोग प्रतिरोधी किस्मों को उगाएं जैसे फूलगोभी के लिए इग्लू, स्नोबॉल वाई, डाक एग्लान, आर.एस.–355, अर्ली विन्टर हवाइट हेड किस्में हैं। इसके अतिरिक्त कुछ किस्में जैसे कुआरी–17, कुआरी–8, कुआरी–4 तथा फर्स्ट अर्ली लक्ष्मी मध्यम रोग प्रतिरोधी हैं। पत्तागोभी की जनवरी किंग, बलखान, स्पिट्जकूल, अल्गारविया, जेनेवा–145–1 आदि रोग प्रतिरोधी किस्में हैं। बीज उपचार के लिए मेटालेक्सिल (1–2 ग्राम प्रति किग्रा. की दर से) प्रयोग करने से रोग का संक्रमण कम हो जाता है। रिडोमिल 25 डब्ल्यू. पी. (2 किग्रा./है. की दर से) का आवश्यकतानुसार छिड़काव करने से रोग के संक्रमण को कम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त डाइथेन एम–45 (0.2 प्रतिशत), एलिएट (0.3 प्रतिशत) का छिड़काव किया जा सकता है। दो कवकनाशियों को मिलाकर जैसे मेटालोक्सिल + मैन्कोजेब (0.25 प्रतिशत) और सिमोक्सिमिल (0.03 प्रतिशत) + मैन्कोजेब (0.2 प्रतिशत) का पानी में घोल बनाकर छिड़काव करने से भी इस रोग से फसलों को बचाया जा सकता है।

2- ruk xyu

y{k.k% इस रोग से प्रभावित पत्तियां दिन में मुरझा जाती हैं लेकिन रात में पुनः सामान्य हो जाती हैं। पुरानी पत्तियों में पीलापन ऊपरी भाग से शुरू होता है तथा बाद में वे अपरिपक्व अवस्था में झड़ जाती

हैं। जो पत्तियां भूमि को छूती हैं वहां पर अनियमित आकार के गहरे भूरे से काले धब्बे बनते हैं। इस भाग पर कवक की वृद्धि ठण्डे और आर्द्र मौसम में दिखाई देती है। पौधों में गलन डण्ठल से बढ़कर स्टाक तक हो जाती है, जबकि गहरे भूरे से काले धब्बे तने पर चारों तरफ से जमीन के पास घेरा बनाते हैं। इसलिए तना गल़कर ऊपर तक पहुंच जाता है तथा कभी–कभी पूरा तने का पिथ एवं कर्ड की शाखाएं भी सड़ जाती हैं।

jksxtud% यह रोग *स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोशियोरम* नामक कवक द्वारा होता है।

izcU/ku% इस रोग के प्रबंधन के लिए कृशिक, जैविक, कवकनाशी तथा रोग प्रतिरोधी किस्मों को सम्मिलित किया जा सकता है। फूलगोभी, धान–फूलगोभी फसल–चक्र अपनाकर इस रोग से बचा जा सकता है। संक्रमित पौधों तथा निचली पत्तियों को प्रत्येक सप्ताह निकालते रहने तथा प्रक्षेत्र की सफाई करते रहें। सूरजमुखी खली तथा जिप्सम का प्रयोग भूमि में करने से इस रोग के प्रभाव को कम कर सकते हैं। फूलगोभी की रोग प्रतिरोधी किस्मों जैसे मास्टर ओसेना, एवान्स, जैनवान, अर्ली विन्टरस, एडमस हेड, और ओलीम्पस आदि को उगायें। कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव फसलों पर करें। कार्बेन्डाजिम (0.5 प्रतिशत सान्द्रता) का प्रयोग बुवाई के पहले भूमि में करने से रोग की सघनता को घटाया जा सकता है। भूमि को मई–जून के महीने में पॉलीथिन से ढक करके उपचारित करें। *ट्राइकोडरमा विरिडी* तथा *ट्राइकोडरमा हारजीएनम* का प्रयोग भूमि में उपचारित करने से रोगजनक का प्रभाव कम हो जाता है।

3- ,YVjujfj;k i.kZ fpÙkh

y{k.k% रोपण क्यारी में पौद के तनों तथा पत्तियों पर छोटे, गहरे रंग की चित्तियां दिखाई देती हैं। बड़े पौधों में भूमि के सभी ऊपरी भाग इस रोग से संक्रमित होते हैं। पत्तियों पर छोटी भूरे से काले रंग की चित्तियां दिखाई देती हैं, जो बढ़कर संकेन्द्री वलय बन जाती हैं, जोकि इस रोग का मुख्य लक्षण है। प्रत्येक पर्ण चित्ती एक पीले हरिमाहीन ऊतक से घिरी होती है। फूलगोभी तथा ब्रोकली के हेड भूरे हो जाते हैं, जोकि सामान्यतः अकेले या फूल के गुच्छों की किनारे से शुरू होता है। जो पौधे बीज उत्पादन के लिए उगाए जाते हैं उनके मुख्य अक्ष, पुष्पक्रम, शाखाओं तथा फलियों पर गहरे ऊतकक्षयी विक्षत दिखाई देते हैं।

jksxtud% यह रोग *एल्टरनेरिया* की तीन प्रजातियों *ए. ब्रेसिसीकोला, ए. ब्रेसिकी* तथा *ए. रफेनी* नामक कवकों द्वारा होता है।

izcU/ku% इस रोग के प्रबंध के लिए कर्षण, जैविक, रासायनिक एवं रोग प्रतिरोधी पौधों का उचित उपयोग करके किया जा सकता है। विभिन्न कर्षण क्रियाओं जैसे स्वस्थ साफ बीजों का चुनाव, लम्बे समय का फसल–चक्र, खेती की सफाई, खरपतवारों का नियंत्रण, उचित दूरी पर पौधों का रोपण, सन्तुलित खादों तथा उर्वरकों का उपयोग तथा उचित जल निकास से रोग को कम किया जा सकता है। फूलगोभी तथा सफेद पत्तागोभी के बीजों का उपचार गरम जल (45^0 सेल्सियस पर 30 मिनट के लिए या 45^0 सेल्सियस पर 20 मिनट के लिए) उपचारित करें। बीज को थीरम (0.2 प्रतिशत) या आइप्रोडियान (1.25 ग्राम/किलो बीज की दर) घोल में डुबाने से भी *एल्टरनेरिया* का संक्रमण कम

हो जाता है। बीजों को जैविक विधि जैसे *ग्लियोक्लेडियम विरेन्स*–61 *ट्राइकोडरमा ग्रीसीओवीरिडीस* (माइको स्टाप) नामक कवकों से उपचारित करें। एल्टरनेरिया रोग प्रतिरोधी किस्में बहुत कम हैं। फिर भी फूलगोभी किस्म पूसा सुभ्रा तथा ब्रुसेल्स स्प्राउट्स की किस्म केम्ब्रीज नम्बर–5, *ए. ब्रेसिकी* तथा *ए. ब्रेसिसीकोला* रोग प्रतिरोधी हैं। थीराम + कार्बेडांजिम या एकान्तर में मैन्कोजेब + कीटनाशक प्रयोग करने से रोग की रोकथाम हो जाती है। इप्रोडियाने (0.5–1.0 किग्रा. की दर से) के तीन छिड़काव हरे फली बनते समय से काटते समय तक 21 दिन के अंतराल पर करें। मैन्कोजेब, जीरम तथा जीनेब का तीन छिड़काव करने पर *ए. ब्रेसिसीकोला* पत्तागोभी की पर्ण चित्ती रोग से बचाया जा सकता है। मैन्कोजेब (0.2 प्रतिशत) या फालपेट (0.2 प्रतिशत) कटाई के पहले छिड़काव करने पर पत्तागोभी के हेड्स को भण्डारण के दौरान *ए. ब्रेसिकी* गलन से बचाया जा सकता है। इप्रोडियोन का टाल्क पाउडर के साथ मिश्रण में डुबोकर पत्तागोभी के भण्डारण गलन जो कि *ए. ब्रेसिसीकोला* के द्वारा होता है, प्रभावी ढंग से नियंत्रण किया जा सकता है।

4- dkyk foxyu

y{k.k% इस रोग से पौधे, पौद से लेकर परिपक्व किसी भी अवस्था में प्रभावित हो सकते हैं। नई पौद की निचली या बीजपत्रों पर ऊतकक्षयी विक्षतियां पाई जाती हैं, जो काली दिखती हैं। पत्तियां मर जाती हैं जो अन्त में गिर जाती हैं। इस रोग से प्रभावित पत्तियां किनारे से पीली होकर मुरझाने लगती हैं। रोग का विस्तार ऊतकक्षयी विक्षति पत्ती के किनारे से शुरू होकर मध्य शिरा की तरफ बढ़ती है जो अंग्रेजी के अक्षर "V" के समान दिखाई देती हैं। ऊतकक्षयी भाग में शिराएं भूरे से काले रंग की हो जाती हैं। रोगी पौधे के तने का संवहनी भाग काला हो जाता है। फूलगोभी तथा पत्तागोभी का ऊपरी हिस्सा (कर्ड) काला और मुलायम होकर सड़ने लगता है।

jkxtud% यह रोग *जैन्थोमोनास कम्प्रेस्ट्रिस* पैथोवार *कम्प्रेस्ट्रिस* नामक जीवाणु द्वारा होता है।

izca/ku% बुवाई के लिए स्वस्थ बीजों का चुनाव करें। खेत से खरपतवारों तथा संक्रमित पौद मलबे को इकट्ठा करके नष्ट करें। जीवाणु एक वर्ष तक मृदा में जीवित रह सकता है। इसलिए गोभी वर्गीय फसलों के अतिरिक्त दूसरी फसलों को एक वर्ष का फसल–चक्र में शामिल करें। बीजों को गरम जल (50^0 सेल्सियस पर 25–30 मिनट तक) से उपचारित करें। बीजों को जीवाणुनाशकों जैसे स्ट्रेप्टोमाइसीन, औरियोमाइसीन से उपचारित करने के बाद सोडियम हाइपोक्लोराइट से भी उपचारित करें। इसके अतिरिक्त बीजों को कैल्सियम हाइपोक्लोराइट (10–20 ग्राम/किग्रा. की दर से) उपचारित करें। स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (100 पी.पी.एम.) + कैप्टान (2000 पी.पी.एम.) के मिश्रण में बीज को डुबोकर उपचारित करने से भी इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। बुवाई के लिए रोग प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव करें।

5- en| foxyu@dM foxyu

y{k.k% प्रारम्भ में पत्तियों के प्रभावित ऊतकों पर जलीय ऊतकक्षयी लक्षण दिखाई देते हैं जो काफी तेजी से बढ़ते हैं। इस रोग से प्रभावित पौधों से सड़ी हुई दुर्गन्ध आने लगती है। फूलगोभी तथा पत्तागोभी के प्रभावित कर्ड तथा मुण्डक से फूल के डण्ठल नहीं निकलते है।

jkx tud% यह रोग *इरविनिया कैरोटोवोरा* उपजाति *कैरोटोवोरा* नामक जीवाणु द्वारा होता है।

icU/ku% इस रोग के प्रबंध के लिए फसल की कटाई के समय कर्ड व मुण्डक को घाव व खरोंच से बचाएं। स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का कॉपर आक्सीक्लोराइड के साथ मिलाकर छिड़काव करने पर रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। फूलगोभी के बीज उत्पादन के समय कर्ड विगलन से बचाने के लिए क्लोरोफिनिकाल तथा कैप्टोफाल (1:25) का गारा (पेस्ट) बनाकर कर्ड को लेप करने तथा इन दोनों का घोल बनाकर (0.01+0.25 प्रतिशत) फसलों पर छिड़काव करें।

[k- cSxu dk jkx

1- QkekfIl l vxekjh ,o Qy foxyu

y{k.k% इस रोग का प्रभाव पौद में आर्द्र पतन, तनों में कैंकर, पर्ण अंगमारी तथा फल विगलन के रूप में पौधों पर दिखायी देता है। पत्तियों एवं तनों पर गोल, मटमैले या भूरे धब्बे बनते हैं। बाद में, उन धब्बों पर काले रंग के बिन्दु आकार की कवकीय संरचना (पीक्निडिया) बनती है। प्रभावित पौधों की पत्तियां छोटी होती हैं तथा सहायक कलियां प्रायः मर जाती हैं। इस रोग के संक्रमण से तने के आधार पर एक घेरा बन जाने से पौधों में म्लानि के लक्षण दिखाई देते हैं। हवा के तेज झोंके से संक्रमित पौधे मुख्य तने के टूटने के कारण गिर जाते हैं। जब पौधे पर फल लगे होते हैं तो उन पर हल्के पीले गढ्ढेदार धब्बे बनते हैं जो फैलकर फल को सड़ा देते हैं तथा पूरा फल पीला हो जाता है तथा उन पर भूरे क्षेत्र का सकेन्द्री छल्ले बने होते हैं।

jkx tud% यह रोग *फोमोप्सिस वेक्सांस* नामक कवक द्वारा होता है।

icU/ku% संक्रमित पौधे के अवशेषों को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें तथा कुछ समय (10–15 दिन) के लिए खुला छोड़ दें। कम से कम तीन वर्ष का फसल–चक्र अपनाएं। बीजोपचार के लिए 50^0 सेल्सियस तापमान पर गरम जल में बीजों को 30 मिनट तक डुबाए रखें तथा बाद में उन्हें सुखा कर प्रयोग में लाए। बीज को कार्बेन्डाजिम (2 गाम/किग्रा. बीज) अकेले या कार्बेन्डाजिम + थाइरम (2 ग्राम/किग्रा. बीज) के मिश्रण से उपचारित करें। फसल पर कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम/लिटर पानी) या मैंकोजेब (2.5 ग्राम/लिटर पानी में) का पानी में घोल बनाकर छिड़काव 10–15 दिन के अंतराल पर 3–4 बार करें।

2- LDyjkfVfu;k Eykfu

y{k.k% इस रोग के लक्षण पौधों में पुष्पक्रम के पास गोलाकार से लम्बवत जलीय, विक्षतियों के रूप में दिखाई देते हैं जो बाद में जलीय मृदु विगलन की तरह दिखते हैं। संक्रमण बिन्दु पर सूखे बदरंग के धब्बे विकसित होते हैं, जिसके फलस्वरूप वे ऊतकक्षयी हो जाते हैं। यदि संक्रमण तने के आधार पर होता है तो पूरे पौधे की म्लानि हो जाती है। कभी–कभी इस रोग से कुछ शाखाएं प्रभावित होती हैं तो आंशिक में म्लानि कहते है। ठण्डे एवं आर्द्र मौसम में, रोगजनक के कवकजाल पौधे से भूमि के ऊपरी भाग से बाहर निकलते हैं और क्रीमी रंग के स्क्लेरोशिया बनते हैं जो बाद में काले रंग के हो जाते हैं। अधिक नमी की अवस्था में पौधे के प्रभावित भाग पर सफेद कवक की वृद्धि दिखाई देती है।

रोगजनक फलों को भी संक्रमित करते हैं। फलों के विगलन भाग पर बहुत से स्क्लेरोशिया दिखाई पड़ते है। संक्रमित तने को फाड़ने पर बहुत से स्क्लेरोशिया ऊतकों में दिखाई देते हैं।

jkx tud% यह रोग *स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोशियोरम* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें। कम से कम 2–3 साल का फसल–चक्र अपनाएं, जिसमें धान एवं मक्का आदि फसलों को सम्मिलित करें। गोबर की सड़ी खाद का प्रयोग करें। कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) एवं थायोफेनेट मिथाइल (0.2 प्रतिशत) को वैकल्पिक रूप में 10 दिन के अंतराल पर पौधों पर छिड़काव करें।

3- thok.kfod Eykfu

y{k.k% इस रोग के कारण पौधों की नई पत्तियां अचानक मुरझाकर नीचे की ओर झुक जाती हैं तथा अन्त में पूरा पौधा सूख जाता है। लेकिन पत्तियां थोड़ी पीली या पीली नहीं पड़ती हैं। नये पौधों में संक्रमण होने पर वे तुरंत मर जाते हैं लेकिन पुराने पौधों में संक्रमण होने पर पहले पौधों के कुछ भाग या पूरी पौधे की पत्तियां मुरझायी हुई तथा बदरंग होती हैं। प्रभावित पौधों के संबहनी तंत्र, हल्के पीले से भूरे रंग के दिखाई देते हैं। यदि ऐसे पौधों के तनों को काटकर एक शिरे के गिलास में थोड़ा साफ पानी लेकर उसमें डाल दिया जाए, तो उसमें से सफेद–भूरा–लसदार रस निकलकर पानी को दूधिया बना देता है, जो इस रोग की मुख्य पहचान है।

jkx tud% यह रोग *राल्स्टोनिया सोलेनेसिएरम* रेस 1 बायोवार 3 तथा 4 नामक जीवाणु द्वारा होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंध करना कठिन होता है फिर भी बताएं गए उपायों को अपनाकर रोग के प्रभाव को कम किया जा सकता है जैसे संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। बुवाई के लिए स्वस्थ बीजों का प्रयोग करें। 2–3 वर्ष का फसल–चक्र अपनाएं। खेत में जल निकास का उचित प्रबंध करें। खेत से स्वैच्छिक पौधे तथा खरपतवारों को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। पौद को रोगरहित मृदा में उगाएं। खेत में पौद रोपण से पहले ब्लीचिंग पाउडर (12–15 किग्रा. प्रति हैक्टर की दर से) को कूड़ों में डालें। रोगरोधी किस्मों जैसे सूर्या, स्वेथा, अन्नपूर्णा, बी.बी.–7, बी.बी–13–1, बी.बी.–44, अर्का केशव, बी.बी.–46, चेस–243, अर्का नीलकण्ठ, अर्का निधि, आर.एच.आर.–12, आई.एच. आर.–21, आई.एच.आर.–54, ई.जी.–191, पूसा अनुपमा, हिसार श्यामल तथा सिंगनाथ आदि को उगाएं।

4- NksVh iÙkh jkx

Yk{k.k% इस रोग से पौधों की पत्तियां छोटी, पतली तथा हल्की हरी हो जाती हैं। बाद में आने वाली पत्तियों का आकार और छोटा हो जाता है। रोगी पौधे झाड़ीनुमा दिखाई पड़ते हैं और उनमें फूल नहीं बनते हैं। यदि बनते भी है तो हरे रंग के हो जाते हैं। फल बिलकुल नहीं बनते हैं। संक्रमण के बाद फलों की वृद्धि रुक जाती है और वे सख्त हो जाते हैं तथा पकते नहीं हैं।

jkx tud% यह रोग *कैंडीडेटस फाइटोप्लाज्मा* द्वारा होता है।

ic/ku% रोगी पौधों, खरपतवारों (धतूरा, *विंका रोजिया*) को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। रोग वाहक कीटों के नियंत्रण के लिए आक्सीमिथाइल डिमेटान (मेटासिस्टाक्स), डाइमेथोएट (रोगर) कीटनाशी का

एक लिटर एक हजार लिटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से फसलों पर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15–20 दिन के अंतराल पर 3–4 बार छिड़काव करें। रोग प्रतिरोधी किस्में जैसे पूसा पर्पिल क्लस्टर, ओसी मंजरी, गोटा, चकलासी डोली, डोली–5, सीएचबीआर–3, डीबीएसआर–44, डीबीएसआर–91–2, एनडीबीएच–8, एचओई–414, जेबी–64–2, पीबीएस–12–1 को उगाएं।

x- VekVj d jkx

1- vkn iru

y{k.k% रोगी बीज काफी मुलायम, भूरा या काले रंग का हो जाता है तथा दबाने पर आसानी से फट जाता है। यदि बीज से अंकुर निकल भी रहे हों, तो वे जमीन से बाहर निकलने से पहले ही सड़ जाते हैं। भूमि की सतह के पास पौध के तने पर भूरे रंग के जलीय तथा नरम धब्बे बनते हैं। रोगी भाग काफी कमजोर पड़कर सिकुड़ जाता है। फलस्वरूप पौध उसी स्थान से टूटकर या मुड़कर नीचे गिर जाते है। पत्तियों का पीला पड़ना और मुरझाकर सूख जाना इस रोग की मुख्य पहचान है। नर्सरी में खाली स्थान दिखाई देने लगते हैं।

jkx tud% यह रोग *पीथियम अफेनीडरमेटम* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए बीज को ब्लाइटाक्स (2.5 ग्राम/लिटर) की दर से उपचारित करें। बुवाई के एक सप्ताह पहले पुआल व अन्य घास–फूस की नर्सरी में डालकर जला देने से आर्द्र पतन का प्रकोप कम हो जाता है। पौधशाला की क्यारी भूमि से ऊपर उठी होनी चाहिए। जल निकास का उचित प्रबंध करें। पौधशाला की मृदा को थीरम 3 ग्राम/वर्ग मीटर की दर से उपचारित करें।

2- VekVj dk cdk; jkV

y{k.k% पीले और गहरे भूरे रंग के गाढ़े छल्ले फल पर दिखाई देते हैं। ये छल्ले छोटे भी हो सकते हैं या फल की सतह का एक बड़ा हिस्सा ढक सकते हैं। जिसके कारण फल सड़ जाते हैं जिसके फलस्वरूप उपज कम होती है।

jkx tud% यह रोग *फाइटोफ्थोरा पैरासिटिका* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए टमाटर की खेती लगातार एक ही खेत में न करें तथा इसे अन्य कुल की सब्जियों के साथ लगाएं। खरपतवारों का नियंत्रण और पानी का अच्छा निकास इस रोग की रोकथाम के लिए आवश्यक है। आवश्यकतानुसार सिंचाई हल्की करें। पौधे से पौधे की दूरी अधिक रखें। पत्तियों तथा फलों को भूमि से 30 सें.मी. ऊपर रखें, जिससे नमी पौधे के पास कम रहे। खड़ी फसल में कैप्टाफॉल, मैंकोजेब तथा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2–0.25 प्रतिशत) का रोपाई के क्रमशः 40, 55 तथा 70 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

3- iNrh >qylk

y{k.k% पछेती अंगमारी रोग के लक्षण पत्तियों, तना तथा फलों पर दिखायी देते है। पत्तियों के किनारों पर हल्के जलीय धब्बे दिखाई देते हैं। नमीयुक्त मौसम में, धब्बे पत्ती पर तेजी से बढ़कर पूरी पत्ती को

आक्रान्त कर लेते हैं, जिससे पत्तियों पर गहरे, भूरे या काले रंग के चितकबरे क्षेत्र बन जाते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर कवक की सफेद वृद्धि ऊतकों के मरे हुए भाग के चारों तरफ दिखाई देती है। तने पर भूरे रंग की पट्‌टी दिखाई देती है। टमाटर के फलों पर गहरे जैतूनी रंग के चिकनाई लिए हुए धब्बे बनते हैं, जो बढ़कर पूरे फल पर फैल जाते हैं।

jkxtud% यह रोग *फाइटोफ्थोरा इनफेस्टांस* नामक कवक द्वारा होता है।

i cU/ku% इस रोग के प्रबंधन के लिए रोगी फलों को खेत से इकट्‌ठा करके गड्‌ढे में दबा दें। टमाटर की खेती आलू के खेत के पास न करें। जल निकास की उचित व्यवस्था करें तथा खेत को खरपतवारों से मुक्त रखें। टमाटर की फसल एक ही खेत में बार–बार न उगाएं। जिस खेत मे टमाटर की खेती करनी हो, उस खेत को गर्मियों में गहरी जुताई करें। इस रोग का प्रकोप ज्यादा होने पर डायथेन एम–45, जिनेब (2–2.5 किग्रा./1000 लिटर पानी/है.) का छिड़काव करें। रिडोमिल एम–जेड, रिडोमिल–45, करजेट एम–8 नामक कवकनाशियों का 0.2–0.25 प्रतिशत पानी में घोल बनाकर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

4- *¶;tfj;e* Eykfu

y{k.k% इस रोग के प्रभाव से रोगग्रस्त पौधों के नीचे की पत्तियां पीली पड़ने लगती है। यह पीलापन धीरे–धीरे पौधों के ऊपरी भाग तक बढ़ जाता है। नयी पत्तियों की शिराओं का गहरा रंग हल्का हो जाता है तथा पत्तियां नीचे की ओर झुक जाती है। अन्ततः पौधा सूख जाता है। रोगी पौधों के तने को फाड़कर देखने पर, तने का भीतरी भाग भूरे रंग का दिखाई देता है। पौधों की जड़ें काली हो जाती है जो बाद में सड़ने लगती है। नम मौसम में, रोगजनक के लाल गुलाबी रंग के कवकजाल की बढ़वार भूमि के पास रोगी तने पर दिखाई देती है।

jkxtud% यह रोग *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* फा.स्पी. *लाइकोपर्सिकी* नामक कवक द्वारा होता है।

i cU/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए रोगी पौधों को जड़ सहित खेत से उखाड़कर नष्ट कर दें। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें। पारदर्शी सफेद पालीथीन चादर से मृदा का मल्च (पलवार) करने से यह रोग कम लगता है। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था करें। नाइट्रोजन उर्वरकों का प्रयोग कम मात्रा में करे तथा फास्फोरस उर्वरक का सुपर फास्फेट के रूप में प्रयोग करें। बीजों को कार्बेन्डाजिम (2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर) से उपचारित करें। रोगरोधी किस्में जैसे मीनाक्षी, पंत बहार आदि उगाएं।

5- Tkhokf.od Eykfu

y{k.k% पौधे की म्लानि के पहले ही नीचे की पत्तियां मुरझाने लगती हैं। ऐसे पौधों के संवहन ऊतक भूरे हो जाते हैं। तने से अपस्थानिक जड़ों का निकलना बढ़ जाता है। रोगग्रस्त तने को काटकर पानी में रखने से दूधिया स्राव निकलने लगता है। अत्यधिक फूल आने के समय पौधे का बिना पीला हुए अचानक मुरझा जाना इसका मुख्य लक्षण है। साधारणतः संक्रमित पौधे की जड़ें स्वस्थ दिखाई देती हैं और प्रायः अच्छी तरह से विकसित होती हैं।

jkx tud% यह रोग *राल्स्टोनिया सोलेनेसिएरम* रेस 1 बायोवार 3 तथा 4 नामक जीवाणु द्वारा होता है।

i|c/ku% इस रोग को पूर्णतः नियंत्रण करना बहुत कठिन है परन्तु खेत में गोबर की खाद प्रचुर मात्रा में लगभग 25 टन प्रति हैक्टर या हरी खाद का प्रयोग करने से रोग कम हो जाता है। *स्यूडोमोनास फ्लोरोसेन्स* का मिट्टी में 5 किग्रा. प्रति हैक्टर की दर से भुरकाव करने से लाभ होता है। ब्लीचिंग पाउडर (12 -15 किग्रा./है.) या करंज की खल्ली के प्रयोग से भी रोगजनक की मिट्टी में वृद्धि कम होती है। खेत या पौधशाला में जल निकास की व्यवस्था समुचित होनी चाहिए। रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ देना श्रेयकर होता है ताकि रोगी पौधे रोग के फैलाने में मदद न कर पाएं। रोग क्षेत्रों में रोग की प्रबल संभावना हो वहां पर प्रतिरोधी किस्मों जैसे अर्का आभा, अर्का आलोक, सोनाली, अर्का सम्राट, अर्का रक्षक तथा डी.पी.बी. 38, पालम पिंक, पालम प्राइड तथा स्वर्ण संपदा को उगाया जाना चाहिए।

6- VekVj dk i.kdpu

y{k.k% यह टमाटर का एक महत्वपूर्ण रोग है जिससे फसल को बहुत क्षति होती है। इस रोग में पत्तियां मुड़ जाती हैं। पत्तियां आकार में छोटी तथा सतह खुरदरी हो जाती है। इसके अतिरिक्त कई शाखाएं भी निकल आती हैं। पौधों की बढ़वार रुक जाती है। पौधों की गांठे तथा दो गांठों के बीच की दूरी कम हो जाती है जिससे पौधा झाड़ीनुमा दिखाई देता है। संक्रमित पौधे में फल नहीं लगते, यदि लगते भी हैं तो बहुत कम। बरसात के मौसम वाली फसल में, यह रोग फसल को बहुत अधिक क्षति पहुंचाता है।

jkx tud% यह रोग *टोमाटो यलो लीफ कर्ल* वायरस द्वारा होता है।

i|c/ku% पौद को सफेद मक्खियों से बचाने के लिए क्यारियों पर कपड़े की मसहरी लगा देनी चाहिए। रोपाई से पहले प्रभावित पौद को क्यारियों से निकाल देना चाहिए। पौद तैयार करने के लिए पौधशाला को फ्यूराडोन या डिस्टकस 1 किग्रा. प्रति हैक्टर की दर से उपचारित करने से सफेद मक्खियों की संख्या को कम किया जा सकता है। साइकोलेस (200 से 500 पी.पी.एम.) को नर्सरी में छिड़कने पर रोग का प्रभाव कम हो जाता है।

?k- fepl dk jkx

1- ';keo.k rFkk foxyu

y{k.k% प्रारम्भ में पौधों की शाखाओं का ऊपरी भाग सूखने लगता है और रोग ऊपर से नीचे की तरफ बढ़ता है। रोगी शाखाओं की पत्तियां गिरने लगती है। फलों के ऊपर रोग के लक्षण छोटे–छोटे, काले और गोल धब्बों के रूप में दिखाई पड़ते हैं। ये धब्बे फल की लम्बाई में किनारों पर गहरे रंग के होते हैं। फल सड़ने लगता है।

jkx tud% यह रोग *कोलेटोट्राइकम कैपसीकी* नामक कवक द्वारा होता है।

i|c/ku% रोग रहित बीजों का चयन करें। कैप्टान या ब्लाइटाक्स– 5.0 (2.0 ग्राम/लिटर पानी) पानी में मिलाकर छिड़काव करें। पौध अवशेषों को कटाई के बाद खेत से निकाल कर नष्ट कर दें।

2- i.k fpÙkh

y{k.k% इस रोग के लक्षण पत्तियों तनों व फलों पर छोटे गोलाकार जलीय धब्बे बनते है। संक्रमित पौधों की पूरी पत्तियां पीली पड़ जाती है तथा गिर जाती है।

jksx tud% यह रोग *सरकोस्पोरा कैपसीकी* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% साइटोलान, ब्लू कॉपर–50, ब्लाइटाक्स–50 (0.2–0.3 प्रतिशत) के घोल का खड़ी फसल पर छिड़काव करें। रोग प्रतिरोधी प्रजातियां जैसे सी–1, जी–4, पूसा ज्वाला, टी.सी.–2 उगाएं।

3- Ekkstd rFkk i.k dqpu

y{k.k% पत्तियों पर छोटे–छोटे पीले रंग के चितकबरे धब्बे बनते हैं। पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है। हरा भाग छिछले गड्ढ़ों का रूप ले लेता है, पत्तियों के किनारे नीचे झुक जाते हैं और कटे हुए से हो जाते है। बाद में पत्ती का पीले भाग सूखकर नष्ट हो जाता है। पर्णकुंचन में पत्तियां नीचे की ओर मुड़ जाती हैं। पौधे की बढ़वार रुक जाती है।

jksx tud% यह रोग मोजेक वायरस एवं पोटैटो वायरस + पोटेटो ए वायरस एक्स के द्वारा होता है।

ic/ku% रोगी पौधे को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। कन्फीडोर– 200 एस.एल (2.0 मि.लि./1.0 लिटर) पानी की दर से छिड़काव करें।

p- vkyw ds jksx

1- iNrh >qylk

y{k.k% पौधों की निचली पत्तियों पर भूरे जलीय धब्बे दिखायी पड़ते हैं। ये धब्बे पौधे के किसी भी भाग में बन सकते हैं तथा धीरे–धीरे पौधे के अन्य भागों पर फैल जाते हैं। अनुकूल वातावरण मिलने पर पूरे पौधे का ऊपरी भाग 5–8 दिन में नष्ट हो सकता है। शुष्क मौसम में रोगी पत्तियां सिकुड़कर कड़ी हो जाती हैं और नम मौसम में वे सड़ने लगती है। इसमें एक विशेष प्रकार की दुर्गन्ध भी निकलती है। धब्बों के ठीक नीचे पत्ती की निचली सतह पर सफेद रंग की कवक वृद्धि दिखाई देती है। रोगी कन्दों का छिलका भूरा हो जाता है। रोगी कन्द खेत में या भण्डार में सड़ने लगते हैं।

jksx tud% यह रोग *फाइटोफ्थोरा इन्फेस्टैन्स* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% रोगरोधी प्रजातियां जैसे कुफटी बादशाह, कुफरी जवाहर, कुफरी गिरीराज, चिप्सोना–1 और चिप्सोना–2 आदि को लगाये। रोग रहित कन्दों का प्रयोग बुवाई के लिए करें। संक्रमित कन्दों या पौधों के अवशेषों का इकट्ठा करके नष्ट कर दें। रिडोमील एम.जैड.–72 (2.0 ग्राम/लिटर पानी) की दर से फसलों पर छिड़काव करें।

2- vxsrh >qylk

y{k.k% प्रारम्भ में पत्तियों पर छोटे–छोटे धब्बे बनते हैं, जिनका आकार बढ़कर गोलाकार, अण्डाकार या कोणीय हो जाता है। शुरू में धब्बों का रंग हल्का–भूरा होता है, जो बाद में कवक की वृद्धि के कारण गहरा हरा तथा नीला हो जाता है। शुरूआत सबसे पहले आलू की निचली पत्तियों पर होती है

और धीरे–धीरे रोग ऊपर की पत्तियों पर जाता है। पुराने धब्बे के मध्य में चांदमारी जैसा गोल निषान इस रोग की खास पहचान है। धब्बे के चारों ओर प्रायः एक पतला पीला गोलाकार क्षेत्र बनता है जो धब्बे के बढ़ने के साथ–साथ ही बढ़ता है। रोगी पौधे की पत्तियां पीली पड़ने लगती है और अन्त में मुरझाकर गिर जाती है।

jkxtud% यह रोग *एल्टरनेरिया सोलेनी* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें। 2–3 साल का फसल–चक्र अपनाएं। संक्रमित पौधों तथा कुन्दों को खेत से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। रोग रोधी किस्में जैसे कुफरी नवीन, कुफरी सिन्दुरी व कुफरी जीवन लगायें। डायथेन एम–45 (2.0 ग्राम/लिटर पानी) या ब्लाइटाक्स–50 (2.5 ग्राम/लिटर पानी), या क्लोरोथैलोनिक (2.5 ग्राम/लिटर) का घोल बनाकर फसलों पर छिड़काव करें। भण्डारण के समय रोगी तथा कटे–फटे कन्दों को छांटकर अलग करके नष्ट कर दें। मृदा में ब्लिचिंग पाउडर 12.5 किग्रा. प्रति हैक्टर की दर से मिलाएं।

3- dkyh llh ,o ruk ddj

y{k.k% आलू के छिलके पर गहरे भूरे या काले रंग की कड़ी पपड़ी दिखाई देती है। तनों पर भूमि की सतह के पास कुछ धसे हुए लम्बे काले धब्बे दिखाई देते है। रोगी पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाती है तथा अन्त में मुरझाकर गिर जाती है।

jkxtud% यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनी* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% खेत में जल निकास का उचित प्रबन्ध करें। संतुलित खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करें। स्वस्थ एवं प्रमाणित कन्दों का प्रयोग बुवाई के लिए करें। तीन वर्ष का फसल–चक्र अपनायें तथा उसमें प्याज या लहसुन को सम्मिलित करें। बीज कन्दों को बोरिक अम्ल के 3 प्रतिशत घोल में 20–25 मिनट तक डुबोकर बुवाई।

4- lkekU; Ldc

y{k.k% कन्दों पर छोटे, भूरे थोड़ा उठे हुए धब्बे दिखाई देते हैं। जो बाद में बड़े होकर आपस में मिल जाते है और प्रभावित कन्द खुरदरे तथा दरारें पड़ जाती हैं।

jkxtud% यह रोग *स्ट्रेप्टोमाइसीज स्कैबी* नामक जीवाणु द्वारा होता है।

ic/ku% स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग बुवाई के लिए करें। संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करें। हरी खादों का प्रयोग करें। 3.0 प्रतिशत बोरिक अम्ल के घोल में कन्दों को 20–25 मिनट तक डुबोकर रखने के बाद बुवाई करें।

5- Hkjk lMu ;k thok.kq t Xykfu

y{k.k% रोगी पौधा मुरझाकर सूख जाता है। रोगी पौधों की जड़ें तथा तने का भीतरी भाग भूरे रंग का हो जाता है। रोगी पौधे के तने या कन्दों को काटकर कुछ देर के लिए पानी में छोड दिया जाए तो उसमें से सफेद या मटमैला चिपचिपा पदार्थ निकलता है।

jkx tud% यह रोग *राल्स्टोनिया सोलेनोसिएरम* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज कन्दों का चुनाव करें। कन्दों को 0.02 प्रतिशत स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल में 30 मिनट तक डुबोकर रखें। दो वर्ष का फसल–चक्र अपनाएं। जल निकास की उचित व्यवस्था करें। ब्लीचिंग पाउडर 12–15 किग्रा. प्रति हैक्टर की दर से बुवाई के समय खेत में कूड़ों में प्रयोग करें।

6- dkyh e[kyk ,oa thok.kq en foxyu

y{k.k% इस रोग के लक्षण भूमि की सतह के पास तने पर भूरे काले दाग दिखाई देते हैं, बाद में तने का संक्रमित भाग सिकुड़कर सड़ने लगता है। पत्तियां पीली होने लगती हुईं और अन्ततः पौधा मुरझाकर सूख जाता है। भण्डारण के समय कन्दों का भीतरी भाग सड़कर मुलायम हो जाता है।

jkx tud% यह रोग *इर्वीनिया कैरोटोवोरा* उपजाति *कैरोटोवोरा, इ. कैरोटोवोरा* उपजाति *एट्रोसेप्टिका* नामक जीवाणुओं द्वारा होता है।

ic/ku% बुवाई के लिए स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज कन्दों का प्रयोग करें। कन्दों को विभिन्न कर्षण क्रियाओं के समय चोट से बचाएं।

7- i.k dqpu

y{k.k% रोग में पत्तियों के ऊपर कुछ–कुछ पीले धब्बे अधिक बड़े और अधिक स्पष्ट होते है। रोग की अन्तिम अवस्था में यह रंग अधिक नष्ट हो जाता है। रोगी पत्तियां भयंकर रूप से विकृत एवं भंगुर होती हैं तथा इनके किनारे लहरदार हो जाती हैं।

jkx tud% यह रोग पोटैटो वायरस + पोटेटो ए वायरस एक्स नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% रोगी पौधे को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। कन्फीडोर 200 एम.एल. (100 मि.लि. 500 लिटर पानी) प्रति हैक्टर की दर से फसल पर छिड़काव करें।

8- i.k cYyu

y{k.k% रोग का विशिष्ट लक्षण पत्तियों का मध्य, सिरे से ऊपर की ओर मुड़ जाना है। इसी लक्षण के आधार पर इस रोग को पर्ण–वेल्लन की संज्ञा दी गई है। लक्षण पौधों की निचली पत्तियों से ही शुरू होता है। पत्तियां छोटी, मोटी व भंगुर हो जाती है और छूने मात्र से ही पत्ती के ऊतक टूट जाते हैं। ऐसे पौधों को छूने से एक विशेष प्रकार की खड़खड़हट की आवाज मालूम पड़ती है। पौधों की वृद्धि रुक जाती है।

jkx tud% यह रोग पोटैटो लीफ रोल वायरस नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% बुवाई के लिए स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें। रोगी पौधे को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। बड़े आकार के कन्दों का प्रयोग बुवाई के लिए करें। कन्फीडोर 200 एम.एल. (100 मि. लि. 500 लिटर पानी) प्रति हैक्टर की दर से फसलों पर छिड़काव करें।

9- ek t:d

y{k.k% पौधों का छोटा होना एवं पत्तियों पर हल्का चितकबरापन इसके खास लक्षण हैं। पत्तियों का किनारा नीचे की ओर ऐंठ जाता है। दिन का तापमान 21°सेल्सियस तक पहुंचने पर इस रोग के लक्षण दिखाई पड़ सकते हैं। अक्सर स्वस्थ दिखाई देने वाला पौधा विशाणुओं से संक्रमित रहता है जिसका फसल की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

jkx tud% यह रोग पोटैटो वायरस एक्स तथा पोटैटो वायरस वाई द्वारा होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए रोग ग्रस्त पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। कन्फीडोर 200 एम.एल. (100 मि.लि. 500 लिटर पानी) प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

N- fHk.Mh d: jkx

1- Eykfu

y{k.k% यह रोग नये पौधों (3–4 सप्ताह) पर रोग के लक्षण अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। रोग ग्रस्त पौधे दोपहर के समय मुरझा जाते है तथा सुबह पुनः स्वस्थ दिखाई देते हैं। पौधे धीरे–धीरे पीले होकर सूख जाते हैं। मृदा से 2–3 से.मी.. ऊपर तक तनों का भीतरी भाग भूरा हो जाता है।

jkx tud% यह रोग *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* पैथोवार *वैसिनफैक्टम* नामक कवक के द्वारा होता है।

ic/ku% स्वस्थ तथा प्रमाणित बीज का प्रयोग बुवाई के लिए करें। कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम/किग्रा. दर से बीजों का उपचार करें। फसल–चक्र अपनायें।

2- pf.ky vkfl rk

y{k.k% रोग की प्रारम्भिक अवस्था में पत्तियों के दोनों सतहों पर सफेद रंग के कवक जाल के धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े सफेद धूसर चूर्ण पत्तियों पर दिखाई देते हैं। प्रभावित पत्तियां पीली होकर गिर जाती हैं।

jkx tud% यह रोग *इरीसारफी साइकोरेसिएरम* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% टोपास (0.1 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) कैलिक्सिन (400–500 मि.लि./1000 लिटर पानी) का छिड़काव खड़ी फसल में करें।

3- ihr f'kjk ek t:d

y{k.k% पत्तियों पर छोटे–छोटे पीले रंग के चितकबरे धब्बे बनते हैं। पत्तियों की शिराएं पीली पड़ जाती है। हरा भाग छिछले गड्ढ़ों का रूप ले लेता है, पत्तियों के किनारे नीचे झुक जाते हैं और कटे हुए से हो जाते हैं। बाद में पत्ती के पीले भाग सूखकर नष्ट हो जाता है।

jkx tud% यह रोग यलो वेन मोजेक वायरस द्वारा होता है।

ic/ku% कन्फीडोर 200 एस.एल (100 मि.लि./500 लिटर) पानी) की दर से छिड़काव करें। खरपतवारों को खेत के आसपास से निकालकर नष्ट कर दें। रोग प्रतिरोधी प्रजातियां जैसे प्रभनी क्रान्ति, जी–7, अर्का अनामिका को उगायें।

t- I;kt ,o ygl|u d jkx

1- enjkfey vkflrk

y{k.k% पत्तियों पर अण्डाकार या आयताकार पीले धब्बे दिखाई देते है। रोग ग्रस्त भाग सूखने लगता है। पौधे की बढ़वार टेढ़ी–मेढ़ी होती है। रोगग्रस्त भाग सूखने लगता है। अनुकूल परिस्थितियों में पौधे के रोगी भागों पर बैंगनी रंग के लिए रूई के समान कवकों की वृद्धि दिखाई देती है। पौधों की वृद्धि रुक जाती है। बीजवृन्त रोग ग्रस्त स्थान से टूटकर नीचे गिर जाते है।

jkx tud% यह रोग *पेरोनोस्पोरा डिस्ट्रक्टर* नामक कवक द्वारा होता है।

iC/ku% स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज का चुनाव बुवाई के लिए करें। प्याज के बहुवर्षीय शल्ककन्दों तथा जंगली प्याज के पौधों को नष्ट कर दें। जल निकास का उचित प्रबंध करें। रोग के लक्षण दिखने पर खड़ी फसल में 2.5 ग्राम मैकोजेव या रिडोमिल्ड एम.जैड.–72 की एक ग्राम/लि. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

2- uhy ykfgr /kCck

y{k.k% इस रंग के धब्बे पत्तियों पर बन जाते हैं जो मध्य से बैंगनी रंग के हो जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *एल्टरनेरिया पोरी* नामक कवक द्वारा होता है।

iC/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों को नष्ट कर दें। जल निकास का उचित प्रबंध करें। बीज को थाइरम 2.5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। फसल–चक्र अपनाएं। डायथेन एम–45 या ब्लाइटाक्स 50 (2.0 ग्राम/लिटर पानी) की दर से छिड़काव करें।

3- dkyh QQnh

y{k.k% यह रोग मुख्यतः भण्डारण के समय लगता है। रोग के लक्षण शल्ककंदों पर घावों और खरोचों के स्थान पर दिखाई देते है। संक्रमित शल्क पर जलीय धब्बे बनते है तथा उन पर पहले सफेद तथा बाद में काली कवकों की बढ़वार दिखाई देती है। संक्रमित शल्ककन्द धीरे–धीरे सूखकर सिकुड़ जाते हैं तथा अन्य दूसरे कवकों तथा जीवाणुओं के आक्रमण से शल्ककन्दों में सड़न शुरू हो जाती है। छिलके हटाने पर काले रंग के कवक आसानी से दिखाई देते है।

jkx tud% यह रोग *एस्पराजिलस नाइज़र* नामक कवक द्वारा होता है।

iC/ku% शल्ककंदों की खुदाई परिवहन तथा भण्डारण के समय विशेष सावधानी रखें जिससे उन पर चोट न लगें। खड़ी फसल में कवकनाशी का प्रयोग करें। प्याज का भण्डारण सूखे तथा कम तापमान वाले स्थानों पर करें।

t- [khjk oxhZ; Qlyk d jkx

1- vknxi ru

y{k.k% बीज मुलायम होकर सड़ जाते हैं और पौद मृदा से ऊपर नहीं आ पाते हैं। जो पौधे मृदा से

बाहर निकलते हैं इस रोग से संक्रमित होने पर पौधे भूमि पर लेट जाते हैं या उनके तने भूमि की सतह पर सड़कर कमजोर हो जाते है।

jkx tud% यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनी* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% कार्वाक्सिन (0.25 प्रतिशत) से बीजोपचार करें। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था करें।

2- pf.kr vkfl rk

y{k.k% पत्तियों के ऊपरी सतह पर तथा नए तनों पर सफेद कवक जाल के पाउडर जैसे धब्बे दिखाई देते है। बाद में पौधे का ऊपरी भाग पीला पड़कर सूखने लगता है। पौधे की वृद्धि रुक जाती है।

jkx tud% यह रोग *एरिसाइफी सिकोरेशियेरम* तथा *स्फीरोथिका फ्यूलीजिनिया* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% रोग के लक्षण दिखायी देने पर कैराथेन (0.06 प्रतिद्वात), सल्फेक्स (0.2 प्रतिशत) या केथिक्सिन (0.1 प्रतिशत) के घोल का 10–15 दिन के अंतराल पर 2–3 छिड़काव करें।

3- Ekn jkfey vkfl rk

y{k.k% रोग के लक्षण सबसे पहले पत्तियों की ऊपरी सतह पर हल्के पीले रंग के कोणीय धब्बे दिखाई देते है तथा इन धब्बों के ठीक नीचे पत्ती की निचली सतह पर बैंगनी रंग के रूई के समान, कवक जाल की वृद्धि दिखाई देती है। पत्तियां पीली पड़ने लगती है तथा पौधा सूख जाता है संक्रमित पौधे के फल छोटे या तो गिर जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *स्यूडोपेरोनोस्पोरा क्यूवेन्सिस* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% संक्रमित पौधों/बेलों को काटकर नष्ट कर दें। फसल–चक्र में खीरा वर्गीय फसलों को लगातार शामिल न करें। खड़ी फसल पर मैंकोजेब या रिडोमिल एम.जैड. 2.5 ग्राम प्रति लिटर पानी की दर से छिड़काव 10–15 दिन के अंतराल पर 3–4 बार करें।

4- ';keo.k

y{k.k% इस रोग के लक्षण पत्तियों तनों एवं फलों पर भूरे गोल या कोणीय धब्बे दिखाई देते है। रोगी पत्तियां विकृत हो जाती है तथा कई धब्बे आपस में मिलकर बड़े धब्बे बनाते है तथा पत्तियां बाद में सूख जाती है। फलों पर धब्बे गोलाकार, गीले तथा दबे हुए होते हैं।

jkx tud% यह रोग *कोलेटोट्राइकम लेजेनेरियम* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% रोग रहित तथा प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें। थायरम, कार्बेन्डाजिम या कार्बोक्सिन (2.0–2.5 ग्राम/किग्रा.) बीज की दर से बीजोपचार करें। मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत) का छिड़काव 10–15 दिन के अन्तराल पर करें।

5- Qy foxyu

y{k.k% फलों पर जलीय गहरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। फल मुलायम हो जाते है। कुछ समय बाद फल धब्बे वाले स्थान से सड़ने लगते है। सड़ने के कारण फलों से दुर्गन्ध आने लगती है।

jkx tud% यह रोग *कीनेफोरा कुकुरबिटेरम* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% रोगी पौधे के मलबे को जलाकर नष्ट कर दें। जल निकास की समुचित व्यवस्था करें। फलों को भूमि से छूने से बचाएं। फलों को तोड़ने, बाजार भेजते समय चोट से बचायें।

>- Qyhl ds jksx

1- jrqvk

y{k.k% रोग के लक्षण पत्तियों, फलियों, मुलायम तनों तथा शाखाओं पर पाया जाता है। शुरू में पत्तियों के निचली सतह पर, छोटे, उभरे हुए सफेद धब्बे उत्पन्न होते है, बाद में गाढ़ा, भूरा या काला हो जाता है। जिसमें कवकों के टेल्यूटोस्पोर बनते है। कई धब्बों के आपस में मिलने के कारण, पत्तियां पीली होकर सूख जाती है।

jkx tud% यह रोग *यूरोमाइसीज फैजियोलाई टाईपिका* तथा *यूरोमाइसीज फिजियोली विग्नी* नामक कवकों द्वारा होता है।

ic/ku% संक्रमित पौधों के अवशेष को नष्ट कर दें। लम्बी अवधि के फसल–चक्र अपनाएं। खेत के अंदर तथा आसपास से खरपतवारों को नष्ट कर दें। रोग के लक्षण दिखाई देने पर, मैंकोजेब, जिनेब या डेकोनिल 2–2.5 ग्राम/लिटर की दर से फसलों पर छिड़काव करें।

2- ';keo.kZ

y{k.k% बीजपत्रों पर गहरे भूरे तथा काले रंग के धसे हुए धब्बे दिखाई देते है। धब्बे के बीच का भाग राख के समान होता है। जिस पर कवक के बीजाणु उत्पन्न होने से गुलाबी रंग का हो जाता है। संक्रमित पौधे गिरकर मर जाते हैं। पुरानी पत्तियों पर छोटे–छोटे जलीय धब्बे बनते है जो बाद में भूरे तथा गोल हो जाते है। फलियों पर ये धब्बे धसे हुए होते है। इनके बीच का भाग गहरा भूरा तथा किनारे चमकीले लाल, पीले या नारंगी होते है।

jkx tud% यह रोग *कोलेटोट्राइकम लिंडेमुथिएनम* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% संक्रमित पौधे के मलबे को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें। फसल–चक्र अपनाएं। उचित जल निकास का प्रबंध करें। रोग रहित बीजों का प्रयोग बुवाई के लिए करें। बीजों को कार्बेन्डाजिम या कार्बाक्सिन से 2–2.5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। मैंकोजेब, कार्बेन्डाजिम या कार्बाक्सिन 2–2.5 ग्राम/लिटर पानी की दर से फसलों पर छिड़काव करें।

3- 'kq"d ey ;k pkjdksy foxyu

y{k.k% इस रोग से बीज एवं छोटे पौधे सड़ जाते है। धसे हुए काले रंग के दाग नये पौधों की जड़ों पर दिखाई देते है। बड़े पौधों की पत्तियां पीली पड़कर मुरझा जाती है तथा एक सप्ताह के अंदर रोगी पौधे सूख जाते है। तनों पर भी गहरे रंग के दाग दिखाई देते है। मृदा सतह के पास तना तथा मुख्य जड़ में सड़न पैदा हो जाती है।

jkx tud% यह रोग *मैक्रोफोमिना फैजिओलीना* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% रोगी पौधों के अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। फसल–चक्र अपनाएं।फसल को अधिक घना न उगाये। उर्वरक की संतुलित मात्रा का प्रयोग करें। बीज को थाइरम से 2.5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

4- jkbtkDVkfu;k tkyhnkj vxekjh

y{k.k% आर्द्र विगलन के लक्षण पाए जाते है। मृदा की सतह के पास तनों पर लम्बे धसे हुए लाल–भूरे या भूरे रंग के धब्बे बनते है। रोगी पौधों की बढ़वार रुक जाती है। पत्तियों पर भूरे रंग के गोल या अनियमित आकार के धब्बे बनते है। रोग से प्रभावित भागों पर भूरे रंग की कवक की वृद्धि दिखाई देती है स्केलेटोशिया भरी हुई पत्तियों तथा तना पर बनते है।

jksxtud% यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनी* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% गेहूं, धान, मक्का, ज्वार को फसलचक्र में सम्मिलित करें। संक्रमित पौधों के मलबे को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। बीज को कार्बेन्डाजिम 2.0 ग्राम/लिटर पानी का घोल बनाकर उपचारित करें। रोग का प्रकोप अधिक होने पर कार्बेन्डाजिम 0.5 ग्राम/लिटर पानी का घोल बनाकर फसलों पर छिड़कें।

5- thok.kqt vxekjh

y{k.k% रोग के लक्षण पत्तियों पर जलीय धब्बे के रूप में दिखाई देते है। रोगी पत्तियां सिकुडकर टेढ़ी–मेढ़ी तथा बाद में गिर जाती है। फलियों तथा तनों पर लम्बे धसे हुए भूरे या लाल रंग के धब्बे दिखाई देते है। तने का भीतरी भाग भूरा हो जाता है। कुछ धब्बे काफी बड़े तथा पीले किनारों वाले होते है। फ्यूसकैंस अंगमारी के संक्रमण से तने पर दरारे पड़ती है और तना फट जाता है। संक्रमित भागों से पीला या सफेद रंग का तरल पदार्थ निकलता है। यह जीवाणुविक रोग की पहचान है। इस रोग से उत्पन्न धब्बों के चारों ओर पीला क्षेत्र दिखाई देता है।

jksxtud% यह रोग *जैन्थोमोनास कैम्पोस्ट्रिस* उपजाति *फैजियोलाइ, जै. एक्जोनोपोडिस* उपजाति *फैजियोलाइ* तथा *स्यूडोमोनास सिरिंसि* उपजाति *फैजियोलीकोला* नामक जीवाणुओं द्वारा होता है।

ic/ku% प्रमाणित एवं स्वस्थ बीजों का प्रयोग करें। संक्रमित पौधों के अवशेषों को नष्ट कर दें। फसलचक्र अपनाएं। बीज को 100 मिग्रा. स्ट्रेप्टोसाइक्लिन और 2.5 ग्राम हैक्साकैप को 1 लिटर पानी में घोल बनाकर 4 घण्टे तक डुबोकर रखें।

प्रमुख शोभाकारी पौधों के रोग एवं प्रबंधन

प्रतिभा शर्मा एवं दिनेश सिंह
पादप रोगविज्ञान संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

d- xqykc ds jksx

1- xqykc dSadj

y{k.k% प्रारम्भ में इस रोग के लक्षण तने पर प्रायः पीले या लाल रंग के धब्बे के रूप में दिखाई देते है, जो बाद में भूरे या काले रंग के हो जाते हैं। काले, फटे हुए धब्बे बेदरंग ऊतकों पर पाए जाते हैं तथा उन पर कवक की फलनकायी संरचना पाई जाती है, जिसमें बीजाणु होते हैं।

jksx tud% यह रोग *कोनियोथिरीयम* जाति नामक कवक द्वारा होता है।

izca/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों की कटाई करके निकाल दें। पौधे की काट–छांट ठण्ड शुरू होने से पहले करें। काट–छांट के बाद पौधों पर कापर आक्सीक्लोराइड (2.5 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (1.0 प्रतिशत) का घोल बनाकर छिड़काव करें। पौधों को नई वृद्धि आने तक बचाएं रखें।

2- ,UFkszDukst

Yk{k.k% रोग के लक्षण शुरू में पत्तियों पर लगभग 0.5 से.मी.. व्यास के काले धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। वृद्धि होने पर धब्बे बैंगनी या भूरे रंग के हो जाते हैं तथा अन्त में हल्के भूरे हो जाते हैं एवं इनका तथा किनारे का रंग लाल–बैंगनी हो जाता है। तने तथा डण्ठल भी इस रोग से ग्रसित होते हैं। प्रौढ़ विक्षतियों पर छोटे, काले कवक के फलनकाय एसरबुलई के बिन्दु, कागजनुमा, भूरे धब्बे के केन्द्र में दिखाई देते हैं। नमीयुक्त मौसम में पत्तियों पर धब्बों का बनना, पीलापन, अत्यधिक पत्तियों का गिरना तथा धब्बे के स्थान पर छेद होना प्रायः अधिक होता है।

jksx tud% यह रोग, *स्फेसीलोमा रोसेरम* नामक कवक से होता है।

izca/ku% संक्रमित पौधे के भाग की काट–छांट करें। संक्रमित पौधों के अवशेषों जैसे पत्तियों तथा तनों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। पौधों पर कवकनाशियों का छिड़काव करें जो काला धब्बा रोग की रोकथाम के लिए सुझाए गए हैं।

3- jrqvk

y{k.k% गुलाब का रतुआ एक महत्वपूर्ण तथा सामान्यतः पाया जाने वाला रोग है। इस रोग के लक्षण बसंत मौसम में सबसे पहले पत्तियों की निचली सतह पर हल्के नारंगी तथा पीले रंग के बीजाणु के स्पॉट के रूप में दिखाई देते हैं तथा बाद में इस प्रकार के बीजाणु (एसियोस्पोर्स) के स्पॉट पत्तियों की ऊपरी सतह पर और अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। जैसे ही गर्मी बढ़ने लगती है, कवक के यूरेडीयल अवस्था में ये बीजाणु लाल–भूरे से नारंगी रंग के हो जाते हैं। कवक की यह अवस्था 10–14 दिन के

अंतराल पर एक फसल मौसम में कई बार होती है। पत्तियों के अलावा मुलायम शाखाओं तथा फूलों पर भी इस रोग के लक्षण दिखाई देते हैं। रोग के लक्षण देखने पर आसानी से पहचाना जा सकता है।

jkx tud% गुलाब में रतुआ *फ्रेगमिडियम* जाति नामक कवक से होता है।

ic/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों जैसे पत्तियों एवं शाखाओं को खेत से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। संक्रमित शाखाओं को काट–छांट कर पौधे से अलग कर दें। पौधों को अधिक सघन न रखें, जिससे पौधों के पास अधिक नमी न रहे। रोग के लक्षण दिखाई देने पर फसलों पर मैंकोजेव (0.25 प्रतिशत) का 10–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

4- dkyk /kCck

y{k.k% इस रोग के लक्षण पत्तियों पर छोटे व गोल लगभग 2 मि.मी. व्यास के गहरे भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। इन धब्बों के किनारे झालर की तरह होते हैं, जिनके चारों ओर का क्षेत्र पीला पड़ जाता है, जो इस रोग का विशेष लक्षण है। अधिक संक्रमण बढ़ने पर, ये छोटे–छोटे धब्बे जुड़कर बड़ा आकार ले लेते हैं जिससे पत्तियों का अधिकतर क्षेत्र इन धब्बों से ढक जाता है। परिणामस्वरूप, रोगग्रस्त पत्तियां झड़ने लगती हैं। लकड़ियों पर बैंगनी लाल रंग के अनियमित आकार के उठे हुए धब्बे दिखाई देते हैं।

jkx tud% यह रोग *डिप्लोकार्न रोजी* नामक कवक द्वारा होता है।

ic/ku% रोग ग्रसित पौधों के अवशेषों तथा पत्तियों को खेत से इकट्ठा करके जला दें। रोगी पौधों की टहनियों की छंटाई करते रहना चाहिए। पौधों पर रोग के लक्षण दिखाई देने पर, कार्बेन्डाजिम (0.05 प्रतिशत), मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत) का 10–15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

5- p.kh; vkfl rk

y{k.k% गुलाब की चूर्णीय आसिता एक गंभीर रोग है। इस रोग के लक्षण पत्तियों व टहनियों पर छोटे, सफेद रंग के धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। पत्तियां पीली होकर ऊपर की ओर मुड़ने लगती हैं। कवक के जाल तथा बीजाणु, सफेद चूर्ण की तरह पुरानी व संक्रमित पत्तियों पर फैले होते हैं। प्रभावित कलियां खुलने में असमर्थ होती हैं और फूलों की पंखुडियां अपना रंग खोने लगती हैं और अंत में झड़ जाती हैं।

jkx tud% यह रोग, *स्फैरोथेका पैनेजा* उपजाति रोजी नामक कवक से होता है।

ic/ku% संक्रमित शाखाओं की मौसम के अंत में छंटाई करके उन्हें जला दें। संक्रमित पौधों के अवशेषों तथा खरपतवारों को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। रोग के लक्षण दिखाई देने पर पौधों पर कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) या कैराथेन (0.2 प्रतिशत) या घुलनशील सल्फर (0.2 प्रतिशत) या थायोफेनेट मिथाइल (0.1 प्रतिशत) का 10–15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

6- i'pekjh

Yk{k.k% इस रोग के संक्रमण से पौधा सिरे से नीचे की ओर सूखने लगता है। यह रोग टहनियों के कटे हुए भागों से शुरू होता है जिसमें शाखाएं, तना व जड़ें सिरे से नीचे की ओर सूख जाते हैं। पौधे का प्रभावित भाग काला पड़ जाता है। रोगग्रस्त तने या जड़ को फाड़कर देखने पर भीतर से ऊतक भूरे नजर आते हैं।

jkxtud% यह रोग गुलाब में विभिन्न प्रकार के कवकों जैसे *लेप्टोस्फीरिया कोनीथिरियम, बोट्रियोडिपलोडिया थियोब्रोमी* या *डिप्लोडिया* जाति आदि कवकों द्वारा होता है।

ic/ku% पत्तियों, टहनियों तथा संक्रमित पौधों को इकट्ठा करके जला दें। प्रभावित टहनियों के रोगग्रस्त भाग को सूखी हुई जगह से 10 से.मी.. नीचे तक काट दें और काट–छांट की दिशा तिरछी होनी चाहिए, ताकि कटे हुए भाग पर पानी इकट्ठा न रहें। कटे हुए भाग पर बोर्डो पेस्ट (नीला थोथा 100 ग्राम + बुझा हुआ चूना 100 ग्राम प्रति लिटर पानी) का लेप लगाएं।

7- ckV'kbfVl >qylk

y{k.k% इस रोग के लक्षण मुख्यरूप से फूलों व कलियों पर दिखाई देते हैं। प्रारम्भ में फूलों की पंखुड़ियों पर छोटे–छोटे गोलाकार धब्बे बनते हैं जो सफेद रंग के फूल पर शुरू में लाल रंग के व बाद में भूरे हो जाते हैं। गहरे रंग की किस्मों पर ये धब्बे हल्के रंग के तथा जलीय होते हैं। बाद में फूल व कलियां भूरे रंग की हो जाती हैं। फूलों पर गहरे भूरे रंग की कवक की वृद्धि दिखने लगती है तथा फूल व कलियां सड़ने लगती हैं। बाद में फूलों व पंखुड़ियों पर काले भूरे रंग के अण्डाकार धब्बे दिखते हैं। संक्रमित फूल गिरने लगते हैं तथा पौधा शीर्षारम्भी क्षय रोग की तरह मरने लगते हैं।

jkxtud% यह रोग *बोट्राइटिस साइनेरिया* नामक कवक से होता है।

ic/ku% खेत से पिछली फसल के बचे हुए अवशेषों को निकाल कर नष्ट कर दें। रोग के लक्षण दिखाई देने पर कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) या मैन्कोजेब (0.25 प्रतिशत) का 10–15 दिनों के अंतराल पर 2–3 बार आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

8- f'k[kj ihfVdk

Yk{k.k% इस रोग के लक्षण पौधों के तने पर भूमि से लगने वाले भाग पर, कलियों के जुड़ाव स्थान या जड़ों पर गोलाकार गांठों के रूप में दिखते हैं। इसके अलावा तने पर जहां काट–छांट के समय घाव हो जाते हैं वहां भी ये गांठें देखी जा सकती हैं। प्रभावित पौधों की वृद्धि रुक जाती है। जीवाणु के ट्यूमर इण्ड्यूसिंग प्लाज्मिड को पौधे के अंदर प्रवेश कराने के बाद वाहक जीवाणु की अनुपस्थिति में पौधों में रोग हो जाता है।

jkxtud% यह रोग *राइजोबियम रेडियोवेक्टर* नामक जीवाणु से होता है।

ic/ku% रोपण हेतु पौधशाला से स्वस्थ पौधों का चुनाव करें। पौधों में घाव न होने दें। संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। पौधों की जड़ों को *एग्रोबैक्टीरियम रडियोवेक्टर* (के–84) के घोल से उपचारित करें।

9- jkst ekstd

y{k.k% इस रोग के लक्षणों में पत्तों पर चित्तीनुमा धब्बे दिखाई देते हैं। पत्तियों का आकार विकृत हो जाता है, पत्तियां लहरदार हो जाती हैं और पीलापन लिए होती है या पत्तियों की शिराएं पीली हो जाती हैं। विषाणु से संक्रमित पौधों का विकास कम हो जाता है। गर्मियों में इस रोग के लक्षण दिखाई नहीं देते हैं लेकिन ठण्ड शुरू होने पर लक्षण पुनः दिखाई देने लगते हैं तथा छोटा रह जाता है एवं फूलों की

पैदावार व गुणवत्ता में कमी आ जाती है। संक्रमित पौधे भूमि में अच्छी तरह स्थापित नहीं हो पाते हैं।

ic/ku% रोपण हेतु स्वस्थ व विषाणुरहित पौधों का ही उपयोग करें। संक्रमित पौधों को बाग से निकाल कर नष्ट कर दें। संवर्धन के लिए स्वस्थ पौधों का चुनाव करें।

[k- XyfM;kyl dk jkx

1- Eykfu

Yk{k.k% इस रोग का मुख्य लक्षण में पत्ती की नोक के अन्तर्धारीय क्षेत्र पीला दिखाई देने लगता है जो नीचे की ओर बढ़ता हुआ पूरे पत्ते पर फैल जाता है। बाद में संक्रमित पत्तियां भूरी होकर सूख जाती हैं। इसके अलावा अन्य लक्षण हैं पौधों की वृद्धि का रुकना, पत्तों का मुड़ जाना व झुकना आदि। अन्त में पौधा मुरझाकर पीला पड़ जाता है तथा समय से पहले ही मर जाता है। इस रोग से प्रभावित पौधे बड़ी आसानी से भूमि से निकाले जा सकते हैं। धनकंद से निकलने वाली जड़ों पर भी भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। भण्डारण के समय सड़न, धनकंद के निचले भाग तक ही सीमित रहती है जिससे वह सूख जाता है जबकि खेत में विद्यमान संक्रमित धनकंद में विगलन हो जाती है। अधिक तीव्र संक्रमण होने पर, पूरा धनकंद काला पड़कर सड़ने लगता है। धनकंद पर लाल भूरे रंग के, दबे हुए, गोल या अण्डाकार धब्बे भी दिखाई देते हैं जिसके परिणामस्वरूप धनकंद सिकुड़कर सख्त हो जाता है।

jkxtud% यह रोग *फ्युजेरियम ऑक्सीस्पोरम* उपजाति *ग्लेडियोलाई* नामक कवक से होता है।

ic/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। रोग प्रतिरोधी किस्में जैसे अल्वाना, एप्रीकोट ग्लो, सोबेनिर, हॉपमैन्ज ग्लोरी, सिल्विया, धीरज, व्हाइट, फ्रेंडशिप, व्हाइट प्रॉस्पैरिटी व सहनशील किस्में जैसे ऑस्ट्रेलियन फेयर व मंसूर आदि की बुवाई करें। धनकंदों को भूमि से फसल समाप्त होने पर जल्दी निकाले। रोगग्रस्त धनकंदों की छंटाई करके उन्हें नष्ट कर दें। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था करें, जिससे खेत में पानी न रुकने पाएं। कार्बनिक व जैविक पलवारों का उपयोग भी धनकंद सड़न रोग रोकने के लिए किया जा सकता है। गर्मियों के महीनों में (अप्रैल–जून) संक्रमित भूमि को अच्छी तरह जोत कर उसमें गोबर की खाद मिला लें। फिर उसमें हल्की सिंचाई कर लें और उसे सफेद पारदर्शी पॉलीथीन (100 गेज मोटी) से ढ़क दें। इस तकनीक का प्रभाव संक्रमित भूमि में बंदगोभी के सूखे हुए पत्ते (10 टन प्रति हैक्टर) पॉलीथीन बिछाने से पहले मिलाने से और भी बढ़ जाता है। धनकंदों को गर्म पानी में 53–55 डिग्री सेल्सियस तापमान पर आधे घण्टे के लिए उपचारित करने से धनकंद सड़न रोग का संक्रमण रुक जाता है। गर्म पानी से उपचार करते समय यदि हम फफूंदनाशकों जैसे कार्बेण्डाजिम (1.0 ग्राम पति लिटर पानी) या कैप्टान या थीरम या जिनेब (1.0 ग्राम प्रति लिटर पानी) को भी साथ मिला लें तो इसका प्रभाव और भी अधिक होगा। धनकंदों को खेत से निकालने के बाद और लगाने से पहले, कबींटल (2.5 ग्राम) या नीमाजल (1.0 मि.लि.) या कार्बेण्डाजिम (1.0 ग्राम) प्रति लिटर पानी में घोल बनाकर आधे घण्टे तक डुबोकर रखें और अच्छी तरह छाया में सुखा लें। पौधों पर रोग के लक्षण दिखाई देने पर कार्बेण्डाजिम (1.0 ग्राम) या कबींटल (2.5 ग्राम) या साफ (2.0 ग्राम) प्रति लिटर पानी में घोल बनाकर प्रभावित पौधों की जड़ों व उसके आसपास डालें या छिड़के।

2- /kl j dod

y{k.k% धनकंदों को भूमि से निकालने पर उन पर छोटे–छोटे गोलाकार, लाल कत्थई धब्बे दिखाई देते हैं जिनके बीच में गड्ढ़ा बन जाता है। भण्डारण के समय ये धनकंद मुलायम व स्पंजी भी हो जाते हैं। बाद में धनकंदों पर काले रंग के स्क्लैरोशिया भी बनते हैं। पत्तियों पर विभिन्न आकार के गोल या अण्डाकार पीले, भूरे धब्बे दिखाई देते हैं जिनके किनारे लाल कत्थई हाते हैं। गर्म, सूखे वातावरण में, इन धब्बों का आकार सीमित रहता है परन्तु नए पत्तों पर, अधिकतर ठण्डे वातावरण में धब्बों का आकार बढ़ता है। फूलों पर भी इसी तरह के धब्बे नजर आते हैं जो शुरू में पीले कत्थई और बाद में गहरे रंग के हो जाते हैं। वर्षा के पश्चात फूल मुलायम होकर सड़ जाते हैं। पंखुड़ियों पर इस रोग के कवक भारी मात्रा में बीजाणु बनाते हैं, जिससे उन पर बहुत ही छोटे–छोटे पारभासी, पानीनुमा धब्बे बनते हैं जो बाद में हल्के भूरे रंग के हो जाते हैं। अन्ततः पूरा फूल चिपचिपा व मुलायम होकर, ठण्डे व नमीदार वातावरण में पूरी तरह सड़ जाता है। पौधों के तने, भूमि की सतह से लगने वाले भाग पूरी तरह से भूरे–काले रंग के हो जाते हैं, जिससे तने के चारों ओर से पौधा सड़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप गिर जाता है।

jkx tud% यह रोग *बोट्राइटिस ग्लेडियोलैरम* नामक कवक से होता है।

ic/ku% भण्डारण से पूर्व धनकंदों को कुछ समय के लिए धूप में सुखाएं। बुवाई के लिए, स्वस्थ धनकंदों का प्रयोग करें। बुवाई से पहले या भण्डारण से पहले धनकंदों को क्वींटल (2.5 ग्राम) या नीमाजल (10 मि.लि.) प्रति लिटर पानी में घोल बनाकर कर उपचारित करें। संक्रमित पौधों एवं फूलदार टहनियों को निकालकर नष्ट कर दें। भूमि को सौर ऊर्जा विधि से उपचारित करें। धनकंदों को 52^0 सेल्सियस तापमान पर कार्बेन्डाजिम 1.0 ग्राम प्रति लिटर पानी के घोल में आधे घण्टे तक डुबोकर रखें तथा बाद में उन्हें छाया में सुखा लें। पौधों पर रोग के लक्षण दिखाई देने पर, क्वींटल (2.5 ग्राम) या नीमाजल (10 मि.लि.) या कार्बेण्डाजिम (1.0 ग्राम) या टॉपसिन–एम (1.0 ग्राम) प्रति एक लिटर पानी के घोल से 10–15 दिनों के अंतराल पर आवश्यकतानुसार 2 से 3 छिड़काव करें।

3- dcyfj;k >ylk

y{k.k% इस रोग के लक्षण में पत्तियां पीली हो जाती हैं और उनकी नोक पर भूरापन दिखाई देता है। पत्तियों पर गोल या अण्डाकार धब्बे भी दिखाई देते हैं जो उचित परिस्थितियों में अनियमित आकार के हो जाते हैं। ये धब्बे पत्तियों की लम्बाई के साथ बढ़ते हुए पूरे पत्तों पर फैल जाते हैं। धब्बे शुरू में हल्के पीले रंग के होते हैं जो बाद में गहरे भूरे रंग में परिवर्तित हो जाते हैं। धब्बों के किनारे लाल कत्थई रंग के होते हैं। पत्ती के अंदर के भाग, कवक के काले रंग के बीजाणुओं से भरे होते हैं। पूरी पत्ती संक्रमित होकर टूट जाती है। फूलों की पंखुड़ियों पर भूरे अण्डाकार धब्बे दिखाई देते हैं। ये जलीय धब्बे प्रारम्भ में रंगहीन होते हैं, जो बीजाणुओं के बनने के बाद भूरे या काले रंग के हो जाते हैं। इस रोग के लक्षण धनकंदों पर भी दिखाई देते हैं। धनकंदों पर दबे हुए काले रंग के धब्बे बनते हैं जो सख्त होकर कॉर्क की तरह दिखते हैं।

jkx tud% यह रोग, *कर्बुलेरिया ट्राइफोलाई* उपप्रजाति *ग्लैडियोलाई* नामक कवक से होता है।

ic/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। बुवाई के लिए स्वस्थ धनकंदों का प्रयोग करें। धनकंदों का संक्रमण रोकने के लिए उन्हें तभी निकालें जब भूमि सूखी हो। निकालने के तुरंत बाद उन्हें कवकनाशी से उपचारित कर लें। पौधों पर मैन्कोजेब (0.25 प्रतिशत) का घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

4- /kudn lMu

y{k.k% यह रोग भण्डारण के समय धनकंदों पर दिखाई देता हैं। धनकंदों पर बड़े, लाल–कत्थई रंग के दबे हुए धब्बे दिखते हैं जिनके मध्य में गुलाबी रंग के कवक के बीजाणु बनते हैं। फफूंद धनकंदों की संवहनी ऊतकों तक फैल जाती है। भण्डारण में यह रोग अधिक होता है जब धनकंद भूमि से निकालने के उपरांत, बिना उपचारित किए हुए ही भण्डार में अधिक नमी वाली जगह पर इकट्ठे बंद करके रख दिए जाते हैं, जबकि खेत में यह रोग धनकंदों के अन्तर्हित संक्रमण से फैलता है।

jkx tud% यह रोग *पेनिसिलियम ग्लेडियोलाई* तथा *पेनिसिलियम* की अन्य जातियों के द्वारा होता है।

ic/ku% बुवाई के लिए स्वस्थ धनकंदों का प्रयोग करें। धनकंदों को भूमि में लगाने से पहले सौर ऊर्जा से या क्वींटल (0.25 ग्राम) या नीमाजल (1.0 मि.लि.) का प्रति लिटर पानी में घोल बनाकर उपचारित करें। खेत से निकालने के बाद धनकंदों को छाया में सुखा लें। भण्डारण से पहले धनकंदों को मैन्कोजेब या थीरम (2.5–3.0 ग्राम प्रति लिटर पानी) में 30 मिनट तक भिगोकर छाया में सुखा लें।

x- dkju'ku

1- Eykfu

Yk{k.k% इस रोग के लक्षणों में पौधे की निचली पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं, तने पर भूमि की सतह के पास गलन व सड़न होने लगती हैं तथा संक्रमण धीरे–धीरे ऊपर की ओर बढ़ने लगता है और कुछ समय बाद पूरा पौधा मुरझा जाता है। भूमि के पास तना गलकर नर्म पड़ जाता है, जिससे पौधा भूमि से आसानी से निकल जाता है। प्रभावित पौधों के तने पर बीच से दरार पड़ जाती हैं तथा तने का छिलका हटाकर देखने पर ऊतक हल्के भूरे रंग के दिखाई देते हैं। यह भूरापन ऊपर की ओर बढ़ने लगता है और पौधे के सूखने पर सफेद हो जाता है। इस रोग के प्रभाव से जड़ें काली पड़कर सड़ जाती हैं और पौधा धीरे–धीरे मर जाता है।

jkx tud% यह रोग *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* उपजाति *डाऐन्थाई* नामक कवक से होता है।

ic/ku% रोपण हेतु रोगरहित पौधों का ही उपयोग करें। पौद की कलमें रोगाणु रहित मृदा में ही तैयार करें। कारनेशन की कलमों को मृदा में लगाने से पहले मृदा को फार्मेलीन (1 भाग फार्मेलीन 7 भाग पानी मिलाकर) से उपचारित करने के बाद या मृदा को 4–5 सप्ताह तक सौर ऊर्जा द्वारा उपचारित करें। लम्बे फसल चक्र (3 साल) अपनाएं। रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। पौधों में रोग के लक्षण दिखाई देने पर तने के आसपास की भूमि पर कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का घोल बनाकर छिड़काव करें।

2- tM+ lM+u

y{k.k% इस रोग से पौधों की पत्तियां पीली पड़कर मुरझा जाती हैं। संक्रमित पौधे जड़ सहित भूमि से आसानी से उखाड़े जा सकते हैं। जड़ के आसपास कवक का सफेद कवक जाल लिपटा रहता है जिस पर छोटे–छोटे सरसों के बीज जैसे कवक के स्क्लैरोशिया दिखाई देते हैं जो प्रारम्भ में सफेद या हल्के पीले तथा बाद में गहरे भूरे रंग में परिवर्तित हो जाते हैं। पौधे की मूसला जड़ें सड़ जाती हैं। अधिक तापमान होने पर पौधे अन्त में पूर्णरूप से मुरझाकर मर जाते हैं।

jksxtud% यह रोग *स्क्लेरोशिया रोल्फसाई* नामक कवक से होता है।

izca/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से इकट्ठा करके नष्ट कर दें। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करके कुछ दिनों के लिए खुला छोड़ दें। रोपाई के लिए स्वस्थ कलमों का प्रयोग करें। 3–4 वर्ष फसलचक्र का अपनाएं जिनमें गेहूं, जौ, मक्का को सम्मिलित करें। पौध को फार्मलीन (एक भाग फार्मेलीन में 7 भाग पानी मिलाकर) द्वारा उपचारित मृदा में ही लगाएं या मृदा को सौर ऊर्जा से 4 से 5 सप्ताह तक उपचारित करना भी लाभप्रद है। संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करें। रोग के लक्षण दिखाई देने पर रोगग्रस्त पौधों के तने के आसपास हैग्जाकोनाजोल (1 मि.लि.) या टैब्यूकोनाजोल (1 मि.लि.) या डाइफेनोकोनाजोल (1 मिली) या प्रॉपीनेब (3 ग्राम) को एक लिटर पानी में घोल बनाकर सिंचाई करें।

3- ruk lM+u

y{k.k% इस रोग के लक्षणों में प्रारम्भ में पौधे के तने पर जलीय धब्बे बनते हैं जो बाद में गहरे भूरे रंग में परिवर्तित हो जाते हैं तथा तने का प्रभावित भाग सूख जाता हैं, जिससे तना भूमि की सतह वाले भाग से टूट जाता है। अधिक संक्रमण से जड़ें भी पूरी तरह सड़कर नष्ट हो जाती हैं। प्रभावित पौधा सूख जाता है रोग आसपास के पौधों में भी फैल जाता है।

jksxtud% यह रोग *राइजोक्टोनिया सोलेनी* नामक कवक से होता है।

izca/ku% संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। रोपाई के लिए स्वस्थ कलमों का चुनाव करें। 2–3 साल का फसलचक्र अपनाएं। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें तथा कुछ समय के लिए खुला छोड़ दें। पौधों की जड़ों के पास आइप्रोडियोन का घोल बनाकर सिंचाई करने पर लाभ होता है।

4- i.kZ fpÙkh ,oa vaxekjh

y{k.k% इस रोग के लक्षणों में पत्तियों पर छोटे–छोटे बैंगनी रंग के गोलाकार या लम्बवत तथा सूखे धब्बे दिखाई देते हैं, जो नम वातावरण में आकार में बढ़ने लगते हैं। इन धब्बों के किनारे बैंगनी रंग के तथा केन्द्रीय भाग स्लेटी रंग के होते हैं। छोटे–छोटे धब्बे आपस में मिलकर पत्ते का बहुत सा भाग घेर लेते हैं, जिससे पत्ता झुलस जाता है। यह रोग तने को भी संक्रमित करता है तथा पौधे के आधार में सड़न पैदा करता है। इस रोग से प्रभावित फूलों की गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल असर पड़ता है।

jksxtud% यह रोग *एल्टरनेरिया डाएन्थाई* नामक कवक से होता है।

ic/ku% संक्रमित पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर दें। संक्रमित पौधों के अवशेषों को खेत से निकालकर नष्ट कर दें। रोग के लक्षण दिखाई देने पर पौधों पर ब्लाइटाक्स–50 (0.3 प्रतिशत) या मैन्कोजेब (0.25 प्रतिशत) या काबेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का घोल बनाकर 10–15 दिनों के अंतराल पर 2 से 3 बार छिड़काव करें।

5- fo"kk.kq tfur

कारनेशन पर कारनेशन मोटल विषाणु, कारनेशन बीन मोटल विषाणु, कारनेशन लेटैंअ विषाणु व कारनेशन रिंगस्पॉट विषाणु का संक्रमण भी रहता है, जिसके लक्षण, पोषक पौधे तथा प्राकृतिक फैलाव का वर्णन नीचे दिया गया है:

¼v½ eksVy% यह रोग, कारनेशन मोटल विषाणु द्वारा होता है। इस रोग से पत्तियां चितकबरी हो जाती हैं। यह विषाणु खेत में काम करने वाले लोगों तथा काटने वाले चाकू से फैलता है। यह विषाणु प्रकोप जल निकास के पानी से भी हो सकता है।

¼c½ osu eksVy% यह रोग कारनेशन वेन मोटल विषाणु द्वारा होता है। इस रोग में नई पत्तियों की शिराएं हल्की पीली हो जाती हैं तथा स्पष्ट दिखाई देने लगती हैं तथा पत्तियों पर पीले धब्बे दिखाई देते हैं। पुरानी पत्तियों पर कोई भी लक्षण दिखाई नहीं देता है। यह विषाणु माहू द्वारा स्थानान्तरित होता है या कभी–कभी कलम काटने वाले चाकू से भी फैलता है।

¼l½ NYyk /kCck% यह रोग, कारनेशन रिंग स्पाट वायरस द्वारा होता है। इस रोग में पत्तियों पर छोटे 1–2 से.मी.. के छल्ले बनते हैं, परन्तु कभी–कभी सकेन्द्रीय छल्ले भी दिखाई देते हैं। पत्तियों का छोटा होना, पीला होना तथा चितकबरापन के लक्षण भी दिखाई देते हैं। संक्रमित पौधे बौने रह जाते हैं। यह विषाणु, कलम काटने वाले चाकू से फैलता है।

ic/ku% स्वस्थ पौधों से कलम तैयार करें। प्रयोग में आने वाले चाकू को इथाइल अल्कोहल से उपचारित करें। माहू के नियंत्रण के लिए कीटनाशी दवाओं का पौधों पर छिड़काव करें। संक्रमित पौधों को खेत से निकालकर नष्ट कर दें।

?k- xsnk

1- ¶;qtfj;e Eykfu

Yk{k.k% इस रोग के लक्षण नर्सरी के पौधों तथा बड़े पौधों में दिखाई देते हैं। नर्सरी के पौधों में संक्रमण होने पर पौद मुरझाकर मर जाते हैं। बड़े पौधे भी मुरझा जाते हैं तथा कभी–कभी पीले होकर सूख जाते हैं। पुराने पौधों में संवहनी ऊतक में काली धारी बन जाती है। पौधे की जड़ें संख्या में कम हो जाती हैं तथा सड़ने लगती हैं। नम मौसम में कवक के बीजाणु संक्रमित तने पर बनते हैं।

jksxtud% यह रोग *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* नामक कवक से होता है।

ic/ku% इस रोग का प्रबंधन के लिए गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें। संक्रमित पौधों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। रोग के लक्षण आने पर पौधों की जड़ों के पास मैन्कोजेब (0.2 प्रतिशत) या

कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.25 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का घोल बनाकर 10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें। गेंदे की खेती के लिए 2–3 साल तक का फसल–चक्र अपनाएं।

2- pf.k; vkflrk

y{k.k% इस रोग में प्रारम्भ में पत्तियों पर छोटे–छोटे सफेद धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में ऐसे लगते हैं मानों पत्तों पर सफेद पाउडर छिड़का गया हो। कुछ समय पश्चात पूरा पत्ता सफेद चूर्ण से ढक जाता है। सफेद चूर्ण के अंदर कवक के कोनीडिया एवं कवकजाल होते हैं। अधिक संक्रमण होने पर पत्तियां सिकुड़कर मुड़ जाती है तथा मुरझाने लगती हैं। कुछ समय पश्चात संक्रमित पत्तियां गिर जाती हैं।

jkx tud% यह रोग *लैबीललूला टौरिका* नामक कवक के द्वारा होता है।

izca/ku% फसल के बचे हुए अवशेषों को खेत से निकाल कर जला कर नष्ट कर दें। पौधों पर जैसे ही रोग के लक्षण दिखाई दें, घुलनशील सल्फर (500 ग्राम) या सल्फेक्स (300 ग्राम) या कार्बेन्डाजिम (50 ग्राम) का प्रति 100 लिटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

3- ckVªkbfVl Qy vxekjh

y{k.k% इस रोग के लक्षण फूलों की पंखुड़ियों एवं फूलों की डंठलों पर अनियमित आकार के भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। कलियां भूरी हो जाती हैं और जलीय धब्बे दिखाई देते हैं। संक्रमित कलियां खिल नहीं पाती हैं और बिना खिले ही नम वातावरण में गिर जाती हैं। संक्रमित भाग पर रोगजनक के कवक जाल एवं बीजाणु बहुत संख्या में धूसर रंग की बढ़वार के दिखाई देते हैं।

jkx tud% यह रोग *बोट्राइटिस साइनेरिया* नामक कवक से होता है।

izca/ku% गिरी हुई संक्रमित कलियों, फूलों तथा पौधों के अन्य भागों को खेत से निकाल कर नष्ट कर दें। गेंदा की फसलों को फुब्बारे विधि से सिंचाई न करें। पौधों पर कवकनाशी दवाओं जैसे थायोफेनेट मिथाइल (0.2 प्रतिशत), कोसाइड (0.1 प्रतिशत), मैंकोजेब (0.25 प्रतिशत), क्लोरोथैलोनिल (0.1 प्रतिशत), एजोक्सीस्ट्रोबीन, आइप्रोडियोन आदि का आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

p- x|ynkÅnh

1- ruk ,oa tM+ lM+u

y{k.k% पौधशाला में पौधे तने के आधार से सड़ने लगते हैं एवं प्रभाावित पौधे छोटे रहे जाते हैं। अगर तने पर घाव हों तो स्थापित पौधों पर भी फफूंद संक्रमण कर सकती है। प्रभावित पौधे अचानक मुरझाने लगते हैं। राइजोक्टोनिया कवक प्रमुख रूप से भूमि की सतह से पौधे पर आक्रमण करती है, जिससे तने के संक्रमित भाग में गहरे भूरे रंग के धसे हुए क्षेत्र बन जाते हैं। अधिक नमी होने पर संक्रमित भाग पर हल्के भूरे रंग के कवक के कवकजाल भी दिखाई देते हैं, पीथियम के संक्रमण से जड़ें किनारों से लड़ने लगती हैं। जड़ें भूरे या काले रंग में परिवर्तित होने लगती हैं तथा संक्रमित पौधे का अधिकतर भाग काला पड़ने लगता है। अन्ततः जड़ें पूरी तरह से नष्ट हो जाती हैं और पौधा सूख जाता है।

jkx tud% यह रोग *पीथियम* जातियां एवं *राइजोक्टोनिया* जातियां नामक कवकों द्वारा होता है।

ic/ku% पौध लगाने से पहले भूमि का उपचार करें। भूमि का उपचार सौर ऊर्जा से पारदर्शी पॉलीथीन की सहायता से या फार्मेलीन (5 प्रतिशत) या 1 भाग फार्मेलीन + 7 भाग पानी से किया जा सकता है। भूमि की थीरम या डायथेन एम–45 (0.25 प्रतिशत) का घोल बनाकर समय–समय पर सिंचाई करें। प्रभावित पौधों के अवशेषों के खेत से निकालकर नष्ट कर दें।

2- ruk foxyu o Eykfu

y{k.k% इस रोग के लक्षण कलियों के फूलने के बाद दिखाई देते हैं, लेकिन पौधों में संक्रमण कलम की जड़ों को उगने के समय ही हो जाता है। इस रोग के संक्रमण के प्रभाव से पौधे छोटे रह जाते हैं तथा तने का भूमि के पास का भाग गहरे भूरे रंग का हो जाता है और सूखने लगता है। पौधे में संवहनी ऊतक गहरे भूरे रंग का हो जाते हैं तथा के निचले हिस्से के पत्ते पीले पड़ने लगते हैं, जिसके उपरांत पौधा पूरी तरह से मुरझा जाता है।

jksx tud% यह रोग *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* नामक कवक से होता है।

ic/ku% संक्रमित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें। भूमि को अच्छी तरह से सौर ऊर्जा से सफेद पारदर्शी पॉलीथीन (100 गेज मोटा) द्वारा 4 से 5 सप्ताह तक या फार्मेलीन (1 भाग फार्मलीन + 7 भाग पानी) से उपचारित करें। प्रभावित पौधों के आसपास की भूमि को मैन्कोजेब (0.25 प्रतिशत) या कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का घोल बनाकर सिंचाई करें। पौधों को खेत में लगाने से पहले उनकी जड़ों को कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) के घोल में 30 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें।

3- pf.ky vkfl rk

y{k.k% प्रारम्भ में रोग के लक्षण पत्तियों की निकली सतह पर दिखाई देते हैं। बाद में पत्तियों की ऊपरी सतह व कोमल टहनियों पर कवक की सफेद या स्लेटी रंग चूर्णी बढ़वार दिखाई देती है। जिसके उपरांत संक्रमित पत्तियां भूरे रंग में परिवर्तित होकर विकृत हो जाती हैं और फिर सूख कर गिर जाती हैं। संक्रमित पौधे बौने रह जाते हैं और उसमें फूल भी नहीं लगते हैं।

jksx tud% यह रोग *ओडियम क्राइसेन्थेमाई* नामक कवक से होता है।

ic/ku% पौधों को उचित दूरी पर लगाएं तथा उनमें हवा का आवागमन सुचारू रूप से होना चाहिए वातावरण को शुष्क रखें। पौधों पर डिनाकैप (मि.लि.) या थायोफैनट मिथाइल या कार्बेन्डाजिम (1.0 ग्राम) या घुलनशील सल्फर (2.5 ग्राम) का प्रति लिटर पानी में घोल बनाकर 7–10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त माइक्लोब्युटेनील और पेनकोयजोल कवकनाशी का भी प्रयोग किया जा सकता है।

4- jrqvk

y{k.k% इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर स्पॉट बनते हैं जो शुरू में हल्के पीले रंग के होते हैं और बाद में भूरे हो जाते हैं। इन स्पॉटो के एकदम ऊपर पत्तों की ऊपरी सतह थोड़ी धंसी हुई होती है और आसपास के क्षेत्र की अपेक्षाकृत हल्के रंग की होते हैं। इस रोग की तीव्रता बढ़ने पर पत्तियों का अधिकांश भाग खराब हो जाता है तथा पत्तियां बाद में गिर जाती हैं एवं फलों का उत्पादन कम हो

जाता है। *पाक्सिनिया होरियाना* द्वारा पत्तियों की निचली सतह पर सफेद रंग के स्पॉट दिखाई देते हैं तथा ऊपरी सतह पर हल्के हरे से पीले रंग के धब्बे बनते हैं। शुरू में गठे हुए मोम की तरह गुलाबी रंग के स्पॉट बनते हैं जो बाद में कवक के बीजाणु पैदा होने पर वे सफेद रंग में बदल जाते हैं।

jkx tud% यह रोग *पाक्सिनिया क्राईसेन्थेमी* तथा *प. होरियाना* नामक कवकों से होता है।

iccU/ku% रोगग्रस्त भागों को काट कर जला दें। पौधों पर मैन्कोजेब (2.5 ग्राम प्रति लिटर पानी), क्लोरोथेलोनील (2.0 ग्राम) या कापर आक्सीक्लोराइड (3.0 ग्राम) कैरोथेन (0.025 प्रतिशत) 10 से 14 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

5- thok.kq t >qylk

y{k.k% इस रोग का सबसे पहला लक्षण धूप में कुछ एक टहनियों का मुरझाना होता है जो रात में पूर्वास्था में आ जाती है। बाद में, तने की चोटी भूरी हो जाती है और सख्त होकर नष्ट हो जाती है। तनों की मज्जा जेली की तरह हो जाती है तथा बीच से खोखली हो जाती है जिसके ऊपर भूरे रंग की धारियां आधार की तरफ जाती हुई दिखाई देती हैं। संक्रमित मज्जा छोटी रह जाती है तथा कानी होकर मर जाती है।

jkx tud% यह रोग *डिकिया क्राईसेन्थिमी* नामक जीवाणु से होता है।

iccU/ku% भूमि का फार्मेलीन या सौर ऊर्जा से उपचार करें। रोगरहित कलमों का ही उपयोग करें। पिचिंग के समय और कलमों की वृद्धि नियामकों से उपचार करते समय कलमों के संक्रमण से बचाएं। कलमों के कटे हुए भागों को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (100 मिग्रा. प्रति लिटर पानी में) का घोल बनाकर उपचारित करें।

6- Xkqynkmnh d: fo"kk.kq

गुलदाउदी में विषाणु एवं वायरायड जनित रोग भी लगते हैं, जिनमें दो विषाणु जनित एस्पर्मी और स्पॉटेड म्लानि रोग तथा क्लोरोटिक मोटेल एवं स्टंड रोग वायरायड द्वारा होता है जिनका वर्णन नीचे दिया गया है:

¼v½ ,Lieh fo"kk.kq% यह रोग टोमैटो एस्पर्मी विषाणु द्वारा होता है। इस रोग से प्रभावित पौधे के फूल विकृति होती है तथा पौधे छोटे रह जाते हैं। गुलाबी, लाल तथा कास रंग के फूलों का रंग एक समान नहीं होता है, लेकिन पत्तियों पर रोग के स्पष्ट लक्षण दिखाई नहीं देते हैं, जबकि कुछ प्रजातियों में रोग लक्षण रहित होते है। इस रोग के विषाणु एफिड के अलावा, खेत में काम करने के समय, प्रयोग में आने वाले औजारों तथा वानस्पतिक संवर्धन द्वारा स्थानान्तरित होते हैं।

¼c½ LikWVsM Eykfu% यह रोग टोमैटो स्पॉटेड विल्ट वायरस तथा इम्पैटिएंस नेक्रोटिक स्पॉट वायरस नामक विषाणुओं के द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण प्रायः पौधे में एक तरफ दिखाई देते है। गुलदाउदी की कुछ प्रजातियों में पत्तियों पर छल्ले बन जाते हैं। पत्तियां विकृत हो जाती हैं तथा काले ऊतकक्षयी के लक्षण दिखाई देते हैं। तने पर गहरे ऊतकक्षयी की धारी दिखाई देती है। फल भी विकृति के साथ–साथ कुछ ऊतकक्षयी हो जाते हैं। यह विषाणु थ्रिप्स के अलावा प्रयोग में आने वाले चाकू से भी स्थानान्तरित होता है। यह विषाणु गुलदाउदी के अलावा ड्हेलिया तथा अन्य पौधों पर जीवित शेष रहता है।

¼l½ Økbl lSafFkee LVaV% यह रोग क्राईसैंथिमम स्टंट वायरायड के द्वारा होता है। इस वायरायड के संक्रमण से पौधे छोटे रह जाते हैं, पत्तियां पीली सीधी तथा किनारे आकार में नहीं बढ़ते जिससे पत्ते सख्त दिखाई देते हैं। फूल छोटे रह जाते हैं एवं उनके फूल लाल या कांसे रंग के हो जाते हैं और समय से 7–10 दिन पहले खिल जाते हैं। यह वायरायड घाव के माध्यम चाकू, वानस्पतिक संवर्धन आदि से फैलता है।

¼n½ DyksjksfVd eksfVy% यह रोग क्राईसेन्थिमम क्लोरोटिक मोटिल वायरायड द्वारा होता है। इस रोग में पहले पत्तियां चितकबरी तथा बाद में पूर्ण रूप से पीली हो जाती हैं। अक्सर इस रोग को पोषक तत्वों की कमी के लक्षण से भ्रम पैदा हो जाता है। जब तापमान 20^{0} सेल्सियस के लगभग होता है तो रोग के लक्षण स्पष्ट दिखाई नहीं देते हैं। यह रोग खेत में काम करते समय प्रयोग में आने वाले औजारों तथा वानस्पतिक संवर्धन द्वारा फैलता है।

izca/ku% प्रभावित पौधों की काट–छांट करने के लिए जो औजार उपयोग किए जाते हैं उन्हें स्वस्थ पौधों पर प्रयोग न करें या कीटाणु रहित करने के बाद ही प्रयोग करें। स्वस्थ पौधों का रोपण करें। गुलदाउदी पर स्पॉटेड विल्ट, टोमैटो एस्पर्मी और क्राईसैंथिमम मैटिल, क्राईसैंथिमम स्टंट विषाणुओं के संक्रमण की रोकथाम के लिए ऊपरलिखित प्रबंधन उपायों के अतिरिक्त संवाहक कीटों की रोकथाम भी लाभप्रद है। कीटों की रोकथाम के लिए कीटनाशक रसायनों का प्रयोग करें।

कीटनाशी सूत्रकृमियों का फसली कीटों के जैविक प्रबंधन में उपयोग

अमित आहूजा, अर्थ कुंडू, चौत्रा गणपति भट तथा विशाल सिंह सोमवंशी
सूत्रकृमिविज्ञान संभाग
भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

पृथ्वी पर पाये जाने वाले सभी अकशेरुकी जीव श्रेणियों में सूत्रकृमियों की संख्या सर्वाधिक है। सूत्रकृमि सभी तरह के प्राकृतिक आवासों में जीवित रहने की क्षमता प्रदर्शित करते हैं। सूत्रकृमियों को जीवनयापन की प्रक्रिया के आधार पर मुख्यता दो समूहों में विभाजित किया गया है। प्रथम समूह के अंतर्गत स्वतंत्र रूप से मृदा में विचरण करने वाले स्वतंत्रजीवी सूत्रकृमि आते हैं, जो की अपनी जैविक प्रक्रिया के द्वारा मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता का प्रबंधन करते हैं। दूसरे समूह के अंतर्गत परजीवी सूत्रकृमि आते है जिनमे फसली पौधों पर पनपने वाले परजीवी सूत्रकृमि कृषि के लिए हानिकारक होते है। एक खास तरह के सूत्रकृमि 'कीटनाशी सूत्रकृमि' फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले कीटों के परजीवी होते हैं व उनके ऊपर पनपते हैं और कृषि तथा कृषक के लिए लाभदायक होते है। वैज्ञानिक विधि के विभाजन के आधार पर कीट–नाशी सूत्रकृमियो को दो मुख्य परिवारों में वर्गीकृत किया गया है जिनके नाम क्रमशः *स्टीनरनीमा टिडे* तथा *हीटरोरैबडीटीडे* है। इन दोनों कीटनाशी सूत्रकृमि परिवारों के अंतर्गत आने वाले सूत्रकृमियों का एक विशेष जीवाणु से अद्वितीय सहजीवी संबंध होता है, जोकि इन सूत्रकृमियों को फसली कीट को मारने में सहायता करते हैं। ये विशेष जीवाणु सूत्रकृमि की भोजन नली के अग्र भाग में सहजीवी के रूप में निवास करते हैं। स्टीनरनीमा सूत्रकृमि का संबंध जीनोरैबडस जीवाणु से तथा हेटेरोरैबडाइटिस सूत्रकृमि का संबंध फोटोरैबडस जीवाणु से होता है।

कीटों को मारने की सम्पूर्ण प्रक्रिया में कीटनाशी सूत्रकृमियों तथा उनके सहजीवी जीवाणुओं की भूमिका इस प्रकार हैः

1. कीटनाशी सूत्रकृमि की डोवर अवस्था (जो की जीवन की तृतीय किशोर अवस्था होती है) मृदा में अपने लक्ष्य कीट की खोज में स्वतंत्र रूप से विचरण करती है।
2. विचरण के दौरान जब कोई कीटनाशी सूत्रकृमि जब किसी फसली कीट के सम्पर्क में आता है, तो वो कीट के शरीर के अंदर प्रवेश करता है।
3. कीटनाशी सूत्रकृमि फसली कीट के शरीर के अंदर कीट के शरीर के प्राकृतिक छेदों, जैसे कि मुख, गुदा और श्वसन छिद्र के माध्यम से प्रवेश करते हैं।
4. कीट के शरीर के अंदर प्रवेश करने के बाद, कीटनाशी सूत्रकृमि की डोवर अवस्था, कीट की भोजन नली के मध्य गुहा भाग तक पहुंचती है।
5. तत्पश्चात कीटनाशी सूत्रकृमि अपने सहजीवी जीवाणु को कीट की मध्य गुहा में स्रावित करता है।

6. मध्य गुहा में आने के बाद जीवाणु मुख्य रूप से तीन कार्य करते हैं, सर्वप्रथम जीवाणु विभिन्न तरह के जहर का निर्माण कर कीट को मारता है, फिर जीवाणु विभिन्न तरह के उत्प्रेरकों का निर्माण कर कीट के शारीरिक ऊतकों को सूत्रकृमि तथा खुद के भोजन में बदलता है। इस प्रक्रिया के बाद जीवाणु बहुत सारे चयापचयों का निर्माण करता है, जो कीट के मृत शरीर को मिट्टी में उपस्थित दूसरे जीवो से होने वाली सड़न से बचाता है।

7. जीवाणुओं द्वारा ये तीनो कार्य सम्पादित करने के पश्चात कीटनाशी सूत्रकृमि तथा जीवाणु दोनों कीट में निर्मित भोजन को खाकर अगली संतति का निर्माण करते है।

8. जब तक भोजन बहुल मात्रा में उपस्थित रहता है, तब तक ही अग्र संतति का निर्माण जारी रहता है, भोजन की समाप्ति पर फिर से डोवर अवस्था का निर्माण होता है, जो अपने अंदर अपने सहजीवी जीवाणु को गृहीत कर, मृत कीट के शरीर को छोड़कर मृदा में पुनः अगले कीट की खोज में विचरण करती है।

9. ये सम्पूर्ण प्रक्रिया जो कि कीट–नाशी सूत्रकृमि तथा उनके सहजीवी जीवाणु प्रदर्शित करते है, अगले कीट के अंदर फिर से चक्रित होती है, तथा फसली कीटों को मारने में बहुत ही सहायक होती है।

mo|jdk vkj jklk;fud dhVuk'kdk d lkFk dhVuk'kh l=—fe;k dh lxrrk

कीटनाशी सूत्रकृमियों के संक्रामक किशोर अधिकांश कृषि रसायनों जैसे की फफूंदनाशी, कीटनाशी, खरपतवारनाशी के प्रभाव को 2 से 6 घंटे तक सहन कर सकते है। अकार्बनिक उर्वरको के साथ भी कीटनाशी सूत्रकृमि ससंगता प्रदर्शित करते है। विभिन्न स्रोतों से उपलब्ध साक्ष्य आधार पर यह पाया गया की स्टीनरनीमा सूत्रकृमि की सहिष्णुता हेटेरोरैबडाइटिस से अधिक है। सूत्रकृमियों की सुसंगता को ध्यान में रखते हुए इनका उचित तरीके से बाजार में उपलब्ध कृषि रसायनो के साथ उपयोग किया जा सकता है।

dhVuk'kh l=—fe;k d [kr e mi;kx d fofHkUu rjhd

कीटनाशी सूत्रकृमियों को विभिन्न प्रकार के कृषि संबंधित उपकरणों के माध्यम से खेत में प्रयोग में लाया जा सकता है। प्रमुख कृषि उपकरण जैसे हैंडगन, कम दवाब वाले स्प्रेयर, मिस्ट ब्लोअर तथा इलेक्ट्रोस्टैटिक स्प्रेयर को कीटनाशी सूत्रकृमियों को खेत में चिन्हित फसली कीटों पर छिड़काव करने के काम में लाया जा सकता है। कीटनाशी सूत्रकृमियों का प्रयोग स्प्रयेर्स पर लगी किसी भी प्रकार की परम्परागत नोजेल्स के दवारा किया जा सकता है। ये कीटनाशी स्प्रेयर के टैंक में सूत्रकृमि 300 पाउंड्स पर स्क्वायर इंच का दवाब झेलने की क्षमता रखते हैं, तथा 50 माइक्रोन से भी कम आकार के छेद वाली नोजेल्स से छिड़काव करे जा सकते है। ये सूत्रकृमि एल्जिनेट पुटिका तथा कीटनाशी बैट (कीटों को प्रलोभन देकर आकर्षित करना) के माध्यम से भी खेत में कीटों के निदान में प्रयोग में लाये जा सकते हैं। कीटनाशी सूत्रकृमियों को खेत में बूंद बूंद (ड्रिप) पद्धति तथा फवारा पद्धति के माध्यम से सिंचाई के साथ ही खेत में छोड़ा जा सकता है, जोकि किसान के अतिरिक्त खर्चे तथा समय का बचाव करती है। उपरोक्त पद्धतियों के माध्यम से सूत्रकृमियों का उपयोग 250 करोड़ कीटनाशी सूत्रकृमि

प्रति हैक्टर की दर से सुबह या शाम के ठन्डे समय पर करना चाहिए, क्योंकि सूरज से आने वाली पराबैंगनी किरणों के प्रभाव के कारण सूत्रकृमियों की कार्यक्षमता में कमी आ सकती है। सूत्रकृमियों के प्रयोग से पूर्व मृदा के तापमान (18 से 35 डिग्री) तथा नमी की उपलब्ध्ता का विशेष ध्यान रखा जाना चाइए, ताकि कीट नियंत्रण के बेहतरीन नतीजे मिल सके।

dhVksa ds çc/ku ds fy, dhVuk'kh l=—fe;ksa dk mi;ksx%

दुनिया भर में विभिन्न तरीको के माध्यम से कीटनाशी सूत्रकृमियों का उपयोग फसली कीटों के प्रबंधन में किया जा रहा है। कुछ महत्वपूर्ण फसली कीटों तथा उनके प्रबंधन में उपयुक्त विशेष जाति के कीटनाशी सूत्रकृमि तथा खेत में प्रयोग में माध्यम को तालिका में दर्शाया गया है।

Qly	yf{kr dhV	dhVuk'kh l=—fe	QkeqZys'ku
आर्टिचोक	प्लूम मोथ	*स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी*	वैटेबल पाउडर
जामुन	रुट वीविल	*हेटेरोरैबडाइटिस बैक्टीरीओफोरा*	स्पंज
निम्बू अवं अन्य सिट्रस पादप	रुट वीविल	*स्टीनरनीमा रियोब्रेव*	वैटेबल पाउडर, तरल सघन
क्रैनबेरी	रुट वीविल	*हेटेरोरैबडाइटिस बैक्टीरीओफोरा*	स्पंज
क्रैनबेरी	क्रैनबेरी गर्डलर	*स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी*	वैटेबल पाउडर, तरल सघन
मशरूम्स	स्कीयरिड मख्खी	*स्टीनरनीमा फेलटी*	वर्मीकुलाईट
ऑर्नामेंटल्स	रुट वीविल	*हेटेरोरैबडाइटिस मेजीडीस*	तरल सघन
ऑर्नामेंटल्स	वुड बोरर	*स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी*	वैटेबल पाउडर, तरल सघन
ऑर्नामेंटल्स	फंगस नैट्स	*स्टीनरनीमा फेलटी*	वर्मीकुलाईट
टर्फ घास	बिल बग्स	*स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी*	वैटेबल पाउडर, तरल सघन
टर्फ घास	आर्मी वर्म	*स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी*	वैटेबल पाउडर, तरल सघन
टर्फ घास	कट वर्म	*स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी*	वैटेबल पाउडर, तरल सघन
टर्फ घास	वेब वर्म	*स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी*	वैटेबल पाउडर, तरल सघन

ou e o{kk ij yxu oky dhVk d çc/ku d fy, dhVuk'kh l=—fe;k dk mi;kx

कीटनाशी सूत्रकृमियों का उपयोग हाल ही में वनों से संबंधित पौधशालाओं में कीट प्रबंधन के लिए तेजी से बढ़ा है। कुछ शोधों के अनुसार कीटनाशी सूत्रकृमि का सफल प्रयोग लार्च सॉफ्लाई – *केफलसा* लरिकिपिइला, स्प्रूस बड़मोथ–*जेयरफेरा कानडेंसिस* तथा *पाइन प्रोकेशनरी* कैटरपिलर–*थॉमेटोपोई पितयोकम्पे* को मारने में किया जा चुका है। यूरोप महाद्वीप के विभिन्न देशो में आजकल कीटनाशी सूत्रकृमियों का प्रयोग पाईन वीविल–*हैलोबियस अबिएटिस* के विरुद्ध किया जा रहा है, जो की पाईन के वृक्षों का बहुत ही हानिकारक कीट है।

dhVuk'kh l=—fe;k dk Hkkjr e mi;kx

भारत में कीटों के प्रबंधन के लिए कीटनाशी सूत्रकृमियो का उपयोग सर्वप्रथम राव और मंजूनाथ (1966) द्वारा किया गया। राव और मंजूनाथ (1966) ने *स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी* की डीडी–136 प्रजाति को चावल, गन्ना और सेब में लगने वाले हानिकारक कीटों के खिलाफ उपयोग किया। राव तथा मंजूनाथ के सफल प्रयोग के पश्चात् कीटनाशी सूत्रकृमियो के स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल स्वदेशी उपभेदों की खोज की बेहद आवश्यकता महसूस की गयी। इसी चरण में बाद मे शिवकुमार तथा उनके साथियों ने 1992 में एक अलग कीटनाशी सूत्रकृमि की प्रजाति की खोज तमिलनाडु राज्य से की, जिसे बाद मे *हेटेरोरैबडाइटिस इंडिका* (पॉइनर) नाम दिया गया। इन्ही प्रारंभिक चरणों में कीटनाशी सूत्रकृमियों की विभिन्न विदेशी प्रजातियों का उपयोग स्थानीय कीटों के प्रबंधन में शुरू किया गया, जिसमे *स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी, स्टीनरनीमा फेलटी, हेटेरोरैबडाइटिस बैक्टीरीओफोरा* मुख्य थे। विभिन्न क्षेत्रों में कीटों के प्रबंधन में उपयोग में लाये गए कीटनाशी सूत्रकृमियों की समीक्षा शंकरनारायणन तथा अस्करी ने अपने स्तर पर 2017 में की। दो दशकों के उपरांत के बाद भी विदेशी तथा अज्ञात कीटनाशी सूत्रकृमि उपभेदों के स्थानीय कीटों के ऊपर प्रयोग के अपेक्षित सफल परिणाम नहीं मिले है, क्यूंकि विदेशी उपभेदो की अनुकूलनशीलता, देसी वातावरण से भिन्न होती है। विभिन्न शोधो के परिणाम स्वरुप, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नयी दिल्ली तथा राष्ट्रीय कृषि कीट संस्थान बयूरो, बेंगलुरु के वैज्ञानिको द्वारा *स्टीनरनीमा कारपोकैप्सी, स्टीनरनीमा फेलटी, हेटेरोरैबडाइटिस बैक्टीरीओफोरा, स्टीनरनीमा बाइकॉर्नेटोम, हेटेरोरैबडाइटिस इंडिका* के स्थानीय उपभेदों की खोज की गयी, जोकि स्थानीय वातावरण के प्रति सहिष्णु तथा कीट प्रबंधन में अधिक कारगर थे। साल 2000 में, आईसीएआर–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नयी दिल्ली द्वारा अधिक तापमान सहन कर सकने वाली कीटनाशी सूत्रकृमि की नयी प्रजाति की खोज की गयी, जिसे *स्टीनरनीमा थर्मोफिलम* के नाम से वर्णित किया गया। स्टीनरनीमा थर्मोफिलम सूत्रकृमि की खेतो में उपयोग में लायी जाने वाली फार्मूलेशन का निर्माण किया गया, जोकि पूसा नेमा जैल के नाम से उपलब्ध करवाई गयी। पूसा नेमा जैल का प्रयोग विभिन्न कीटों के खिलाफ किया गया, जिनमे मुख्यता डाइमंड बैक मोथ (*प्लूटेला जाइलोस्टेला*), दीमक (*ओडोनोटेमेस ओबेसस*), सफेद ग्रब (*होलोट्रीचिया कंसागुइना*), बैंगन शूट बोरर (*ल्यूसीनोड्स ओर्बनालिस*), सफेद मक्खी (*बेमिसिया तबसि*), तम्बाकू कैटरपिलर (*स्पोडोप्टेरा लिटुरा*), ग्राम पॉड बोरर (*हेलिकोवर्पा आर्मिजरा*) और मिली बग (*फेनाकोकस सोलनोप्सिस*) थे, तथा इनके विरुद्ध उपयोग के उत्साहवर्धक परिणाम मिले। इस प्रजाति के व्यापक तथा उत्पाद कृषक उपयोगी उत्पाद निर्माण के उपयोग के लिए एम/एस मल्टीप्लेक्स

बायोटेक इंटरनेशनल, बैंगलोर को लाइसेंस दिया गया। मोहन तथा उनके साथियों ने 2015 से ही *हेटेरोरैबडाइटिस इंडिका* से संवर्धित गैलेरिया कैडेवर का उपयोग गन्ने में सफेद ग्रब के संक्रमण के विरुद्ध पश्चिमी उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में किया। कई खेतों में गैलरिया कैडेवर के इस्तेमाल के तीन वर्षों के बाद भी सफेद गिडार का संक्रमण नहीं पाया गया जो कि सराहनीय था भारत में निर्मित यह तकनीक तितली तथा मोथ कीटों के कैटरपिलर प्रबंधन में कारगर सिद्ध हुई। स्थानीय कृषि–जलवायु विविधताओं तथा मृदा जनित कारकों के कारण पिछले पांच दशक (1966–2020) से विदेशी और अज्ञात कीटनाशी सूत्रकृमियो पर की जाने वाली शोध के कुछ ज्यादा बेहतरीन नतीजे नहीं मिले हैं।

भारत देश की विभिन्न कृषि–जलवायु परिस्थितियों तथा असंख्य कीट प्रजातियों को ध्यान में रखते हुए तत्काल ही उपयुक्त कीटनाशी सूत्रकृमियों की खोज पहचान एवं फॉर्मूलेशन्स की अत्यधिक आवश्यकता है। एकीकृत कीट प्रबंधन कार्यक्रम की रणनीति के तहत कीटनाशी सूत्रकृमियों पर गहन, बुनियादी तथा अनुप्रयुक्त अनुसंधान ही इन सूत्रकृमियों का व्यापक स्तर पर जैविक कीट नियंत्रण प्रणाली के अंतर्गत उपयोग बढ़ाने के लिए आवश्यक है।

Notes

Notes

Notes

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय
Prof. M S SWAMINATHAN LIBRARY